पुराविज्ञान स्मारिका

वर्ष 2024 अंक 3

बीरबल साहनी पुराविज्ञान संस्थान की राजभाषा ई-पत्रिका

1946

बीरबल साहनी पुराविज्ञान संस्थान, लखनऊ

विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी विभाग के अंतर्गत एक स्वायत्त संस्थान, भारत सरकार, नई दिल्ली

बीरबल साहनी पुराविज्ञान संस्थान

भारत के एक महान दूरदर्शी विभूति, प्रोफेसर बीरबल साहनी जी ने वर्ष 1946 में 'पुरावनस्पति शोध' को एक विज्ञान के रूप में स्थापित करने के लिए 'पुरावनस्पतिविज्ञान संस्थान' की स्थापना की, जिसमें पौधों के जीवन की उत्पत्ति एवं विकास, जीवाश्म ईंधन की खोज सहित अन्य भू-वैज्ञानिक मुद्दों को सुलझाने में संस्थान की सक्षमता की परिकल्पना की। वर्ष 2015 में संस्थान ने अपने अनुसंधान आयामों का दायरा बढ़ाया एवं कार्यक्षेत्र के विस्तार देखते हुए इसका नाम बदलकर बीरबल साहनी पुराविज्ञान संस्थान कर दिया गया।

यह संस्थान वर्तमान में विज्ञान और प्रौद्योगिकी मंत्रालय, भारत सरकार के अंतर्गत विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी विभाग (डीएसटी) के तत्वावधान में एक स्वायत्त अनुसंधान संगठन के रूप में कार्य कर रहा है।

बीरबल साहनी पुराविज्ञान संस्थान मौलिक एवं प्रायौगिक अनुसंधान के रूप में एकीकृत नवाचारों के साथ, समर्पित वैज्ञानिक टीम के माध्यम से अनुसंधान एवं विकास के क्षेत्र में उत्कृष्टता प्राप्त संस्थान है। मुख्य शोध कार्य में भौमिकीय कालावधि के आधार पर जैविक विकास की समझ शामिल है। इसका मुख्य उद्देश्य पुराविज्ञान को आगे बढ़ाने एवं देश की बढ़ती जरूरतों को पूरा करने के लिए एक समग्र पटल के रूप में प्रबलित रणनीतियों के साथ अधिक समग्र दृष्टिकोण को समायोजित करना है।

परिवर्तनशील वैश्विक परिपेक्ष में संस्थान के व्यापक लक्ष्य है -

- भौमिकीय समय-काल के माध्यम से जीवन की उत्पत्ति एवं विकास को समझना
- वर्तमान एवं गहन भौमिकीय अवधि में जलवायु परिवर्तन को समझना
- प्राचीन सभ्यता एवं मानव इतिहास को समझना
- तेल एवं कोयला उद्योग के लिए अन्वेषण कार्यक्रमों में पुराविज्ञान का अनुप्रयोग

पुराविज्ञान स्मारिका

वर्ष 2024 अंक 3

बीरबल साहनी पुराविज्ञान संस्थान की राजभाषा ई-पत्रिका

बीरबल साहनी पुराविज्ञान संस्थान, लखनऊ

विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी विभाग के अंतर्गत एक स्वायत्त संस्थान, भारत सरकार, नई दिल्ली

http://www.bsip.res.in

बीरबल साहनी पुराविज्ञान संस्थान, लखनऊ-226007, उत्तर प्रदेश, भारत

संरक्षक एवं प्रकाशक

निदेशक

बीरबल साहनी पुराविज्ञान संस्थान

53, विश्वविद्यालय मार्ग, लखनऊ-226007, उत्तर प्रदेश, भारत

दूरभाष : +91-522-2740470 / 2740413 / 2740011 / 2740865

फैक्स : +91-522-2740485 / 2740098

ई-मेल : director@bsip.res.in

वेबसाइट: http://www.bsip.res.in

संपादन एवं संकलन

डॉ.(श्रीमती) पूनम वर्मा, विज्ञानी ‘ई’, बीरबल साहनी पुराविज्ञान संस्थान, लखनऊ

सह-संपादन

डॉ.(श्रीमती) स्वाति त्रिपाठी, विज्ञानी ‘ई’, बीरबल साहनी पुराविज्ञान संस्थान, लखनऊ

डॉ.(श्रीमती) नीलम दास, विज्ञानी ‘डी’, बीरबल साहनी पुराविज्ञान संस्थान, लखनऊ

टंकण सहायता

डॉ.(श्रीमती) पारुल दत्त सक्सेना

प्रकाशन में विशेष सहयोग

डॉ.सैयद राशिद अली

प्रस्तुति

राजभाषा कार्यान्वयन समिति तथा प्रकाशन इकाई,

बीरबल साहनी पुराविज्ञान संस्थान, लखनऊ

सितम्बर 2024

नोट: पत्रिका में प्रकाशित विचार लेखकों के निजी विचार हैं। इससे संपादक या संस्थान कि सहमति आवश्यक नहीं है । पत्रिका की लोक उपयोगिता की दृष्टि से कुछ छायाचित्र इंटरनेट से पुनर्मुद्रित किए गए है।

अनुक्रमणिका

निदेशक की कलम से

महेश जी. ठक्कर v

संपादक की कलम से

पूनम वर्मा vii

अतिथि की लेखनी

भू-विविधता, भू-विरासत, भू-पर्यटन और जियोपार्क की अवधारणा 1

सौरभ माथुर, एस.सी. माथुर, शिव सिंह राठौड़

जोधपुर, पश्चिमी राजस्थान के राव जोधा डेजर्ट रॉक पार्क: अद्वितीय भारतीय भूविरासत 5

सौरभ माथुर, एस.सी. माथुर, शिव सिंह राठौड़

भारत में हाइड्रो-जियोहेरिटेज और हाइड्रो-जियोटूरिज्म की एक नई अवधारणा 11

सौरभ माथुर, एस.सी. माथुर, शिव सिंह राठौड़

सामान्य लेख

भोजपत्र (हिमालयन बर्च) : प्राचीन प्रलेखो एवं पुराजलवायु अध्ययन के लिए महत्वपूर्ण स्रोत 19

रवि शंकर मौर्या, साधना विश्वकर्मा, डॉ. के जी मिश्र

XXI अंतरराष्ट्रीय चतुर्थमहाकल्प अनुसंधान संघ (INQUA) कांग्रेस 2023 रोम, इटली: 2027 में इंक्वा कांग्रेस की मेजबानी हेतु भारत का सफल प्रयास 24

बिनीता फर्तियाल, स्वाति त्रिपाठी, मनोज एम सी

2 x 2 के कमरे में जीवन 28

संग्राम साहू

शैवाल एक वरदान या अभिशाप: समाज के निरंतर विकास में भूमिका 30

आनंद राजोरिया

दक्कन के ज्वालामुखी क्षेत्र: भौमिकीय समय में एक आभासी यात्रा 33

श्रेया मिश्रा

समसामयिक लेख

"नदी जोड़ो परियोजना": एक विश्लेषण 38

अरविंद कुमार सिंह, मञ्जुल त्रिवेदी, आदित्य आभा सिंह

अल-नीनो-दक्षिणी दोलन (ईएनएसओ-ENSO) और हिंद महासागर द्वोणी (आईओबी-IOB) का भारतीय मानसून पर प्रभाव 44

बृजेश कुमार, पवन गोविल

बता पर्सिवीअरेंस मंगल में कितना पानी! 45

रणधीर संजीवनी

शोध सार

भारत के वर्धा घाटी कोयला क्षेत्र के प्रारंभिक पर्मियन में पुराजगत-जंगल की आग के साक्ष्य.....50
देवेश्वर प्रकाश मिश्रा, श्रीकांत मूर्ति

भारत के उष्णकटिबंधीय शुष्क पर्णपाती वनों पर जलवायु परिवर्तन के प्रभाव के लिए पूर्वानुमान मॉडल.....52
पूजा नितिन सराफ, ज्योति श्रीवास्तव

जैव विविधता स्थिरता और पुराशाकाहार विश्लेषण हेतु काजीरंगा राष्ट्रीय उद्यान, असम से स्थापित आधुनिक जैविक एनालॉग.....54
स्वाति त्रिपाठी, साधन कुमार बसुमतारी

बढ़ते कार्बन उत्सर्जन के कारण सदाबहार जंगलों के अस्तित्व को खतरा: पुरासाक्ष्यों से मिले संकेत.....58
गौरव श्रीवास्तव, पूनम वर्मा

मुख्य मानसून मंडल (CMZ) में भारतीय ग्रीष्मकालीन मानसून (ISM) की तीव्र अवधियों के प्रति अधिक संवेदनशीलता.....60
मोहम्मद फ़िरोज़ क़मर, बिस्वजीत ठाकुर, रतन कर, उपासना स्वरूप बनर्जी

पश्चिमी घाट, भारत में लघु हिमयुग (LIA) नम तथा आद्र जलवायु से प्रभावित: परागाणविक साक्ष्य.....66
मोहम्मद फिरोज क़मर

शहरीकरण और वनों की कटाई का मधुमक्खियों के भोजन और पोषण के पैटर्न पर प्रभाव.....70
अंजलि त्रिवेदी

एशियाई ग्रीष्मकालीन मानसून की अतीत और भविष्य की गतिशीलता का मूल्यांकन: पुरामानसून संश्लेषण और CMIP6 डेटा से निरीक्षण.....72
पुष्पेंद्र पाण्डेय, मयंक शेखर, अनुपम शर्मा, अका शर्मा, ए.पी. डिमरी

तकनीकी लेख

पृथ्वी पर जीवन की उत्पत्ति : एक रोचक परन्तु अनसुलझी पहेली.....77
आरिफ हुसैन अंसारी

भारत से चुनामय परासूक्ष्म जीवाश्मों का अध्ययन.....80
आभा सिंह

गोंडवाना अनुक्रम में परगाणुविज्ञान (पेलिनोलॉजी) का अनुप्रयोग.....85
नेहा अग्रवाल

उच्च आर्कटिक पारिस्थितिकी तंत्र और पुराजलवायु परिवर्तन.....87
वर्तिका सिंह

गुजरात के इओसीन लिग्नाइट निक्षेप: पश्चिमी भारत में जैविक जीवाश्मों का केंद्र.....89
हुकम सिंह

क्वार्टरनरी लेक ड्रिलिंग प्रोजेक्ट (BSIP-QLDP).....92
अनुपम शर्मा, बिनीता फर्तियाल एवं स्वाति त्रिपाठी

कविताएँ

लद्दाख 94

बिनीता फर्तियाल

कहानी शिकस्त की 95

पुष्पेंद्र पाण्डे 'शजर'

ख़ुदा तेरा ही सहारा है 96

के. पी. सिंह 'कुवंर'

जिन्दगी 96

अजय कुमार श्रीवास्तव

इंसां 97

के. पी. सिंह 'कुवंर'

डायनासोर एवं मनुष्य 98

प्रिया दीक्षित

अनन्त की ओर 99

नाज़िम देवरी

पीएच.डी. 100

बृजेश यादव

प्रो. बीरबल साहनी 101

धन बहादुर कुँवर

दिसंबर और जनवरी का रिश्ता 102

साधना विश्वकर्मा

राजभाषा हिन्दी कार्यान्वयन की गतिविधियाँ 103

क्षेत्रीय अभियान की झलकियां 111

जनसंपर्क एवं अन्य उन्नत गतिविधियाँ 121

शोध प्रबंध सारांश (पी-एच.डी. विद्या वाचस्पति की उपाधि) 139

हिन्दी के प्रयोग के लिए वर्ष 2024-25 का वार्षिक कार्यक्रम 159

श्रद्धांजलि

डॉ. राजेश अग्निहोत्री और बीरबल साहनी पुराविज्ञान संस्थान में एएमएस (AMS) सुविधा का उनका सपना 161

संजय कुमार सिंह गहलौद, आनंद राजोरिया

हिन्दी उन सभी गुणों से अलंकृत है जिनके बल पर वह विश्व की साहित्यिक भाषाओं की अगली श्रेणी में सभासीन हो सकती है ।

-मैथिली शरण गुप्त

निदेशक की कलम से .....

अत्यंत हर्ष का विषय है कि राजभाषा हिन्दी के गौरव को ध्यान में रखते हुए बीरबल साहनी पुराविज्ञान संस्थान अपनी वार्षिक राजभाषा गृह-पत्रिका 'पुराविज्ञान स्मारिका' के तृतीय अंक का प्रकाशन कर रहा है। भारत कि एकता और अखंडता को एक सूत्र में पिरोने में राजभाषा हिन्दी का अभूतपूर्व योगदान रहा है। यह ऐसी एकमात्र भाषा है जो भारत में सर्वाधिक बोली व समझी जाती है। राष्ट्र के प्रति हमारे समर्पण को दर्शाने का एक माध्यम यह भी है कि हम हमारे प्रशासनिक कार्यों को हिंदी में करें। हमारा संस्थान राजभाषा को समृद्ध करने व इसके प्रसार में निरंतर प्रयासरत है। मेरा मानना है कि राजभाषा हिन्दी के महत्व को दर्शाने के साथ-साथ संस्थान के कर्मचारियों कि रचनात्मकता को उभारने के लिए गृह-पत्रिका से अच्छा माध्यम नहीं हो सकता। विगत वर्षों में संस्थान के विज्ञानियों, अधिकारियों व अन्य कर्मचारियों विशेषतः शोधार्थियों नें विभिन्न गतिविधियों के माध्यम से पुराविज्ञान विषय को जनमानस तक सरल हिंदी भाषा में पहुँचाने का भरसक प्रयास किया है। इन्ही प्रयासों में राजभाषा गृह-पत्रिका 'पुराविज्ञान स्मारिका' का प्रकाशन भी है।

इसके सफल प्रकाश हेतु, मैं विशेष रूप से पत्रिका की संपादक डॉ पूनम वर्मा एवं उनके सहयोगियों की सराहना करता हूँ, जिनके निरंतर अथक प्रयासों से पत्रिका का तृतीय अंक ससमय प्रकाशित हो सका। साथ ही राजभाषा कार्यान्वयन समिति के सभी सदस्यों को भी पत्रिका प्रकाशन हेतु मेरी ढेरों बधाई। पत्रिका में योगदान देने वाले सभी विज्ञानियों, शोधार्थियों व अन्य कर्मचारियों का मैं हृदय से धन्यवाद अर्पित करता हूँ जिनके नित्य नए सृजन और योगदान से यह पत्रिका समृद्ध हुई है।

आशा है कि 'पुराविज्ञान स्मारिका' पत्रिका का यह अंक आपको रुचिपुर्ण एवं लाभदायक लगेगा। पत्रिका के उत्तरोत्तर प्रगति व स्वर्णिम भविष्य के लिए मेरी शुभकामनाएं। मैं कामना करता हूं कि संस्थान के सभी विज्ञानी, अधिकारी एवं कर्मचारी 'पुराविज्ञान स्मारिका' पत्रिका के सुचारु रूप से प्रकाशन में भविष्य में भी अपना योगदान देते रहेंगे।

प्रो. महेश जी. ठक्कर

निदेशक
एवं
अध्यक्ष, राजभाषा कार्यान्वयन समिति
बीरबल साहनी पुराविज्ञान संस्थान, लखनऊ

हिन्दी चिरकाल से एक ऐसी भाषा रही है जिसने मात्र विदेशी होने के कारण किसी भी भाषा का भिषकर नहीं किया।

-राजेंद्र प्रसाद

संपादक की कलम से .....

बीरबल साहनी पुराविज्ञान संस्थान, लखनऊ की राजभाषा वार्षिक गृह-पत्रिका 'पुराविज्ञान स्मारिका' का तीसरा अंक आपको समर्पित करते हुए मुझे असीम हर्ष और आनंद की अनुभूति हो रही है। बीरबल साहनी पुराविज्ञान संस्थान, लखनऊ, जोकि भारत सरकार के विज्ञान और प्रौद्योगिकी विभाग के अंतर्गत एक अद्वितीय अनुसंधान केंद्र है, से प्रकाशित इस पत्रिका का उद्देश्य अनुसंधानात्मक तथा तकनीकी कार्यकलापों को सहज-सरल हिन्दी भाषा में सामान्य जन तक पहुंचाना है साथ ही वैज्ञानिक तथा विभागीय कामकाज में हिन्दी के प्रयोग को प्रोत्साहित करना है। इस पत्रिका के माध्यम से हिन्दी प्रेमियों को अपनी सृजनात्मकता एवं साहित्यिक प्रतिभा की अभिव्यक्ति का सुअवसर मिलता है। पत्रिका में लेखों के दायरे को बढ़ाए रखने के लिए विभिन्न स्तम्भ हैं जिनमें सामान्य, समसामयिक, शोध, तकनीकी लेख, के साथ कविताओं का संकलन व अन्य संस्थागत गतिविधियां भी हैं। विभिन्न स्तम्भों तथा गतिविधियों के छायाचित्रों के समावेश से पत्रिका को रुचिकर व प्रभावी बनाने का प्रयास किया गया है।

मैं पुराविज्ञान स्मारिका पत्रिका के अतिथि लेखकों की अत्यंत आभारी हूँ जिन्होने भारत के भू-संसाधनों को भू-विरासत, भू-पर्यटन और जियोपार्क अवधारणा तथा इनके विभिन्न पहलुओं पर विस्तृत लेख देकर हमें अनुग्रहित किया। पत्रिका के सामान्य व समसामयिक लेखों में लेखकों ने विधिवत अपने लेखन कौशल का पूरा प्रयोग करते हुए जनसामान्य के पठन के लिए रोचक लेख दिये हैं जो अति सराहनीय है। समान्यतः अंग्रेजी में अपने शोध कार्यों का प्रकाशन करने में पारंगत वैज्ञानिक व शोधार्थियों ने अत्यंत सहजता से हिन्दी भाषा में शोध व तकनीकी लेख लिखे है जिसके लिए वो प्रसंशा के पात्र है। संस्थान के शोधार्थियों नें अपने पी.एच. डी. शोध प्रबंध के सारांश भी बड़ी कुशलता से हिन्दी में प्रकाशित किए है जो अत्यंत प्रशंसनीय है। इसके अलावा, पत्रिका में स्वरचित कविताओं को भी संकलित किया गया है जिसमें हमारे संस्थान के लगभग सभी वर्गों के कर्मचारियों की साहित्यिक प्रतिभा प्रत्यक्ष रूप से प्रदर्शित होती है जिसके लिए वे सभी बधाई के पात्र हैं। इसके अतिरिक्त संस्थान के वैज्ञानिकों, शोधार्थियों व तकनीकी कर्मचारियों द्वारा किए गए क्षेत्रीय अभियान व जन-संपर्क गतिविधियों का भी सचित्र समावेशन किया गया है। संस्थान

की राजभाषा संवर्धन की दिशा में राजभाषा कार्यान्वयन समिति द्वारा आयोजित गतिविधियों को भी चित्रों सहित समावेशित किया गया है।

मैं 'पुराविज्ञान स्मारिका' से जुड़े राजभाषा कार्यान्वयन समिति के सभी सदस्यों विशेषकर मेरे सह-संपादक डॉ. स्वाति त्रिपाठी व डॉ. नीलम दास को पत्रिका के नये अंक के प्रकाशन की बधाई देती हूँ। पत्रिका के सभी लेखकों को उनके बहुमूल्य लेखों के लिए आभार व संस्थान के सभी वैज्ञानिक, तकनीकी और प्रशासनिक अधिकारी व कर्मचारी सदस्यों को उनके सहयोग के लिए धन्यवाद देती हूँ। मैं यह आशा करती हूँ कि भविष्य में भी संस्थान के सभी कर्मचारी 'पुराविज्ञान स्मारिका' पत्रिका के प्रकाशन में अपना बहुमूल्य योगदान देते रहेंगे।

मुझे विश्वास है कि 'पुराविज्ञान स्मारिका' का यह अंक भी राजभाषा को समृध्द करने के उद्देश्य में सफल होगा। रचनाओं के संकलन, पुनरीक्षण एवं संपादन में पूरी सावधानी बरती गयी है। मुझे विश्वास है की यह पत्रिका पाठकों को रुचिकर और मनोरंजक लगेगी। पाठकों से अनुरोध है कि त्रुटियों को नज़र-अन्दाज करते हुए इस पत्रिका कि रचनाओं का रसास्वादन करें। प्रबुध पाठकों के सुझाव सादर आमंत्रित हैं।

डॉ. पूनम वर्मा

विज्ञानी 'ई'

एवं

संयोजक, राजभाषा कार्यान्वयन समिति

बीरबल साहनी पुराविज्ञान संस्थान, लखनऊ

अतिथि की लेखनी

भू-विविधता, भू-विरासत, भू-पर्यटन और जियोपार्क की अवधारणा

भारत आर्कियन से नवीनतम युग तक के छह भौमिकीय प्रभागों में अपने खनिज, चट्टानों, जीवाश्मों की असाधारण और अद्वितीय भू-आकृतियों के कई महत्वपूर्ण परिदृश्यों समेत समृद्ध भू-संसाधनों से संपन्न है। उसके बावजूद वैज्ञानिक रूप से भारत के भू-संसाधनों को भू-विरासत, भू-पर्यटन और जियोपार्क अवधारणा द्वारा सतत विकास के संदर्भ में सबसे कम समझा गया है। जाहिर है कि भारत जैसे विकासशील देश को अपने प्राथमिक संसाधनों पर निर्भरता, कठिन चुनौतियों और बाधाओं का सामना करना पड़ता रहा है। इसका कारण जन-जागरूकता की कमी और अभाव भी है। जबकि अंतरराष्ट्रीय स्तर पर पृथ्वी के भू-विरासत संसाधनों और जियोपार्क अवधारणा को यूनेस्को महत्व और बढ़ावा दे रहा है। जिसके परिणामस्वरूप वर्तमान में, 48 देशों में 213 यूनेस्को ग्लोबल जियोपार्क विकसित हो गए हैं। यह सिद्ध तथ्य है कि यूनेस्को वैश्विक जियोपार्क देशों में पर्यटन गतिविधियाँ कई गुना बढ़ रही हैं। अंतर्राष्ट्रीय परिदृश्य को देखते हुए भारत में इन पहलुओं और अवधारणा की पर्याप्त महत्व और खोज नहीं की गई है। जिसका परिणाम यह हुआ कि आज तक भारत के पास एक भी यूनेस्को वैश्विक जियोपार्क नहीं है।

यद्यपि इस संबंध में भारत में महत्वपूर्ण क्रेटोन्स, अवसादी द्रोणी, प्रायद्वीप, पूर्वी व पश्चिमी घाट, दक्षिण का पठार, विशाल हिमालय और थार रेगिस्तान जैसी उत्कृष्ट और विविध भू-संसाधन परिदृश्यों की भू-विविधता है। इसके अलावा ये भू-भाग ऐतिहासिक, सांस्कृतिक, पुरातात्विक और सौंदर्य को समाहित किए हुए हैं तथा भौमिकीय इतिहास से संबंधित कई प्रमाण साक्ष्य और अनूठी अद्वितीय विशेषताएं से ओत-प्रोत भी हैं। जिन्हें भू-विरासत के रूप पहचानने और संरक्षित करने की आवश्यकता है। भारत में भू-विरासत की अवधारणा के संदर्भ, विभिन्न शब्दावली, धारणाएं और समझ का पर्याप्त रूप से अन्वेषण और स्थापना नहीं किया गया अर्थात इन महत्वपूर्ण अवधारणाओं के बारे में लोगों और भूवैज्ञानिकों के बीच जागरूकता पैदा नहीं की गई। अतः, भू-विरासत, भू-पर्यटन और जियोपार्क की अवधारणाओं और धारणाओं के विभिन्न पहलुओं को समझने के लिए भारतीय सन्दर्भ में एक समीक्षा प्रस्तुत है। अंतर्राष्ट्रीय स्तर भी पर भू-विरासत के विकास को भारतीय सन्दर्भ में समझने की आवश्यकता है। इससे आम जनता और भूवैज्ञानिकों को जागरूक करने में मदद मिलेगी और भारत में जियोपार्क विकसित किया जा सकेगा। इस प्रकार से भूवैज्ञानिक समुदाय स्वदेशी भू-विविधता का उपयोग करके, अपनी भू-विरासत के महत्व को समझ कर, भू-संसाधन का उपयोग करके, जियोपार्क तथा भू-पर्यटन के विकास के माध्यम से भारत में पर्यटन को बढ़ा कर सतत आर्थिक विकास को बढ़ा सकते है। इस संबंध में, सबसे पहले हमें यह समझना चाहिए कि ये अवधारणाएँ अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर कैसे विकसित हुईं और हमने इन्हें भारतीय संदर्भ में कैसे संशोधित किया जा सकता है क्योंकि ज्यादातर भारतीय भू-विरासत सांस्कृतिक, धार्मिक भू-स्थानों और पुरातात्विक पहलुओं से गूढ़ रूप से जुड़े हुए हैं।

इस संदर्भ में अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर 'भू-स्थान' शब्द की सबसे पहले 1994 में कल्पना जॉयस ने की थी, जिसका प्रयोग किसी विशेष भूवैज्ञानिक स्थल के लिए किया जाता था। 1995 में मैकब्रियर ने इस शब्द को विस्तृत किया और इसे 'जियोसाइट' के रूप में निम्न प्रकार से परिभाषित किया- "भू-स्थल एक भौगोलिक विशेषताओं वाले महत्वपूर्ण स्थल या क्षेत्र हैं जो उस स्थल या क्षेत्र विशेष की भूवैज्ञानिक विशेषताओं, वैज्ञानिक, शैक्षिक, ऐतिहासिक, सांस्कृतिक या प्राकृतिक सौंदर्य से जुड़ी पृथ्वी के इतिहास की प्रक्रियाओं और भू-विविधता का प्रतिनिधित्व करते हैं।"

अंतरराष्ट्रीय स्तर पर भू-विविधता की अवधारणा तब शुरू हुई जब 'भू-विविधता' शब्द पहली बार 2004 में ग्रे द्वारा गढ़ा

गया था और इसे 1996 में डिक्सन द्वारा दिया गए 'जैव विविधता' की परिकल्पना के बराबर माना गया था। बाद में 'भू-विविधता' को इस प्रकार परिभाषित किया गया- "भू-परिदृश्यों पर चट्टानों, खनिजों, मिट्टी, जीवाश्मों और भू-आकृतियों की विविधता 'भू-विविधता' है, जिनके महत्वपूर्ण भूवैज्ञानिक लक्षण पृथ्वी की प्राकृतिक प्रक्रियाओं को प्रदर्शित करते हैं।" इसके बाद, भू-विविधता में धीरे-धीरे स्थानीय सांस्कृतिक, ऐतिहासिक और पुरातात्विक तत्वों के कई महत्वपूर्ण पहलू शामिल किये गए। जो भू-स्थलयों को भू-विरासत मूल्य प्रदान करते हैं। बाद में, शार्पल्स नें 2004 में भू-विरासत को निम्न प्रकार से परिभाषित किया- "भू-स्थलयों की ऐतिहासिक और सांस्कृतिक मूल्यों से जुड़े सभी स्तरों पर भूविज्ञान की वैश्विक, राष्ट्रीय और स्थानीय स्तर पर महत्वपूर्ण और अद्वितीय भू-आकृतियों की विशेषताएं 'भू-विरासत' हैं, जो पृथ्वी के विकास के बारे में जानकारी या अंतर्दृष्टि प्रदान करती हैं; या विज्ञान के इतिहास है, जिसका उपयोग अनुसंधान, शिक्षण, संदर्भ और पर्यटन के लिए किया जा सकता है।"

भू-विरासत के महत्व को समझने के बाद, वर्ष 2009 में वैश्विक जियोपार्क की अवधारणा यूनेस्को द्वारा शुरू की गई थी। जिसके परिणामस्वरूप अब तक 48 देशों में 213 जियोपार्क पृथ्वी पर विकसित किए जा चुके हैं। जिसे निम्न प्रकार से परिभाषित किया गया- "यूनेस्को ग्लोबल जियोपार्क एक एकल या एकीकृत भौगोलिक क्षेत्र है जहां अंतरराष्ट्रीय भूवैज्ञानिक महत्व के स्थलों और परिदृश्यों को क्षेत्र के सामाजिक व आर्थिक विकास के लिए संरक्षण, सुरक्षा, शिक्षा, भू-पर्यटन की समग्र अवधारणा के साथ प्रबंधित किया जाता है।"

विश्व में जियोपार्क के सफल स्थापना के बाद भू-पर्यटन की अवधारणा अंतरराष्ट्रीय स्तर पर विकसित हुई। जिसे निम्न प्रकार से परिभाषित किया गया- "भू-पर्यटन, एक प्रकृति आधारित पर्यटन है जो किसी स्थान या साइट के भूवैज्ञानिक चरित्र- उसके पर्यावरण और उसके निवासियों के कल्याण के लिए संबंधित सांस्कृतिक विरासत को बनाए रखता है और स्थानीय लोगों और समुदायों के जीवन स्तर, सामाजिक और आर्थिक विकास को बढ़ाता है।"

पर्यटन को बढ़ावा देने के लिए भू-पर्यटन अवधारणा के सफल कार्यान्वयन के बाद किसी राष्ट्र में नया जियोपार्क स्थापित करने की होड़ लग गई। इसके लिए यूनेस्को के अनुसार प्रमुख रूप से कुछ आवश्यक मानदंड है जैसे-

- यूनेस्को ग्लोबल जियोपार्क में अंतरराष्ट्रीय महत्व की प्राकृतिक, दुर्लभ और अद्वितीय भूवैज्ञानिक और सांस्कृतिक विरासत का परिदृश्य होना चाहिए और योग्य वैज्ञानिक शोध और उच्च कोटि के प्रकाशनों द्वारा समर्थित होना चाहिए।

- बहु-सांस्कृतिक- भू-विरासत को बढ़ावा देने के लिए परिदृश्य का स्पष्ट स्वामित्व होना चाहिए।

- भूवैज्ञानिक विरासत, ऐतिहासिक और सांस्कृतिक विविधता का संरक्षण, रखरखाव और उनके बीच संबंध होना चाहिए।

- जियोपार्क बनाने का मुख्य उद्देश्य अंततः यही होना चाहिए की भू-पर्यटन और शिक्षा के माध्यम से सामाजिक और आर्थिक विकास हो।

इसके अलावा यूनेस्को द्वारा निर्धारित कुछ निम्न मानदंड भी है, जैसे-

1. आकार और सेटिंग

वैश्विक जियोपार्क नेटवर्क (Global Geopark Network or GGN) का सदस्य बनने के इच्छुक देश में जियोपार्क स्पष्ट रूप से परिभाषित होना चाहिए, एक निश्चित सीमाओं द्वारा पर्याप्त विस्तृत क्षेत्र होना चाहिए जो स्थानीय आर्थिक

और सांस्कृतिक सेवा के लिए और विकास में (विशेषकर पर्यटन के दृष्टिकोण से) सहायक होना चाहिए।

2. प्रबंधन और स्थानीय भागीदारी

किसी भी जियोपार्क प्रस्ताव को मंजूरी दिए जाने की एक शर्त यह भी है कि इसकी स्थापना के बाद इसका प्रभावी स्थानीय प्रबंधन प्रणाली और कार्यान्वयन का कार्यक्रम होना चाहिए।

3. आर्थिक विकास

जियोपार्क का एक मुख्य रणनीतिक उद्देश्य है कि उसके द्वारा आर्थिक गतिविधि को सतत विकास के ढांचे के भीतर प्रोत्साहित करना है। यूनेस्को द्वारा स्थापित जियोपार्क पर्यावरणीय दृष्टि से टिकाऊ, सांस्कृतिक रूप से समृद्ध, सामाजिक और आर्थिक विकास में सहायक होना चाहिए।

4. शिक्षा

एक जियोपार्क को शिक्षा संचार में सहायता, उपकरण और गतिविधियाँ प्रदान करनी चाहिए और जनता के लिए भूवैज्ञानिक ज्ञान, पर्यावरण एवं सांस्कृतिक अवधारणाओं को प्रेरित करना चाहिए। उदाहरणार्थ- संग्रहालयों, व्याख्यात्मक और शैक्षिक केंद्रों, ट्रेल्स, निर्देशित पर्यटन, लोकप्रिय साहित्य और मानचित्र से युक्त होना चाहिए और इसका आधुनिक संचार माध्यम से प्रचार भी होना चाहिए। इसमें विश्वविद्यालयों के साथ वैज्ञानिक अनुसंधान और स्थानीय जनता को सहयोग भी करना चाहिए।

5. सुरक्षा एवं संरक्षण

जियोपार्क विशेष रूप से एक संरक्षित क्षेत्र या परिदृश्य की एक नई श्रेणी हो सकता है जो पूरी तरह से संरक्षित और बिल्कुल अलग नेचर पार्क विनियमित राष्ट्रीय उद्यान होना चाहिए। जियोपार्क की सुरक्षा स्थानीय परंपराओं और विधायी दायित्वों के अनुसार सुनिश्चित होनी चाहिए। राष्ट्रीय कानून या विनियमों के अनुसार, एक जियोपार्क महत्वपूर्ण भूवैज्ञानिक विशेषताओं, प्रतिनिधि चट्टानें और स्व-स्थानीय एक्सपोज़र, खनिज और खनिज संसाधन, जीवाश्मों, भू-आकृतियाँ और भू-दृश्य का संरक्षण करने में योगदान और बढ़ावा देने वाला होना चाहिए।

6. वैश्विक नेटवर्क

वैश्विक जियोपार्क भूवैज्ञानिक विरासत मामलों में अभ्यासकर्ता, कर्मचारी, विशेषज्ञों के बीच सहयोग और आदान-प्रदान का एक मंच प्रदान करता है। यूनेस्को की छत्रछाया वैश्विक जियोपार्क नेटवर्क भागीदारों व अन्य जियोपार्कों के बीच विशेषज्ञता, अनुभव व ज्ञान के आदान-प्रदान के माध्यम से दुनिया भर में पहचान प्रदान कराती है। ये महत्वपूर्ण स्थानीय और राष्ट्रीय साइटों के भूवैज्ञानिकों के साथ सहयोग और लाभ भी दिलाती है।

7. सामाजिक व आर्थिक विकास में योगदान

क.सामुदायिक साझेदारी और पर्यटन द्वारा सामाजिक व आर्थिक विकास:

यूनेस्को उपरोक्त छह बातों के अलावा, सामुदायिक साझेदारी और पर्यटन द्वारा सामाजिक व आर्थिक विकास का समर्थन करता है। राजनेताओं और निर्णय-चिह्नकों के एजेंडे पर अंतर्राष्ट्रीय, राष्ट्रीय और स्थानीय स्तर पर भूविज्ञान के महत्व को स्थापित करता है। दुनिया भर में जियोपार्क के भीतर बड़ी संख्या में निजी क्षेत्र के साथ साझेदारी और भू-पर्यटन से संबंधित उद्योग द्वारा आर्थिक गतिविधियाँ बढ़ा कर स्थानीय पर्यटन को विकसित कर निजी पूंजी को आकर्षित करके स्थानीय आबादी के लिए पूरक आय प्रदान करता है। इसीलिए भू-पर्यटन वर्तमान समय में दुनिया का एक मजबूत बहुविषयक सहयोगुन्मुख, आर्थिक सफलता और तेजी से आगे बढ़ने वाला एक नया व्यवसाय क्षेत्र बन गया है।

8. सामुदायिक भागीदारी और स्थानीय लाभ

भू-पर्यटन द्वारा पर्यटन गतिविधियों की योजना, विकास और प्रबंधन में स्थानीय समुदायों की भागीदारी को बढ़ावा देता है। इसका उद्देश्य पर्यटन से संबंधित व्यवसायों, स्थानीय उत्पादों और सेवाओं के निर्माण को प्रोत्साहित करके स्थानीय निवासियों के लिए आर्थिक लाभ और स्थायी आजीविका उत्पन्न करना है। भूपर्यटन स्थानीय समुदायों के सशक्तिकरण और उनकी सांस्कृतिक

पहचान के संरक्षण का समर्थन करता है। भू-पर्यटन भूवैज्ञानिक अनुभवों और गतिविधियों की एक श्रृंखला द्वारा भी आर्थिक लाभ और स्थायी आजीविका उत्पन्न करता है। जिनमें निर्देशित पदयात्रा, भूवैज्ञानिक क्षेत्र यात्राएँ, जीवाश्म खोजना और अध्ययन करना, रॉकक्लाइम्बिंग, भू-रोमांच और भूवैज्ञानिक शैक्षिक कार्यक्रम शामिल हैं। ये गतिविधियाँ आगंतुकों को गंतव्य की भूवैज्ञानिक विशेषताओं से जुड़ने, उनकी सुंदरता की सराहना करने और उनके गठन और महत्व के बारे में जानने की सुविधा देती हैं।

सौरभ माथुर

सतत विकास के लिए उभरती प्रौद्योगिकियों का केंद्र, भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान, जोधपुर

saurabhmathur@iitj.ac.in

एस.सी. माथुर

भूविज्ञान विभाग, एम.बी.एम. विश्वविद्यालय, जोधपुर

शिव सिंह राठौड़

सतत विकास के लिए उभरती प्रौद्योगिकियों का केंद्र, भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान, जोधपुर

जोधपुर, पश्चिमी राजस्थान के राव जोधा डेजर्ट रॉक पार्क: अद्वितीय भारतीय भू-विरासत

भू-विरासत, भू-विविधता और भू-पर्यटन की अवधारणाओं के संदर्भ में हालाँकि भारत में महत्वपूर्ण अपार संभावनाओं के बावजूद आज तक हमारे यहाँ एक भी जियोपार्क विकसित नहीं किया जा सका है। हालांकि अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर जियोपार्क को भूपर्यटन के माध्यम से पर्यटन को बढ़ावा देने में अग्रणी माना जाता है। इसके पीछे का प्रमुख कारण भारत के संदर्भ में भू-स्थलों और भू-विविधता की पहचान करने की कोई कार्यप्रणाली और दिशानिर्देश नहीं है। चूँकी भारत में उत्कृष्ट और अंतरराष्ट्रीय स्तर के महत्वपूर्ण भूवैज्ञानिक परिदृश्य हैं जो अद्वितीय और उत्कृष्ट भूवैज्ञानिक विरासत है तथा सतत सामाजिक आर्थिक विकास करने में सहायक हो सकता है। इसीलिए भारत के संदर्भ में भू-स्थलों की पहचान करने की कार्यप्रणाली और दिशानिर्देश को स्थापित किया जाना आवश्यक है। चूँकी भूवैज्ञानिक विरासत के अलावा भारत में उत्कृष्ट और अंतरराष्ट्रीय स्तर के सतही और पारंपरिक (बाउरी और झालरा) जल निकाय जैसे हाइड्रो-जियोहेरिटेज साइट्स हैं। उनका भी भू-पर्यटन में उपयोग करना आवश्यक है क्योंकि ये भी भारत की भूवैज्ञानिक धरोहर हैं। तदनुसार, इस संबंध में 2021-2024 के बीच हमने भू-स्थलों एवं हाइड्रो-भूस्थलों को भू-पर्यटन और भूजल-पर्यटन के लिए कैसे उपयोग कर सकते हैं की पद्धति और दिशानिर्देश जोधपुर के मेहरानगढ़ रिज स्थित राव जोधा रॉक पार्क के भू-विरासत के उदाहरण द्वारा प्रस्तावित किया। जिसके द्वारा इन अवधारणाओं को भारत के सतत आर्थिक विकास के संदर्भ में समझा जा सकता है क्योंकि जोधपुर के मेहरानगढ़ रिज में महत्वपूर्ण, असाधारण और अद्वितीय भू-विरासत है और यह जियोपार्क के लिए एक संभावित स्थल हो सकता है।

भारत के उत्तर पश्चिमी भाग में स्थित जोधपुर का मेहरानगढ़ रिज (MGR) क्रायोजेनियन युग के मालानी इग्नियस सूट (MIS) की ज्वालामुखीय चट्टानों के विभिन्न प्रकार के भू-स्रोत और मारवाड़ सुपरग्रुप (MSG) से संबंधित एडियाकरन युग के जोधपुर समूह (Jodhpur Group) से गठित है। MIS दुनिया का तीसरा सबसे बड़ा, फेल्सिक, एनोरोजेनिक और स्थलीय ज्वालामुखीय घटना है, जिसमें रोडिनिया सुपरकॉन्टिनेंट के विभाजन से संबंधित पैन अफ्रीकी ऑरोजेनी के साक्ष्य संरक्षित हैं। MGR में MIS की अनूठी और दुर्लभ ज्वालामुखीय चट्टानों को और जोधपुर समूह के बलुआ पत्थर के साथ के इंटरफेस को भारत के राष्ट्रीय भूवैज्ञानिक स्मारक के रूप में घोषित किया गया है। जोधपुर समूह को क्रोनोस्ट्रेटिग्राफिक रूप से उमेद भवन फॉर्मेशन, सूरसागर फॉर्मेशन और मोतीसर हिल फॉर्मेशन में विभाजित किया गया है जो एडियाकरन काल में नदी प्रक्रियाओं के पास फ़्लूवियो-डेल्टाइक सिलिसीक्लास्टिक चट्टानों का प्रतिनिधित्व करता है। इसके बाद, मुख्य रूप से महीन से मध्यम दाने वाले बलुआ पत्थर (क्वार्ट्ज एरेनाइट) शामिल हैं जो अवसादी संरचनाओं और एडियाकरन जीवाश्मों की विविध प्रजातियों को संरक्षित करते हैं। जोधपुर के बलुआ पत्थर अवसादी संरचनाओं का व्यापक खज़ाना हैं जैसे: 1 तरंग चिह्न (wave ripples), 2. क्रॉस बेड (cross bedding), 3. श्रेणीबद्ध बेड (stratified beddings) 4. अन्य संरचनाएँ जैसे रेन प्रिंट (rain prints), रिल मार्क्स (rill marks), फ्लूट मार्क्स (flute marks), स्कोअर मार्क्स (score marks) आदि अवसादी संरचनाएँ है। इससे अधिक महत्वपूर्ण है बलुआ पत्थर एडियाकरन जीवाश्मों के संरक्षण और संयोजन के सर्वोत्तम भंडार। मालानी इग्नियस सूट और जोधपुर समूह पृथ्वी के इतिहास के लगभग 200 मिलियन वर्षों (745 से लगभग 540 मिलियन वर्ष) की भौमिकीय प्रक्रियाओं को प्रदर्शित करते हैं जो वैश्विक भू-विविधता का प्रतिनिधित्व करते हैं और भू-पर्यटन और भू-शिक्षा के लिए आख्यान प्रदान करते हैं। मेहरानगढ़ रिज अद्वितीय भूविरासत के अतिरिक्त सांस्कृतिक मूल्यों के साथ कई पुरातात्विक विरासत स्मारकों (Archeological heritage monuments) से भी संपन्न है जिनका निर्माण जोधपुर समूह के स्वदेशी विरासत बलुआ पत्थर संसाधनों (heritage stone resources) द्वारा किया गया है। पुरातात्विक विरासत स्मारक मध्ययुगीन काल से जोधपुर

के प्राचीन संरक्षण का प्रतिनिधित्व करता है जो इसे दुनिया का एक प्रसिद्ध पर्यटन स्थल बनाता है। भारत में भू-पर्यटन अनुप्रयोगों और बुनियादी ढांचे की अनुपस्थिति में मेहरानगढ़ रिज पर स्थित राव जोधा रॉक पार्क की भू-विरासत को एक केस स्टडी के रूप में लेते हुए भू-स्थलों की पहचान करने और उन्हें शैक्षिक और भू-पर्यटन मूल्यों का आकलन करने के लिए उपयुक्त पद्धतियां प्रदान करने के लिए भारतीय सन्दर्भ में एक समीक्षा हैं।

राव जोधा डेजर्ट रॉक पार्क

राव जोधा डेजर्ट रॉक पार्क- ऐतिहासिक सिंघोरिया पैलेस

राव जोधा डेजर्ट रॉक पार्क, भारत के पश्चिमी राजस्थान के जोधपुर में ऐतिहासिक मेहरानगढ़ किले और सिंघोरिया पहाड़ी के पास 72 हेक्टेयर में फैला हुआ समृद्ध भू-विविधता एवं जैव-विविधता वाला क्षेत्र है। यह परियोजना 2010 से मेहरानगढ़ संग्रहालय ट्रस्ट (MMT), जोधपुर एवं हमारे वैज्ञानिक सहयोग के द्वारा एक मिनी जियोपार्क के रूप में विकसित की गई जो पर्यटकों में लोकप्रिय हो चुका है। पार्क में ज्वालामुखीय और अवसादी चट्टानों की भू-विविधता, पारिस्थितिक रूप से बहाल रेगिस्तान और शुष्क भूमि वनस्पति और पौधों की अनूठी विशेषताएं शामिल हैं जो विलुप्त होने के कगार पर हैं उल्लेखनीय रूप से उन्हें यहाँ संरक्षित किया गया है। यहां के भूवैज्ञानिक म्युजियम में विभिन्न खनिज, रॉक एवं जीवाश्म भी दर्शाए गए है जो पर्यटकों में लोकप्रिय हो रहे है। इस प्रकार राव जोधा डेजर्ट रॉक पार्क के विकास का उद्देश्य महत्वपूर्ण भू-विविधता का संरक्षण करना और क्षेत्र की पारिस्थितिकी को बहाल करना था। इसे फरवरी 2012 में आंशिक रूप से जनता के लिए खोल दिया गया था। यहाँ प्रशिक्षित गाइड और प्रकृतिविद भी उपलब्ध हैं। प्रशिक्षित गाइड ज्वालामुखी विस्फोटों और अवसादी चट्टानों की भू-विविधता के दिलचस्प भूवैज्ञानिक इतिहास और प्राचीन समय में समुद्र की उपस्थिति, महलों, किलों का इतिहास, वनस्पतियों और जीवों के बारे में बताते हैं। इस पार्क में लगभग 880 मीटर से 1115 मीटर लंबे चार खंड हैं जिनका पर्यटक उपयोग कर सकते हैं।

1. आगंतुक केंद्र और भूवैज्ञानिक संग्रहालय खंड:

आगंतुक केंद्र और भूवैज्ञानिक संग्रहालय खंड सिंघोरिया गेट पर सत्रहवीं शताब्दी पुरानी एक ऐतिहासिक इमारत सिंघोरिया पैलेस (महल) में स्थित है। इस विरासत भवन में एक छोटी सी लाइब्रेरी और आगंतुकों के लिए विश्राम स्थल के साथ विस्तृत थार रेगिस्तान के बारे में एक व्याख्या और भूवैज्ञानिक संग्रहालय में खनिजों, चट्टानों और जीवाश्मों के कुछ नमूने रखे गए हैं, जो मुख्य रूप से थार रेगिस्तान की चट्टानों से एकत्र किए गए हैं। इसके अतिरिक्त, मुख्य द्वार से आगंतुक केंद्र तक के मार्ग के साथ में बलुआ पत्थर के बड़े स्लैबों को प्रदर्शित किया गया है, जो समुद्रीय तलछटी लहर के अवसादी संरचनाओं की विविधता को प्रदर्शित करता है जो इस भू-स्थल को अतिरिक्त शैक्षिक और भू-पर्यटन महत्व प्रदान करता है।

भौमिकीय संग्रहालय एवं समुद्रीय तलछटी लहर की अवसादी संरचनाएं

2. रेतीले भूखंड और नर्सरी खंड:

पार्क क्षेत्र की पारिस्थितिकी को बहाल करने के लिए यहाँ नर्सरी खंड में रेगिस्तानी पौधों का रोपण और प्रसार किया गया। वर्तमान में, रॉक पार्क में कथित तौर पर मरूद्भिद पेड़ों, झाड़ियों, जड़ी-बूटियों और घास की 250 से अधिक प्रजातियां हैं जो उन चट्टानों के अनुकूल हैं (प्रदीप, 2011)। हम उन रेगिस्तानी पौधों के लिए एक विशेष शब्द 'लिथोफाइट्स' का उपयोग करते हैं जिन्होंने चट्टानी या कंकड़ वाले आवासों में जीवित रहने के तरीके खोज लिए हैं (माथुर और प्रदीप, 2016)। इस प्रकार, भू-विविधता के अलावा पार्क में पर्यटक रेगिस्तानी पौधों के बीच जैव विविधता का भी अवलोकन कर सकते हैं और देख सकते हैं कि पार्क में वन्यजीवों के लिए और पारिस्थितिकी को बहाल करने के लिए पौधे चट्टानों में कैसे जीवित रह सकते हैं।

क. पार्क में स्थित नर्सरी में रेगिस्तानी पौधे; ख. लिथोफाइट्स का रोपण और प्रसार

3.पैदल पथ (सूखी हाथी नहर) खंड:

रेतीले भूखंड से, प्राचीन रॉक कट सीढ़ियाँ हाथी नहर में उतरती हैं जिसका उपयोग पार्क में पैदल मार्ग के रूप में किया जाता है। मार्ग में ज्वालामुखीय एग्लोमरेट-ब्रैकिया, वेल्डेड टफ, रायोलाइट और रायोलाइट पोरफायरी के उत्कृष्ट परिदृश्य को प्रदर्शित करता है। पैदल मार्ग धीरे-धीरे मेहरानगढ़ किले की ओर खुलता है और फिर रानीसर-पदमसर (जोधपुर का सबसे पुराना पारंपरिक जल निकाय) तक लगभग 700 मीटर की दूरी पर समाप्त होता है। हाथी नहर की शुरुआत में समीपस्थ पायरोक्लास्टिक संरक्षित खंड में एग्लोमेरेट्स पुंज का जमाव एक विशाल मोटे ज्वालामुखीय कोणीय से उप-गोल ब्लॉकों, गोलों और लैपिली के जमाव को प्रदर्शित करता है। ये मोटे लिथिक पाइरोक्लास्ट वेल्डेड टफ, इग्निम्ब्राइट, रायोलाइट और बेसाल्ट के ज़ेनोलिथ से बने हैं जो महीन मैट्रिक्स में सेट हैं। इस भू-स्थल पर घने लिथिक पाइरोक्लास्ट से पता चलता है कि जमाव आमतौर पर निकटवर्ती सिंघोरिया वेंट से प्राप्त समीपस्थ जमाव हैं। हाथी नहर के पैदल पथ में आगे, भूरे रंग का ज्वालामुखी ब्रेकशिया का एक संरक्षित खंड भी मौजूद है। भौतिक रूप से, ऐसा प्रतीत होता है कि ब्रेकशिया का निर्माण तब हुआ है जब सिंघोरिया पहाड़ी पर स्थित ज्वालामुखीय वेंट से निकला लगभग ठोस पदार्थ अलग-अलग आकार और आकृतियों के ब्लॉक और लैपिली से बना है। ये पाइरोक्लास्ट फिर रायोलाइट मैग्मा के साथ लावा प्रवाह में मिश्रित हो एकीकृत हो गए।

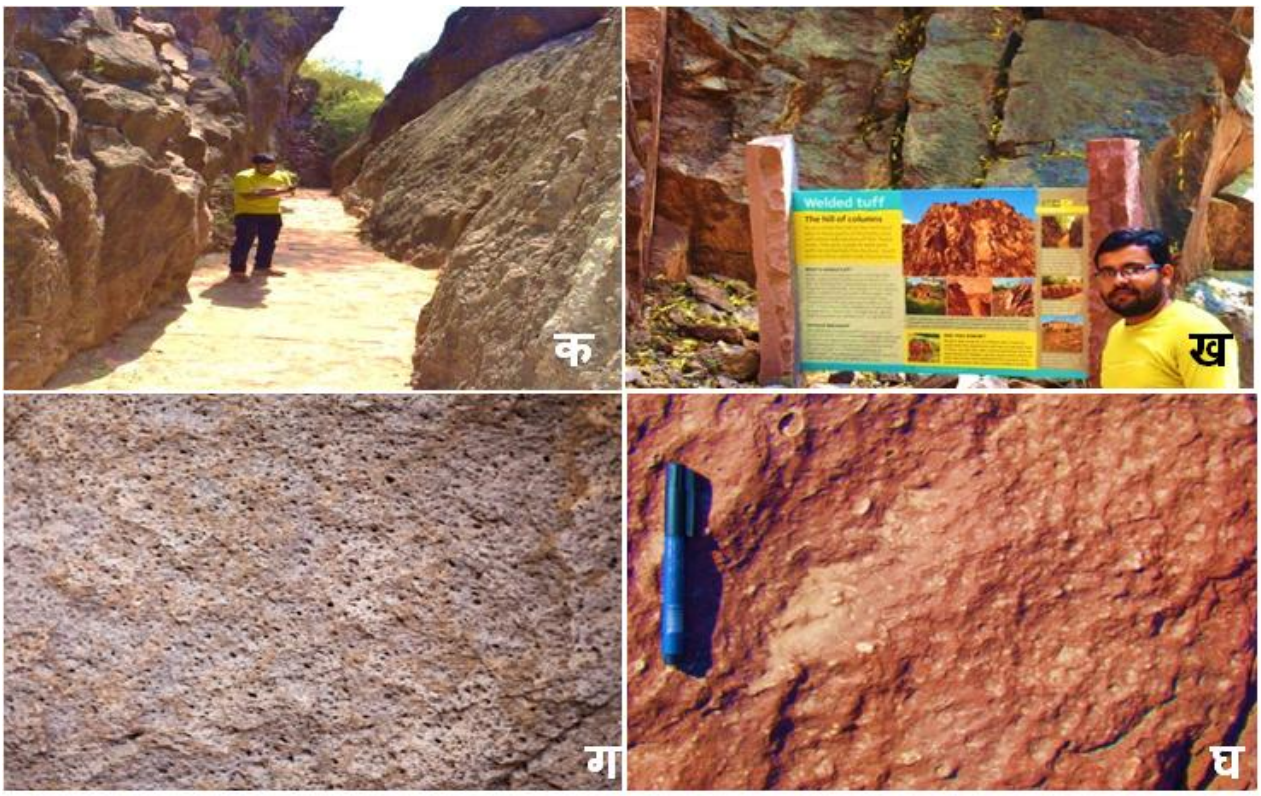

क. हाथी नहर में मलानी ज्वालामुखी एग्लोमरेट ब्रेकशिया, ख. वेल्डेड टफ, ग. रायोलाइट एवं घ. रायोलाइट पोरफायरी के परिदृश्य

यहाँ ज्वालामुखी ब्रेकशिया की उपस्थिति से पता चलता है कि ज्वालामुखीय विस्फोट का स्रोत इन समीपस्थ जमाओं के बहुत करीब सिंघोरिया वेंट से प्राप्त हुए हैं। अगला खंड गुलाबी, भूरे रंग का महीन दाने वाला वॉल्यूमिनस रायोलाइट उत्तरी-पश्चिमी पार्क क्षेत्र को कवर करता है और मेहरानगढ़ किले के पीछे तक फैला हुआ है। पैदल मार्ग के मध्य भाग में रायोलाइट खंडों के अच्छे परिदृश्य स्थित है। मेहरानगढ़ किले के पास के आउटक्रॉप में ऊपरी सतह पर कई छोटे गोलाकार से अण्डाकार पुटिकाओं (वेसिकुलर संरचना) को प्रदर्शित करता है। आगे हाथी नहर के पैदल पथ में, रायोलाइट पोरफायरी के अच्छे आउटक्रॉप्स है, इस खंड में रायोलाइट पोरफायरी, क्वार्ट्ज, फेल्डस्पार और बायोटाइट के सुंदर यूहेड्रल से सबहेड्रल फेनोक्रिस्ट्स क्वार्ट्जो-फेल्ड्सपैथिक

ग्राउंडमास में सेट है जो इस भू-स्थल को शानदार दृश्य प्रदान करती हैं।

4. हाइड्रो-जियोसाइट्स खंड:

राव जोधा डेजर्ट रॉक पार्क के आस-पास में अद्वितीय जल निकाय हैं। इनमें मुख्य रूप से रानीसर, पदमसर, देव कुंड और रसोलाई तालाब महत्वपूर्ण हैं। इन हाइड्रो-जियोसाइट्स का विवरण व महत्व की विवेचना अगले लेख में दी गयी है।

पैदल पथ (शुष्क हाथी नहर) प्रतरूप रानीसर और पदमसर हाइड्रो-जियोसाइट्स के आस-पास समाप्त होता है। रानीसर पारंपरिक और पदमसर प्राकृतिक जल निकाय हैं जो जोधपुर से लगभग 4 किमी दूर मेहरानगढ़ किले के पीछे में स्थित हैं, जिसे राव जोधा की रानी जसमादे हाड़ा ने वर्ष 1459 में बनवाया था। भूगर्भिक दृष्टि से यह हाइड्रो-जियोसाइट प्रीकैम्ब्रियन युग की रायोलाइट पहाड़ियों से घिरा हुआ है। दक्षिणी तरफ भव्य मेहरानगढ़ किला है और पश्चिमी की तरफ शानदार और सममित सीढ़ियाँ, बरामदे (मंडप) और मंदिर अतिरिक्त महत्व प्रदान करते हैं। रानीसर पर 78 मीटर लंबी दीवारों का निर्माण 1516 ई. में राव जोधा की रानी जसवाड़ा हाड़ा ने करवाया था। इसकी गहराई 67 मीटर है जिसमें विभिन्न स्तरों पर सुंदर सीढ़ियाँ हैं और जोधपुर बलुआ पत्थर से निर्मित बरामदे हैं। इसमें पांच कुएं हैं इसलिए पानी के अभाव में यह भूजल निकाय के रूप में कार्य कर सकता है। इसका पानी अरहट की पुरानी तकनीक से मेहरानगढ़ किले तक उठाया जाता था। यह पदमसर के साथ रानीसर आउटलेट से जुड़ा हुआ है। पदमसर का निर्माण 1520 ई. में सेठ पढैन ने करवाया था। यह तीन तरफ से रायोलाइट पहाड़ियों से घिरा हुआ है और एक तरफ सीढ़ियाँ और पंप हाउस हैं। दोनों जल निकाय माननीय राजस्थान उच्च न्यायालय द्वारा हाल ही में पारित आदेश द्वारा संरक्षित हैं।

क. रानीसर और ख. पदमसर हाइड्रो-जियोसाइट्स

देव कुंड (भगवान का तालाब)

देव कुंड जसवन्त महल के पास स्थित एक सुंदर प्राकृतिक जल निकाय है। देव कुंड तीन तरफ से मलानी चट्टानों से घिरा हुआ है और एक तरफ लौहयुक्त बलुआ पत्थर का वास्तु और सुंदर नक्काशीदार डिजाइन के चबूतरे है। देव कुंड के चबूतरे और किनारों का निर्माण वर्ष 1899 में जसवन्त महल के निर्माण के साथ किया गया है। इस तालाब के पास संगमरमर की कई सुंदर छतरियां बनी हुई हैं। देव कुंड का बहुत महत्व है क्योंकि यहां दंड-क्रिया के बाद राजपरिवार की विभिन्न परंपराओं और अनुष्ठान किए जाते हैं।

रसोलाई तालाब

रसोलाई तालाब मेहरानगढ़ किले की ओर जाने वाली सड़क पर निचली पार्किंग के पास स्थित है। रसोलाई तालाब का निर्माण 1459 AD से शुरू कर दिया गया था। यह चारों ओर से पायरोक्लासिक ज्वालामुखी चट्टानों से घिरा हुआ है। अपने खूबसूरत किनारों और सीढ़ियों के साथ पायरोक्लास्टिक चट्टानों में छोटे-छोटे स्तंभकार संरचनाएं और स्तंभों के जोड़ों से युक्त यह भू-स्थल स्थानीय लोगों और मेहरानगढ़ किले में आने वाले पर्यटकों के लिए एक शानदार और आरामदायक मनोरंजन क्षेत्र है। मंदिर के साथ इस तालाब का उपयोग पुराने समय से धार्मिक और तैराकी उद्देश्यों के लिए भी किया जाता है।

संभावित जोधपुर जियोपार्क का विश्व में महत्व

विश्व में यूनैस्को द्वारा घोषित 213 जियोपार्कों ने देशों में पर्यटन, सामाजिक व आर्थिक उत्थान से लाभान्वित कर रहे है। मेहरानगढ पहाड़ी पर प्रस्तावित जियोपार्क न केवल इस क्षेत्र में जोधपुर को भूविज्ञान के रूप में विश्व पटल पर लाएगा बल्कि यह भविष्य में शिक्षा एवं पर्यटन के साथ सामाजिक एवं आर्थिक विकास का एक नया आयाम स्थापित करेगा। विश्वस्तर पर ऐसा देखा गया है कि वर्तमान में पर्यटकों का विशेष बड़ा ग्रुप, प्रकृति प्रेमी, शोधकर्ता, छात्र एवं छात्राओं में जियोपार्क पर्यटन अत्यंत लोकप्रिय हो रहा है। इसका सबसे अच्छा उदाहरण ताईपाई, ताइवान का येल्यू जियोपार्क है। यह पार्क अपने आप में अनूठा है क्योंकि यहां पर भी जोधपुर जैसी अवसादी चट्टानों में बनी भू कलाकृतियों को देखने दुनिया भर से पर्यटक आते हैं। इसे बहुत अच्छे ढंग से संरक्षित किया गया है। अधिक संख्या में पर्यटकों के आने के बाद सरकार ने प्रतिदिन की संख्या निर्धारित कर दी। यह जियोपार्क का महत्व दर्शाता है।

क. देव कुंड और ख. रसोलाई तालाब हाइड्रो-जियोसाइट्स

हाल ही में यूनेस्को ने हायड्रो-जियोटूरिज़्म को जियोपार्क का अभिन्न अंग माना है। यह एक प्राकृतिक और मानव निर्मित भौगोलिक स्थलों जैसे समुद्र, नदियाँ, झीलें, तथा झालरें एवं बावड़ियाँ और उसके आसपास पर्यटन के एक रूप में परिभाषित किया गया है जो विशेष रूप से भूविज्ञान एवं भूजल विज्ञान के विभिन्न पहलुओं से संबंधित हैं। हाइड्रो-जियोसाइट्स पर पृथ्वी विज्ञान की समझ के माध्यम से पर्यटन, पर्यावरण, संस्कृति, सौंदर्यशास्त्र, आर्थिक एवं सामाजिक विरासत को बढ़ावा मिलता है और जब पर्यटक इन हायड्रो-जियोसाइट्स की यात्रा करते हैं तो जल भूविज्ञान एवं वहाँ के अद्वितीय सांस्कृतिक अनुभवों की तलाश करते

हैं। जोधपुर में झीलों और तालाबों जैसे लगभग बीस प्राकृतिक जल निकाय हैं और सौ से अधिक झालरें और बावड़ियाँ हैं जो जोधपुर को दुनिया का एक महत्वपूर्ण जल-भू पर्यटन स्थल बना सकते हैं। इनके संरक्षण के बाद इनमें जल-भू पर्यटन के माध्यम से पर्यटन के लिए इनका उपयोग करने की काफी संभावनाएं हैं। यहाँ के उत्कृष्ट अंतरराष्ट्रीय स्तर के महत्वपूर्ण भूवैज्ञानिक परिदृश्य हैं जो भू-पर्यटन में वृद्धि और सतत विकास करने के लिए संयुक्त रूप से भूसंरक्षण, शिक्षा, व्याख्या और प्रकृति-आधारित पर्यटन के माध्यम से पर्यटन को बढ़ाया जा सकता है।

सौरभ माथुर
सतत विकास के लिए उभरती प्रौद्योगिकियों का केंद्र, भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान, जोधपुर
saurabhmathur@iitj.ac.in

एस.सी. माथुर
भूविज्ञान विभाग, एम.बी.एम. विश्वविद्यालय, जोधपुर

शिव सिंह राठौड़
सतत विकास के लिए उभरती प्रौद्योगिकियों का केंद्र, भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान, जोधपुर

भारत में हाइड्रो-जियोहेरिटेज और हाइड्रो-जियोटूरिज्म की एक नई अवधारणा

भू-विविधता को भौमिकीय, भू-आकृतिक, मृदा विज्ञान और हाइड्रो-जियोलॉजिकल घटनाओं की विविधता के रूप में परिभाषित किया गया है। भारत में स्टेप वेल्स (सीढ़ी-कुँओं) अद्वितीय भूजल निकाय हैं जो उनकी हाइड्रो-जियोलॉजिकल भू-विविधता के मूल्यों से पहचाने जाते हैं। पश्चिमी भारत के थार मरुस्थल में स्थित जोधपुर के स्टेप वेल्स को स्थानीय भाषा में झलरा और बावड़ी के नाम से जाना जाता है, जो मध्यकालीन काल की भूजल संचयन, संरक्षण और प्रबंधन प्रणाली के उत्कृष्ट उदाहरण हैं। इसके अलावा, ये ऐतिहासिक-सांस्कृतिक (पुरातात्विक), वास्तुकला और सिविल और हाइड्रोलिक इंजीनियरिंग तथा भू-स्मारक धरोहर के उत्कृष्ट नमूने हैं। भारत में किसी भी पद्धति और दिशानिर्देशों की अनुपस्थिति में, स्टेप वेल्स के जलविज्ञान धरोहर और भू-धरोहर मूल्यों को कम समझा गया है। वर्तमान अध्ययन उनके संभावित हाइड्रो-भू-धरोहर मूल्यों को पहचानने और उन्हें हाइड्रो-जियोसाइट्स के रूप में वर्गीकृत करने के लिए प्रस्तावित पद्धति के आधार पर, जोधपुर के 134 सूचीबद्ध में से संरक्षित दो झलरा और दो बावड़ी का चयन किया है, ताकि इनका शैक्षिक और हाइड्रो-भूपर्यटन उद्देश्यों के लिए उपयोग किया जा सके। साथ ही इनका उपयोग भारत में हाइड्रो-जियोसाइट्स पहचानने और उन्हें हाइड्रो-भू-धरोहर स्थापित करने के रूप में किया जा सकता है। जोधपुर में योग्य हाइड्रो-जियोसाइट्स में से अधिकांश लंबे समय से उपेक्षित होने के कारण दयनीय स्थिति में हैं, जिन्हें तत्काल संरक्षण की आवश्यकता है। इनके संरक्षण के लिए, इन हाइड्रो-जियोसाइट्स को राष्ट्रीय भूवैज्ञानिक स्मारक, राष्ट्रीय रुचि के स्मारक और विश्व धरोहर स्थल के समान महत्वपूर्ण भू-धरोहर स्थलों के रूप में संरक्षित किया जाना चाहिए। इसके अलावा, जागरूकता और हाइड्रो-भू-पर्यटन के माध्यम से आत्म-संवहनीय विकास, उनके संरक्षण, प्रचार और क्षेत्र के सामाजिक-आर्थिक विकास के लिए सर्वोत्तम समाधान और महत्वपूर्ण भूवैज्ञानिक संपत्ति हो सकते है।

यूनेस्को ने 1972 में एक प्रस्ताव पारित किया था जिससे दुनिया की सांस्कृतिक और प्राकृतिक धरोहरों का संरक्षण किया जा सके और प्राकृतिक धरोहर को जैव-पर्यावरणीय और भू-आकृतिक/भूवैज्ञानिक विशेषताओं के एक विविध सेट के रूप में परिभाषित किया है जिसे संरक्षण के लिए उपयुक्त माना गया है। हाल के वर्षों में, पृथ्वी की धरोहर और प्रबंधन के मूल्यांकन और महत्व ने भू-विविधता और जैवविविधता अवधारणाओं के रूप में वृद्धि की है। उन्नीसवीं सदी के पिछले कुछ दशकों में अनियोजित शहरीकरण ने सांस्कृतिक और भूवैज्ञानिक महत्व के कई स्थलों को नुकसान पहुंचाया है, हालांकि बीसवीं सदी के मध्य में ऐसे स्थलों के संरक्षण के लिए पर्याप्त जागरूकता उत्पन्न हुई। पर्यावरण का प्रबंधन और भू-धरोहर की दीर्घकालिक जीवनक्षमता, संभावित खतरों और भू-विविधता का मूल्यांकन करके भू-विविधता और भू-धरोहर के संरक्षण को महत्व दिया गया है। भू-विविधता का मतलब है संयुक्त भूवैज्ञानिक, भू-आकृतिक, पेडोलॉजिकल और जलविज्ञान गुण। जैसे पेड़, आवास, और वन्यजीव इत्यादि प्राकृतिक खजाने हैं जिन्हें संरक्षित करने की आवश्यकता है। चूंकि ये सभी भूवैज्ञानिक और जल-भूवैज्ञानिक स्थलों पर निर्भर हैं यदि ये स्थल नष्ट हो जाते हैं तो उन्हें पुनः नहीं बनाया जा सकता। ऐसे धरोहर स्मारक उस देश के लिए प्राकृतिक मूल्य के होते हैं जहां वे स्थित हैं और उन्हें संरक्षित किया जाना चाहिए। भू-संरक्षण, भू-शिक्षा और भू-पर्यटन के लिए वर्गीकृत प्रणाली में सबसे छोटा हाइड्रो-जियोसाइट, बड़े स्तरों पर जियोटॉप, और सबसे बड़े पैमाने पर एक जियोपार्क शामिल हैं। जियोपार्क भू-पर्यटन के माध्यम से स्थानीय अर्थव्यवस्था को बढ़ावा देते हैं। कई देशों में, हाइड्रो-भूवैज्ञानिक और भू-आकृतिक विशेषताओं को "जियोसाइट्स" की पहचान और दस्तावेज़ीकरण करके संरक्षित किया जाता है। भारतीय संदर्भ में जियोपार्क और भू-धरोहर स्थलों को स्थापित करने की वर्तमान अंतर्राष्ट्रीय परिदृश्य में बहुत आवश्यकता है। इस संबंध में वर्तमान में भू-धरोहर स्थलों को स्थापित करने का प्रयास हो रहे हैं। कुछ धरोहर पत्थर जैसे (डेक्कन ट्रैप्स, विंध्यन बलुआ पत्थर, जैसलमेर का स्वर्ण चूना पत्थर, जोधपुर का बलुआ पत्थर) और भू-धरोहर स्थान जैसे एलिफेंटा गुफाएँ, डेक्कन ट्रैप्स, पश्चिमी कच्छ के सीनोज़ोइक अनुक्रम,

टर्शियरी अनुक्रम और मेहरानगढ़ रिज, जोधपुर, कच्छ बेसिन वगैरह। वर्तमान में 34 राष्ट्रीय भूवैज्ञानिक विरासत स्मारक स्थल अद्वितीय भू-धरोहर और राष्ट्रीय की संभावितता के रूप में प्रस्तावित किये गए है। अंतर्राष्ट्रीय परिदृश्य के भूवैज्ञानिक रूप से महत्वपूर्ण खंडों, स्थलरूपों और पुरातात्विक स्मारकों को संभावित जियोपार्क स्थलों के रूप में स्थापित करते हैं जबकि आज तक भारत में किसी प्राकृतिक और परंपरागत जल स्रोतों को भू-धरोहर या हाइड्रो-जियोसाइट्स के रूप में वर्णित नहीं किया हैं।

अंतरराष्ट्रीय स्तर पर यह पाया गया है कि यूनेस्को ग्लोबल जियोपार्क्स में जल निकायों (समुद्र/महासागर, झील और नदियों) का विवरण क्रमशः 55% और उनके चिन्न के साथ 47% उल्लिखित है। आगे, यूनेस्को ग्लोबल जियोपार्क्स में जल निकाय सामान्यतः 80% मामलों में भूवैज्ञानिक धरोहर से मजबूत संबंध रखते हैं जो प्राकृतिक परिदृश्यों पर हाइड्रो-भू-विविधता का प्रतिनिधित्व करते हैं (IUCN 2022) और संभावित भू-पर्यटन स्थलों के रूप में स्थापित हैं। ये सभी पानी का चट्टानों के साथ इंटरैक्शन, भूमिगत जल संसाधनों और उनकी घटनाओं और विशेषताओं (हाइड्रो-भू-विविधता) का महत्वपूर्ण प्रतिनिधित्व करते है। ये घटनाएं और हाइड्रो-भू-विविधता भारत के स्टेप वेल्स में सबसे अच्छा प्रतिनिधित्व करती हैं जो पारंपरिक भूमिगत जल निकाय ओर अतिरिक्त सांस्कृतिक मूल्यों के स्मारक धरोहर हैं। स्टेप वेल्स बड़े भूमिगत जल संरचनाएं होती हैं जिनमें जल-कूप और नीचे की ओर पत्थर की सीढ़ियाँ होती है जो जमीन के स्तर से भूमिगत जल स्तर तक जाती है जहां पानी दस से सैकड़ों मीटर नीचे स्थित होता है। इन्हें मुख्य रूप से भारत में पेयजल और कृषि उद्देश्यों के लिए बनाया गया था। ये मध्यकालीन भारत की जल संचयन, संरक्षण और प्रबंधन प्रणाली के उत्कृष्ट उदाहरण हैं। इन विलक्षण संरचनाओं को भारत के विभिन्न भागों में "झलरा" "बावड़ी," "बाओली," "वाव," "वावड़ी," "वई," "कल्याणी," "पुष्कर्णी" "वापी" या "वापिका" के विभिन्न रूप में से जाना जाता है।

उल्लेखनीय रूप से, भारत के पश्चिमी राजस्थान के जोधपुर शहर में बड़ी संख्या में प्राचीन विलक्षण स्टेप वेल्स हैं। जोधपुर के स्टेप वेल्स का इतिहास 4 हजार ईसा पूर्व से शुरू होता है जब मंडोर (मारवाड़ राज्य की पुरानी राजधानी) में रॉक कट मनोहारी बावड़ी का निर्माण किया गया था। स्टेप वेल्स के निर्माण की निर्बाध परंपरा सदियों तक चली, सोलहवीं सदी में अपनी महिमा की चोटी पर पहुंची जो राजपूतों के राज्य के पारंपरिक वास्तुकला की चोटी से ओवरलैप होती है (राठौर और माथुर, 2014)। यह वह समय था, जब राजा राव जोधा ने 1459 ईस्वी में मंडोर से जोधपुर में मारवाड़ राज्य की राजधानी स्थानांतरित की। थार मरुस्थल में स्थित जोधपुर शहर ने अत्यधिक जल संकट में अत्यंत शुष्क क्षेत्र में अस्तित्व में रहा है; इसलिए पुराने राजा और स्थानीय समुदायों में लगातार भूमिगत जल लाने के लिए स्टेप वेल्स का निर्माण करने का दृष्टिकोण था। इसके परिणामस्वरूप, जोधपुर की स्थापना के बाद से, शहर ने सौ से अधिक स्टेप वेल्स का विकास किया है जो स्थानीय रूप से झालरा और बावड़ियों के रूप में जाने जाते हैं। स्टेप वेल्स केवल जोधपुर की प्राचीन भूमिगत जल संरक्षण क्षेत्र ही नहीं हैं बल्कि महत्वपूर्ण पुरातात्विक (ऐतिहासिक, सांस्कृतिक और धार्मिक) मूल्य भी रखते हैं और अद्वितीय और असाधारण हाइड्रो-भूवैज्ञानिक विरासत हैं। स्टेप वेल्स मुख्य रूप से उपयोगितावादी (भूमिगत जल का स्रोत होने के कारण) और सामाजिक कार्य (समुदाय के लोगों के लिए मिलने, आराम करने, धार्मिक और अनुष्ठान जगह) स्थानों के रूप में होते हैं। स्टेप वेल्स भी जल अभियांत्रिकी (संचयन, संरक्षण, और जल प्रबंधन) के साथ महत्वपूर्ण वास्तुकला और सिविल इंजीनियरिंग (स्मारकीय संरचनाएं) अवधारणाओं का भी प्रदर्शन करते हैं। इसके अलावा, स्टेप वेल्स का निर्माण विरासत पत्थर संसाधनों (Heritage Stone Resource) से किया गया है, जिन्हें स्थानीय रूप से जोधपुर का बलुआ पत्थर कहा जाता है, इसलिए इन्हें भारत के विरासत स्मारकों के रूप में माना जाता है। इन विशेषताओं के कारण, जोधपुर के स्टेप वेल्स को भारत के उत्कृष्ट पारंपरिक भूमिगत जल निकायों के रूप में नामित किया गया है जो थार मरुस्थल की अत्यधिक शुष्क जलवायु स्थितियों में विकसित किए गए हैं। इस प्रकार, स्टेप वेल्स दुर्लभ और अद्वितीय प्रकार की भूवैज्ञानिक साइटें हैं और भारत में शैक्षिक और हाइड्रो-भूपर्यटन मूल्यों के हाइड्रो-भू-धरोहर स्थलों के रूप में उन्हें बढ़ावा देने वाली बड़ी संभावनाएं हैं। पहले, सभी प्रकार के जल निकायों (समुद्र, महासागर, नदियाँ और झीलें) को अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर भू-

आकृतिक स्थल (जियोमॉर्फोसाइट्स) के रूप में नामित किया गया था। बाद में, जल निकाय के हाइड्रो-जियोलॉजिकल विविधता के आधार पर हाइड्रो-जियोसाइट्स शब्द को गढ़ा गया। हालांकि, कई अन्य प्रकार विशेष रूप से अद्वितीय पारंपरिक भूमिगत जल निकाय कुछ देशों में पाये जाते हैं, जिसमें प्रमुख रूप से भारत शामिल है, जो दुनिया में दुर्लभ और अद्वितीय हैं। इसलिए, हमारे द्वारा भारत के पारंपरिक जल निकायों के लिए गढ़ा गया हाइड्रो-जियोसाइट्स शब्द भारतीय संदर्भ में उपयोग के लिए बहुत उपयुक्त है, जैसा कि अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर इस अवधारणा का उपयोग किया गया है। इस प्रकार, भारतीय संदर्भ में स्टेप वेल्स को "हाइड्रो-जियोसाइट" के रूप में मानने से शिक्षा और हाइड्रो-भू-पर्यटन के माध्यम से पर्यटन को बढ़ावा देने के संभावित स्थल हो सकते है जैसा कि कई देशों में स्थापित किया गया है। इस सन्दर्भ में जोधपुर, पश्चिमी राजस्थान की हाइड्रो-जियोलॉजिकल विशेषताओं का अवलोकन दो बावड़ियो और दो झालरों से किया गया जिसकी हाइड्रो-जियोसाइट्स हेतु चयन और मूल्यांकन की समीक्षा प्रस्तुत है। यह समीक्षा शिक्षा और भू-पर्यटन मूल्यों के लिए उनके हाइड्रो-भू-धरोहर महत्व को स्थापित करने के लिए स्टेप वेल्स हाइड्रो-जियोसाइट्स के महत्व को भी उजागर करती है।

रानीसर हाइड्रो-जियोसाइट

रानीसर और पदमसर हाइड्रो-जियोसाइट्स जोधपुर के प्राचीन प्रतरूप जल निकाय हैं। रानीसर हाइड्रो-जियोसाइट्स जोधपुर रेलवे स्टेशन से लगभग 4 किमी उत्तर में मेहरानगढ़ किले के पिछले हिस्से में स्थित है । सबसे पुराना और भव्य रूप से निर्मित रानीसर हाइड्रो-जियोसाइट का निर्माण वर्ष 1459 में राव जोधा की रानी जसमादे हाड़ा ने करवाया था।

भूगर्भिक दृष्टि से यह हाइड्रो-जियोसाइट मालाणी की पहाड़ियों से घिरा हुआ है। मुख्य रूप से, यह चट्टान को काटकर बनाई गई हाथी नहर के माध्यम से पानी प्राप्त करता है। इसकी गहराई लगभग 6.7 मीटर है, जिसमें खंडित रायोलाइट से उपसतह भूजल प्राप्त करने के लिए नीचे पांच कुएं हैं। अतः यह जोधपुर का एक सबसे प्राचीन पारंपरिक जल निकाय है। अतिरिक्त पानी की निकासी के लिए पदमसर हाइड्रो-जियोसाइट की ओर एक जल आउटलेट भोगी कैनाल है। 78 मीटर लंबी किले की दीवार और सममित सीढ़ियां, उत्तर और पूर्वी किनारों पर एक मंदिर के साथ बरामदे (मंडप) इस हाइड्रो-जियोसाइट को सौंदर्य और प्राकृतिक सौंदर्य प्रदान करते हैं। इस हाइड्रो-जियोसाइट के पानी का उपयोग यहां के निवासियों द्वारा किया जाता था। मेहरानगढ़ किले के महलों और घरों में पानी की आपूर्ति लिए अतीत में विभिन्न प्रकार के उपकरणों का उपयोग किया जाता रहा है। 1840 ई. से अरहत तकनीक (बाल्टी की श्रृंखला) द्वारा रानीसर से पानी उठाया जाता था। इसके बाद, इसकी जगह एक शक्तिशाली मोटर ने ले ली जो कोयले से संचालित होती थी। 1889 में मेहरानगढ़ किले में पानी की आपूर्ति के लिए 12 एचपी का एक शक्तिशाली विद्युत इंजन का उपयोग किया गया था।

पदमसर हाइड्रो-जियोसाइट

पदमसर मेहरानगढ़ किले के पिछवाड़े में रानीसर के ठीक बगल में स्थित है। पदमसर के निर्माण के बारे में विभिन्न मत हैं, लेकिन तथ्य यह है कि जब राव जोधा ने मेहरानगढ़ किला बनवाया था, तब पदमसर भी बनाया गया था। दर्ज तथ्यों से पता चलता है कि राव जोधा ने इस कार्य के लिए मेवाड़ के सेठ पाधा को जोधपुर आमंत्रित किया था। उन्होंने राव जोधा को कुछ धन दान दिया और उन्होंने पदमसर का निर्माण शुरू कर दिया। इसीलिए कहा जाता था कि सेठ पाधा ने इसका निर्माण करवाया था और उनके नाम पर यह पदमसर कहलाया।

क. जोधपुर के प्राचीन प्रतरूपरानीसर और ख. पदमसर हाइड्रो-जियोसाइट्स का विहंगम दृश्य

पदमसर जोधपुर का एक प्राकृतिक जल निकाय है जिसका निर्माण रानीसर का अतिप्रवाह जल के निकास और संग्रहण तथा रानीसर हाइड्रो-जियोसाइट्स के साथ हुआ। यह कैनाल आउटलेट जोधपुर के तत्कालीन राजा मालदाओ सिंह जी द्वारा बनवाया गया था। कहने का तात्पर्य यह है कि रानीसर से अतिरिक्त पानी पदमसर को जाता है और जब पदमसर भी भर जाता है तो अतिरिक्त पानी वहां से निकलकर जालोरी गेट तक जाता है जिसे 'ओटा' कहा जाता है। पदमसर का जलग्रहण क्षेत्र (मेहरानगढ़ रिज) काफी बड़ा है और रानीसर और पदमसर तक पानी के प्रवाह के लिए उचित नहरें बनाई गई हैं। पदमसर मालानी रायोलाइट की पहाड़ियों से घिरा हुआ है ये पहाड़ियाँ पदमसर को जोधपुर का एक शानदार और खूबसूरत पर्यटन स्थल बनाती हैं

तुंवरजी का झालरा हाइड्रो-जियोसाइट्स का विहंगम दृश्य

तुंवरजी का झालरा हाइड्रो-जियोसाइटयह पुराने जोधपुर शहर के अंदर जोधपुर रेलवे स्टेशन से लगभग 3 किमी उत्तर में

ऐतिहासिक घंटाघर के पास स्थित है (चित्र 4)। यह हाइड्रो-जियोसाइट एक मंजिला भव्य रूप से निर्मित आयताकार स्मारकीय इमारत है। इसका निर्माण अभय सिंह की रानी तंवर कंवर ने विक्रम संवत 1740 ई. (1805 ई.) में करवाया था।

भौगोलिक दृष्टि से यह मेहरानगढ़ पर्वतमाला की निचली पहाड़ियों पर स्थित है। इसमें दो कुएं हैं जो जोधपुर समूह के उम्मेद भवन फार्मेशन के जलोढ़ के ऊपर ऐल्लुवीयम जलोढ़ जलभृत में स्थित हैं जिसमे जल स्तर लगभग 60-80 फीट की गहराई पर स्थित है। यह अपने वास्तुशिल्प डिजाइन और विभिन्न स्तरों पर तीन तरफ सममित रूप से व्यवस्थित सीढ़ियों के कारण जोधपुर का सबसे सुंदर हाइड्रो-जियोसाइट है। इसमें गौमुख (बलुआ पत्थर का गाय का मुंह) है। जिसमें से पूरे वर्ष पानी बहता रहता है, जो कि पैलियो-नाली प्रणाली की पहचान करने में हमारे पूर्वजों के ज्ञान को दर्शाता है, जो क्षेत्र की उपसतह संरचनाओं, भूविज्ञान और जल-भूविज्ञान के समृद्ध ज्ञान को दर्शाता है। देवी-देवताओं की मूर्तियों वाले नक्काशीदार प्रतीकों के साथ सुंदर मेहराबदार जरोखा (खिड़कियाँ) के साथ जटिल नक्काशीदार खंभों द्वारा समर्थित शानदार बरामदे (मंडप) और सममितीय सीढ़ियों से भव्य रूप से बनाया गया है। ये इसे जोधपुर का एक उत्कृष्ट स्मारकीय स्थल बनाते हैं।हाल ही में, इसे और राजमहल झालरा हाइड्रो-जियोसाइट्स को हमारे शोध समूह और स्थानीय निवासियों के साथ 70 वर्षीय आयरिश श्री कैरन द्वारा साफ किया गया था। अब, दोनों पर्यटकों के लिए आकर्षण का केंद्र बन गए हैं, क्योंकि छत के ऊपर बार के साथ कई गेस्ट हाउस और रेस्तरां खोले गए हैं, आसपास के क्षेत्रों में यह देखा गया है कि हाइड्रो-जियोसाइट्स पर्यटन और सामाजिक आर्थिक विकास में कैसे योगदान दे सकते हैं।

नवलखा बावड़ी हाइड्रो-जियोसाइट

यह हाई कोर्ट रोड पर जोधपुर रेलवे स्टेशन से लगभग 2 किमी उत्तर हरे-भरे सार्वजनिक पार्क (उम्मेद गार्डन) में स्थित है (चित्र 4) जो 82 एकड़ क्षेत्र में फैला हुआ है। इसके चारों ओर 5 अलग-अलग द्वार हैं। इस हाइड्रो-जियोसाइट का निर्माण महाराजा अभय सिंह ने 1724 ईस्वी में अपने शासनकाल के दौरान किया था। हाइड्रो-भौमिकीय रूप से, यह जोधपुर समूह के उम्मेद भवन फार्मेशन के जलोढ़ के ऊपर ऐल्लुवीयम जलोढ़ जलभृत में स्थित हैं जो उत्तरी दिशा में स्थित मेहरानगढ़ रिज के पहाड़ी इलाके से रिसाव प्राप्त करता है। लगातार लापरवाही के कारण इस शानदार हाइड्रो-जियोसाइट के कई हिस्से क्षतिग्रस्त हो गए। वर्तमान में, इसके गौरव को लौटाने के लिए मेहरानगढ़ संग्रहालय ट्रस्ट और कुछ गैर सरकारी संगठनों द्वारा इसका मूल स्वरूप और संरचना प्रदान करने के लिए इसका नवीनीकरण कार्य किया गया है।

क-ग. नवलखा बावड़ी हाइड्रो-जियोसाइट्स का क्षतिग्रस्त और नवीनीकृत स्वरूप

इसकी तीन मंजिलें हैं; प्रत्येक मंजिल को जोधपुर के बलुआ पत्थर से निर्मित मेहराबों के साथ जटिल नक्काशीदार खंभों द्वारा समर्थित शानदार बरामदे (मंडप) और सममितीय सीढ़ियों से भव्य रूप से बनाया गया है। देवी-देवताओं की मूर्तियों वाले नक्काशीदार प्रतीकों के साथ सुंदर मेहराबदार जरोखा (खिड़कियाँ) इसे जोधपुर का एक उत्कृष्ट स्मारकीय स्थल बनाते हैं। इस हाइड्रो-जियोसाइट का पानी उम्मेद गार्डन को सप्लाई किया जाता है। उम्मेद गार्डन के भीतर, हरे-भरे बगीचे, सौंदर्यपूर्ण रूप से डिजाइन किए गए पानी के फव्वारे, प्राचीन और आधुनिक पुस्तकों की एक श्रृंखला के साथ एक पुस्तकालय, संग्रहालय, प्रसिद्ध शिव मंदिर और एक चिड़ियाघर शामिल है। सरदार संग्रहालय का निर्माण महाराजा उम्मेद सिंह के शासनकाल में 1909 में हेनरी वॉन लैंचेस्टर द्वारा किया गया था। संग्रहालय में 397 पत्थर की मूर्तियों का एक आकर्षक संग्रह है,1900 से अधिक लघु चित्र, हथियार, सिक्के और विभिन्न समय अवधि से संबंधित अन्य कला और शिल्प इस हाइड्रो-जियोसाइट को अतिरिक्त मूल्य प्रदान करते हैं इस प्रकार अब यह एक अंतरराष्ट्रीय स्तर का जोधपुर का एक शानदार और सुव्यवस्थित हाइड्रो-जियोसाइट है।

हाइड्रो–जियोहेरिटेज विशेषताएँ

भूवैज्ञानिक रूप से, जल को एक महत्वपूर्ण खनिज भू-संसाधन और जल निकायों को जल-वैज्ञानिक विरासत मूल्यों के हाइड्रो-जियोसाइट्स के रूप में जाना जाता है। इंनका उपयोग शिक्षा, और समाज के सतत विकास लिए तथा हाइड्रो-जियोटूरिज्म के माध्यम से पर्यटन को बढ़ाने में किया जा सकता है। ज्ञात हो कि समुद्र/महासागरों, नदियों, झीलों और तालाबों जैसे जल निकायों (जियोमोर्फोसाइट्स) का उल्लेख यूनेस्को ग्लोबल जियोपार्क में 55% विवरणों के साथ किया गया है, जो वैज्ञानिक महत्व और भू-पर्यटन मूल्यों को साबित करते हैं। हालाँकि पारंपरिक जल निकाय जैसे बावड़ियाँ और झालरा इस सूची में नहीं हैं।

ग्लोबल जियोपार्क में पानी सहित विभिन्न खंडों का उपयोग और महत्व

इस संबंध में भारत में बावड़ियाँ और झालरा जेसे अद्वितीय दुर्लभ प्रकार के जलस्रोत जिन्हे हाइड्रो-जियोसाइट्स और पारंपरिक हाइड्रो-स्मारकीय विरासत के रूप में नामित किया जा सकता है। इस संबंध में हमारे वर्तमान अनुसंधान कार्य के आधार पर, जोधपुर के 134 स्टेप वेल्स की सूची बनाई गई जिनमें 117 बावड़ियाँ और 14 झालरा प्रकार के हाइड्रो-जियोसाइट हैं। प्राकृतिक जल निकायों के साथ बड़ी संख्या में बावड़ियों की उपस्थिति ने जोधपुर क्षेत्र में जल भूवैज्ञानिक गतिविधियो के विवरण के उच्च प्रतिशत को स्पष्ट रूप से दर्शाया है, जो जियोपार्क में हाइड्रो-जियोसाइट्स भू-विरासत के समान उनके महत्व को दर्शाता है। इस प्रकार जोधपुर के भूजल निकाय (हाइड्रो-जियोसाइट्स) दुनियाभर में अद्वितीय हैं। ये जल निकाय अतिरिक्त रूप से पुरातात्विक (सांस्कृतिक और ऐतिहासिक), वैज्ञानिक और जल इंजीनियरिंग मूल्यों से संपन्न हैं जो भारत के पुराने संरक्षण, विरासत और गौरव का भी प्रतिनिधित्व करते हैं। प्राचीन वृहत्तर भारत में, बावड़ियाँ और झालरा विभिन्न शैली और प्रकार में बनाई जाती थीं। जोधपुर की हाइड्रो-जियोसाइट्स वहाँ स्थित थी जहाँ उपयुक्त भूवैज्ञानिक और जलविज्ञानीय परिस्थितियाँ उपलब्ध होती हैं। हाइड्रो-जियोसाइट्स का लक्षण, वर्णन स्पष्ट रूप से प्राचीन समुदायों के जल संचयन, संरक्षण और प्रबंधन प्रणाली के उत्कृष्ट ज्ञान को दर्शाता है।

जोधपुर के हाइड्रो-जियोसाइट आमतौर पर समाज द्वारा हाइड्रो-जियोलॉजी और पुरातात्विक (इतिहास, संस्कृति और धर्म) महत्व के साथ एकीकृत तत्वों से संपन्न हैं। ये आम तौर पर एक उपयोगितावादी (पानी का स्रोत होने के नाते), सामाजिक कार्य (स्थानीय समुदायों और महिलाओं के लिए), एक बैठक और विश्राम स्थल होने के नाते और पानी भरने के समय समुदायों को जोड़ते हैं। कई हाइड्रो-जियोसाइट्स परिसर मंदिरों या पूजा स्थलों के साथ निकटता से जुड़े हुए हैं इस तरह महत्वपूर्ण प्राचीन

आध्यात्मिक स्थलों का निर्माण करके, स्थानीय समुदायों ने गर्व महसूस किया और वास्तव में शक्तियों को प्राप्त करने की क्षमता का एहसास किया, जैसा कि हमारे वेदो में वर्णित है। ऐसे हाइड्रो-जियोसाइट्स के निर्माण को यज्ञ से भी अधिक योग्य माना जाता था।

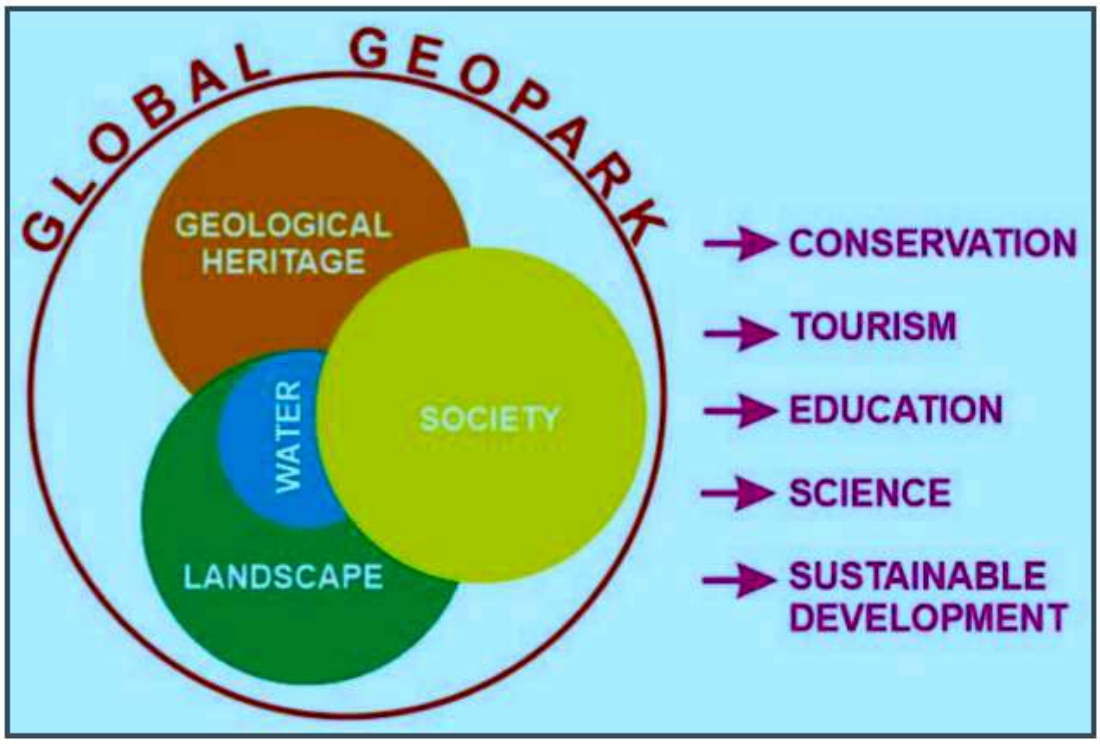

इसके अतिरिक्त, हाइड्रो-जियोसाइट्स की संरचना 300–500 वर्ष से अधिक पुरानी है और इसका निर्माण भारत के मध्ययुगीन काल के वास्तुशिल्प और सिविल इंजीनियरिंग चमत्कारों से किया गया है। ये अक्सर महलों, मंदिरों, स्मारकों, पार्कों और मनोरंजक स्थानों से जुड़े होते हैं जो उन्हें अतिरिक्त सांस्कृतिक मूल्य प्रदान करते हैं। इस प्रकार, अध्ययन क्षेत्र के बावड़ी और झालरा हाइड्रो-जियोसाइट्स को हाइड्रो-जियोहेरिटेज स्मारकों के रूप में माना जा सकता है क्योंकि इनका निर्माण विरासत पत्थर संसाधन (जोधपुर बलुआ पत्थर) द्वारा किया गया था।

पूर्व में आईएपी, 2015 के आधार पर, तीन हाइड्रो-जियोसाइट्स जैसे: चांद बावड़ी (जयपुर), रानी की बावड़ी (बूंदी) और अलवर की नीमराणा बावड़ी को 2018 में राजस्थान में एएसआई द्वारा राष्ट्रीय महत्व के स्मारक (एमएनआई) के रूप में घोषित किया गया है। वर्तमान जांच से स्पष्ट रूप से पता चलता है कि अध्ययन क्षेत्र के चार हाइड्रो-जियोसाइट्स (रानीसर पदमसर, तूर जी का झालरा और नवलखा बावड़ी) भारतीय आईएपी, 1915 विनियमन को पूरा करने के लिए संभावित उम्मीदवार हैं। तदनुसार, हमनें क्षेत्र के सामाजिक-आर्थिक विकास के लिए पर्यटन को बढ़ावा देने के लिए संभावित स्थलों के रूप में चार हाइड्रो-जियोसाइट को एमएनआई घोषित करने का प्रस्ताव किया गया है। गौरतलब है कि ये हाइड्रो-जियोसाइट्स मुख्य रूप से भारत के मध्यकालीन युग की शानदार भूजल संचयन, संरक्षण और प्रबंधन प्रणाली के रूप में उनके प्रतिनिधित्व के संबंध में वैज्ञानिक विरासत को प्रदर्शित करने वाली भूवैज्ञानिक वस्तुएं हैं। भूवैज्ञानिक महत्व के अलावा, ये पुरातात्विक (ऐतिहासिक, सांस्कृतिक और धार्मिक), वास्तुशिल्प और सिविल इंजीनियरिंग मूल्यों से भी संपन्न हैं। इस प्रकार भारत के राष्ट्रीय भूवैज्ञानिक स्मारक (एनजीएम) और राष्ट्रीय महत्व के स्मारक (एमएनआई) के लिए बहुत महत्वपूर्ण और संभावित उम्मीदवार हैं।

अंतरराष्ट्रीय प्रथाओं के अनुसार, भारत में जल-भू-विविधता और जल-भू-विरासत मूल्यों को स्थापित करने के लिए विभिन्न जल निकाय (सतह और या भूजल) को हाइड्रो-जियोसाइट्स के रूप में भी बढ़ावा दिया जाना चाहिए। इसके अलावा, इन

पहलुओं को लोकप्रिय बनाने के लिए निर्देशित पर्यटन, कार्यशालाओं और अन्य संचार विधियों के माध्यम से शैक्षिक और जागरूकता बढ़ाने के साथ-साथ हाइड्रो-जियोटूरिज्म को बढ़ावा देने के लिए अनुसंधान गतिविधियों का उपयोग किया जाना चाहिए। यदि हम जियोसाइट और हाइड्रोजियोसाइट्स के विकास को प्रोहत्सान दें तो हम भारत में जियोपार्क विकसित करने में सक्षम हो सकते हैं और टूरिज्म को जियोटूरिज्म के माध्यम से बढ़ा सकते है।

सौरभ माथुर
सतत विकास के लिए उभरती प्रौद्योगिकियों का केंद्र, भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान, जोधपुर
saurabhmathur@iitj.ac.in

एस.सी. माथुर
भूविज्ञान विभाग, एम.बी.एम. विश्वविद्यालय, जोधपुर

शिव सिंह राठौड़
सतत विकास के लिए उभरती प्रौद्योगिकियों का केंद्र, भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान, जोधपुर

सामान्य लेख

भोजपत्र (हिमालयन बर्च) : प्राचीन प्रलेखो एवं पुराजलवायु अध्ययन के लिए महत्वपूर्ण स्रोत

भोजपत्र, जिसे हिमालयन बर्च (*बेटुला यूटिलिस*) के नाम से भी जाना जाता है, यह हिमालय क्षेत्र में पाई जाने वाली पर्णपाती वृक्ष की एक प्रजाति है। भौगोलिक दृष्टि से, भोजपत्र मुख्य रूप से हिमालय पर्वतमाला में पाया जाता है, जो भारत, नेपाल, भूटान और तिब्बत के कुछ हिस्सों सहित कई देशों में फैला हुआ है। भारत में, भोजपत्र आमतौर पर जम्मू और कश्मीर, हिमाचल प्रदेश, उत्तराखंड, सिक्किम और अरुणाचल प्रदेश के ऊंचे इलाकों में पाया जाता है। भोजपत्र हिमालय में ऊंचाई वाले वातावरण की विशिष्ट जलवायु परिस्थितियों में पनपता है। भोजपत्र चौड़ी पत्तियों वाला एक पर्णपाती वृक्ष है, जिसकी उपस्थिति वृक्ष रेखा के पास होती है, ऐसी ऊंचाई जिसके पार पर्यावरणीय परिस्थितियों के कारण पेड़ उगने में असमर्थ होते हैं। इसकी छाल चमकदार, लाल-सफेद या सफेद होती है, जिसमें सफेद क्षैतिज चिकनी, लेनटिकल्स होती है। इसके बाहरी छाल में परतें होती हैं, जो चौड़े क्षैतिज रोल में छूटती हैं। यह पेड़ -10° सेल्सियस से 20° सेल्सियस तक के तापमान को सहन करते हुए ठंडी जलवायु के अनुकूल होता है। यह कठोर सर्दियों और मध्यम गर्मी वाले क्षेत्रों में जीवित रहने में सक्षम है। हिमालयी बर्च पर्याप्त वर्षा वाले क्षेत्रों को पसंद करता है, जो अक्सर सर्दियों के महीनों के दौरान बर्फ के रूप में होती है। इन क्षेत्रों में वार्षिक वर्षा आम तौर पर 1000 से 2500 मिलीमीटर तक होती है।

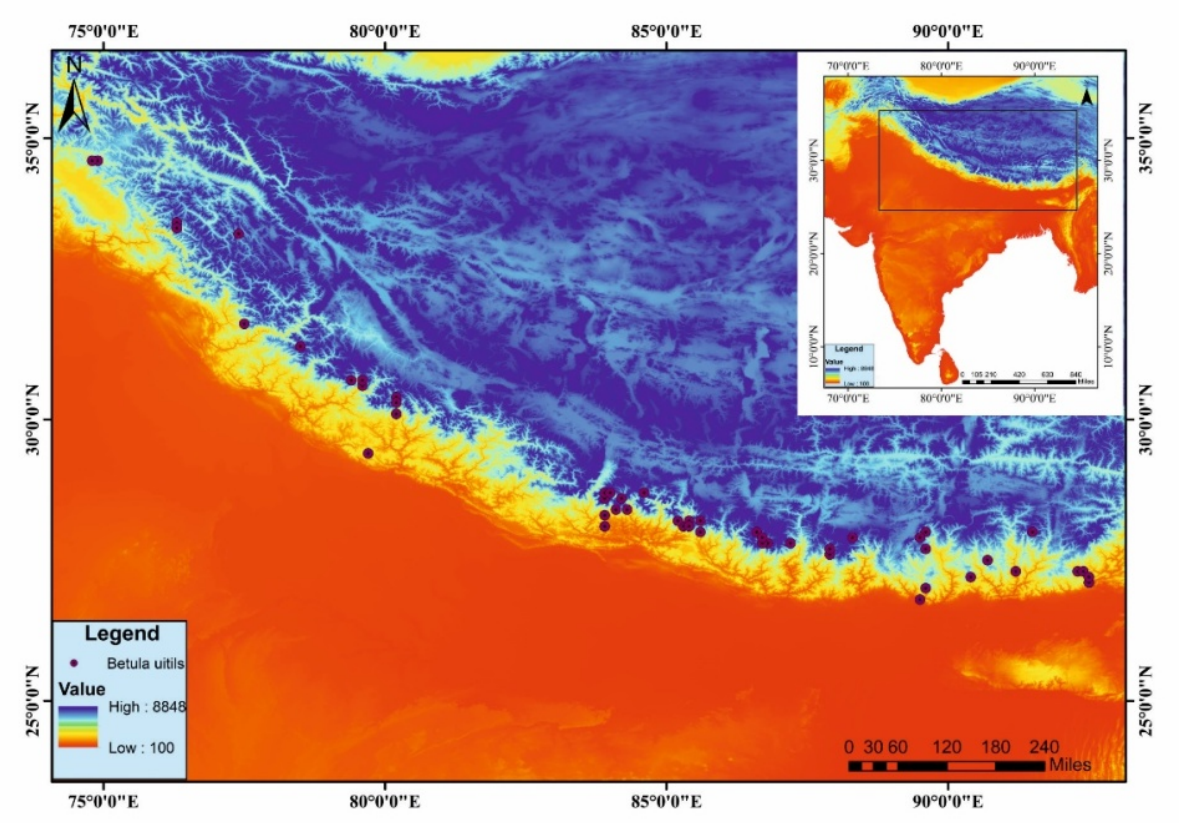

चित्र संख्या 1: हिमालय पर्वत श्रृंखला में भोजपत्र के वितरण

भोजपत्र आमतौर पर पहाड़ी क्षेत्रों में पाई जाने वाली अच्छी जल निकासी वाली, पथरीली मिट्टी में अच्छी तरह उगता है। मिट्टी आमतौर पर पीएच में अम्लीय से तटस्थ होती है और कार्बनिक पदार्थों से समृद्ध होती है, जो पेड़ की वृद्धि में सहायक होती है।

चित्र संख्या 2:भोजपत्र में क्षैतिज रूप में छूटती हुए छाल

भोजपत्र के लिए आदर्श ऊंचाई 2500 से 4500 मीटर के बीच है। कम ऊंचाई पर यह छिटपुट रूप से वितरित होता है तथा अधिक ऊंचाई की ओर, यह सघन या तो विशुद्ध जंगल के रूप में या *रोडोडेंड्रोन कैम्पानुलाइटम* या *एबिस* या *जुनिपर* और *सैलिक्स* प्रजातियों साथ भी मिश्रित रूप में पाए जाते है। उच्च ऊंचाइयों पर पेड़ का वितरण यह सुनिश्चित करता है कि इसे पर्याप्त धूप मिले और यह अत्यधिक गर्मी से भी सुरक्षित रहे। यह आमतौर पर पूर्ण से आंशिक सूर्य के प्रकाश वाले क्षेत्रों में पाया जाता है, जहां यह ठंडे तापमान में भी कुशलतापूर्वक प्रकाश संश्लेषण कर सकता है। यह पेड़ न केवल उच्च ऊंचाई की कठोर जलवायु परिस्थितियों के अनुकूल होने के लिए महत्वपूर्ण है, बल्कि प्राचीन भारतीय परंपराओं में अपने ऐतिहासिक और सांस्कृतिक महत्व के लिए भी महत्वपूर्ण है।

भोजपत्र: प्राचीन भारतीय प्रलेखीकरण का एक स्तंभ

भोजपत्र की छाल का उपयोग भारत के प्राचीन इतिहास में एक प्रमुख स्थान रखता है, जो कागज के आगमन से पहले लेखन और प्रलेखो के लिए एक महत्वपूर्ण माध्यम के रूप में कार्य करता था। हिमालयी भोजपत्र से प्राप्त यह प्राकृतिक सामग्री, प्राचीन भारत की विशाल सांस्कृतिक, धार्मिक और बौद्धिक विरासत को संरक्षित करने के लिए अभिन्न अंग थी।

ऐतिहासिक महत्व

लेखन सामग्री के रूप में भोजपत्र की भूमिका को कम करके नहीं आंका जा सकता। सोलहवीं शताब्दी से पहले जब

कागज अज्ञात था, भोजपत्र की छाल ग्रंथों को लिखने का प्राथमिक माध्यम थी। छाल की प्राकृतिक स्थायित्व और प्रसंस्करण में आसानी ने इसे एक आदर्श विकल्प बना दिया था। भोजपत्र तैयार करने की प्रक्रिया में एक चिकनी, लिखने योग्य सतह बनाने के लिए इसे कुशलतापूर्वक छीलना शामिल था। यह सामग्री धार्मिक ग्रंथों से लेकर वैज्ञानिक ग्रंथों तक विविध प्रकार के लेखन के लिए फलक बन गई।

धार्मिक ग्रंथ

धार्मिक ग्रंथ भोजपत्र के सबसे महत्वपूर्ण उपयोगों में से थे। ऋग्वेद और अन्य वैदिक ग्रंथों की कुछ सबसे पुरानी पांडुलिपियों सहित हिंदू और बौद्ध धर्मग्रंथ, इस सामग्री पर लिखे गए थे। प्राचीन भारतीय संस्कृति की आध्यात्मिक और दार्शनिक नींव को समझने के लिए ये मौलिक ग्रंथ, भोजपत्र के स्थायित्व की बदौलत सदियों से संरक्षित हैं। बौद्ध मठों, विशेषकर कश्मीर और तिब्बत जैसे क्षेत्रों में, भोजपत्र पर कई पांडुलिपियाँ मिली हैं, जो प्रारंभिक बौद्ध शिक्षाओं और प्रथाओं की अंतर्दृष्टि प्रदान करती हैं।

साहित्यिक एवं वैज्ञानिक कार्य

धार्मिक ग्रंथों से परे, भोजपत्र का उपयोग साहित्यिक कार्यों और वैज्ञानिक दस्तावेज़ीकरण के लिए भी किया जाता था। चाणक्य द्वारा रचित अर्थशास्त्र (चौथी शताब्दी) जैसे प्रसिद्ध ग्रंथ, जो शासन कला और अर्थशास्त्र की व्याख्या करते हैं, और चरक और सुश्रुत द्वारा चिकित्सा ग्रंथ (तीसरी शताब्दी), जो प्राचीन भारतीय चिकित्सा में गहराई से खोज करते हैं, संभवतः भोजपत्र पर दर्ज किए गए थे। ये पांडुलिपियाँ अमूल्य हैं, जो प्राचीन भारत में ज्ञान और संस्कृति की उन्नत स्थिति की झलक पेश करती हैं ।

संरक्षण और स्थायित्व

भोजपत्र के प्राकृतिक परिरक्षक गुणों ने कई प्राचीन पांडुलिपियों के अस्तित्व में योगदान दिया है, विशेष रूप से शुष्क और ठंडी जलवायु में जहां उनके क्षय होने की संभावना कम होती है। इस स्थायित्व ने आधुनिक विद्वानों को प्राचीन भारत की बौद्धिक उपलब्धियों पर प्रकाश डालते हुए इन ग्रंथों का अध्ययन करने में सहायक हुई है।

सांस्कृतिक और अनुष्ठानिक उपयोग

भोजपत्र का उपयोग लेखन से आगे बढ़कर सांस्कृतिक और धार्मिक प्रथाओं तक फैल गया। इसका उपयोग अक्सर ताबीज बनाने के लिए किया जाता था, जिन पर सुरक्षात्मक मंत्र अंकित होते थे और उन्हें उनके आध्यात्मिक लाभों के लिए पहना जाता था। विभिन्न हिंदू अनुष्ठानों में, भोजपत्र का उपयोग अभी भी पवित्र प्रतीकों और मंत्रों को लिखने के लिए किया जाता है, जिनका उपयोग पूजा और अन्य समारोहों में किया जाता है। यह अनुष्ठानिक उपयोग इसके व्यावहारिक अनुप्रयोगों के अलावा सामग्री के आध्यात्मिक महत्व को भी रेखांकित करता है।

भारतीय उपमहाद्वीप की सबसे पुरानी डुलिपियों की खोज

भोजपत्र पांडुलिपियों की महत्वपूर्ण खोज कश्मीर और तिब्बत जैसे क्षेत्रों में की गई है। गिलगित पांडुलिपियाँ, भारतीय उपमहाद्वीप की सबसे पुरानी जीवित पांडुलिपियों में से एक,जोकि भोजपत्र पर लिखी गई थीं। गिलगित लेख 1931 में गाय चराने वालों को एक बौद्ध स्तूप के अंदर एक गोलाकार कक्ष में एक लकड़ी के बक्से में पाए गई थी। ये पांडुलिपियाँ अब तक मौजूद सबसे

पुराने बौद्ध दस्तावेज़ हो सकती हैं। उनका नाम उस शहर के नाम पर रखा गया जहां वे पाए गई थी, गिलगित, जो अब पाकिस्तान के कब्जे में है। गिलगित सिल्क रोड पर एक महत्वपूर्ण शहर था, जिसके साथ बौद्ध धर्म दक्षिण एशिया से शेष एशिया तक फैला। ये ग्रंथ प्राचीन भारत के धार्मिक, सांस्कृतिक और सामाजिक इतिहास के बारे में अमूल्य जानकारी प्रदान करते हैं। इसके अतिरिक्त, मठों में बौद्ध ग्रंथों के संरक्षण ने ऐतिहासिक ज्ञान का एक समृद्ध स्रोत प्रदान किया है।

चित्र संख्या 3: कश्मीर क्षेत्र से प्राप्त भोजपत्र पर हस्तलिखित गिलगित पाण्डुलिपि

जी20 शिखर सम्मेलन में प्राचीन ऋग्वेद पांडुलिपि का प्रदर्शन

भारत में आयोजित जी20 शिखर सम्मेलन के दौरान, प्रधानमंत्री श्री नरेंद्र मोदी केद्वारा प्राचीन भारतीय ग्रंथ ऋग्वेद की सबसे पुरानी पांडुलिपियों में से एक का प्रदर्शन किया गया। इस कार्यक्रम ने भारत की समृद्ध सांस्कृतिक विरासत और वैश्विक सभ्यता में ऐतिहासिक योगदान पर प्रकाश डाला गया। ऋग्वेद, चार वेदों में से एक, हिंदू धर्म में एक महत्वपूर्ण धार्मिक ग्रंथ है, जो लगभग 1500-1200 ईसा पूर्व प्रारंभिक वैदिक संस्कृत में रचा गया था। ऋग्वेद के प्राचीन हस्तलिखित स्वरूप हिमालय के मुख्य रूप से कश्मीर क्षेत्र से प्राप्त हुए हैं, जहां पर प्राचीन समय में लोगों ने भोजपत्र का उपयोग किया करते थे।

भोजपत्र: जलवायु परिवर्तन का सूचक

वैज्ञानिक दृष्टिकोण से भोजपत्र पेड़ के वलय (छल्ले) भूतकाल में घटित जलवायु स्थितियों के पुनर्निर्माण के लिए मूल्यवान डेटा प्रदान करते हैं। छल्लों की चौड़ाई और घनत्व वार्षिक जलवायु परिवर्तन के साथ बदलता रहता है, जिससे वैज्ञानिकों को समय के साथ तापमान, वर्षा और अन्य जलवायु कारकों का पता लगाने में सहायता मिलती है। इसके आलावा भोजपत्र को वृक्ष रेखा में परिवर्तन और ग्लेशियर स्नाउट की बदलती स्थिति के अध्ययन के लिए एक संकेतक प्रजाति के रूप में भी पहचाना जाता है।

पहला वृक्ष-वलय विश्लेषण वर्ष 2006 में भारत के उत्तराखंड से भोजबासा में गंगोत्री ग्लेशियर के करीब, भोजपत्र के पेड़ो से प्राप्त नमूनों द्वारा किया गया था। जिससे यह निष्कर्ष निकला कि हिमालय में पेड़ों की उम्र चार सौ वर्ष तक हो सकती है। लाहुल के ठंडे-शुष्क क्षेत्र से वर्ष 2022 में भोजपत्र के एकत्रित वृक्ष-वलय नमूनों का अधययन किया गया। वृक्ष-वलय वृद्धि एवं जलवायु विश्लेषण के बीच सहसम्बन्ध का पता लगाने पर यह स्पष्ट हुआ कि, सर्दी और बसंत ऋतु का प्रारंभिक निम्न तापमान भोजपत्र के पेड़ो कि द्विऋियक वृद्धि को अनुकूल स्तिथि प्रदान करता है।

चित्र संख्या 4: पतझड़ ऋतु में लाहुल से भोजपत्र के वृक्ष-वलयनमूने एकत्रित करते हुए वैज्ञानिक

वर्ष 2022 में ही लाहुल के ही धारचा और योचे से एकत्रित भोजपत्र के वृक्ष-वलय नमूनों का विश्लेषण किया गया। वृक्ष-वलय-चौड़ाई कालक्रम का उपयोग करके भारतीय पश्चिमी हिमालय से औसत ग्रीष्मकालीन तापमान (जून-जुलाई) का रिकॉर्ड विकसित किया गया है जो कि 1752 ई.तक जाता है। तत्पश्चात वर्ष 2024 में भोजपत्र के इन्ही वृक्ष-वलय कालक्रम का उपयोग करते हुए फरवरी-मार्च के न्यूनतम तापमान का पहला रिकॉर्ड विकसित किया। वर्ष 2022 में कुल्लू की पार्वती घाटी में एकत्रित नमूनों के प्राथमिक विश्लेषण से भोजपत्र के 400 वर्ष से अधिक पुराने पेड़ो के होने की पुष्टि हुई है। पश्चिमी हिमालय के कुमाऊं क्षेत्र से वर्ष 2021 में डर्मा घाटी में एक पुराने जीवित भोजपत्र वृक्ष का पता लगाया गया है। और ऐसा दवा किया गया है कि यह वृक्ष न केवल हिमालय में बल्कि विश्व में भी सबसे पुराना हो सकता है। वृक्ष-वलय कालक्रम अध्ययन से पता चलता है कि सबसे पुराने दिनांकित चौड़ी पत्ती वाले पेड़ के रूप में यह हिमालय की समय अवधि 1331-2017 ई. को कवर करता है।

निष्कर्ष: भोजपत्र न केवल प्राचीन भारतीय दस्तावेज़ीकरण के लिए एक महत्वपूर्ण स्तंभ है, बल्कि भूतकाल में घटित में जलवायु परिवर्तन और पर्यावरणीय अध्ययन के लिए भी एक महत्वपूर्ण संसाधन है। इसके संरक्षण और अध्ययन से हमें न केवल अतीत की बौद्धिक और सांस्कृतिक धरोहर को समझने में मदद मिलती है, बल्कि पुराजलवायु स्थिति का अध्ययन करके भविष्य के पर्यावरणीय बदलावों को भी बेहतर ढंग से समझने में सहायता मिलती है।

रवि शंकर मौर्या, शोध छात्र;
साधना विश्वकर्मा, शोध छात्रा
एवं
डॉ. के जी मिश्र*, विज्ञानी 'ई'
बीरबल साहनी पुराविज्ञान संस्थान, लखनऊ
*kgmisrabsip@gmail.com

XXI अंतरराष्ट्रीय चतुर्थमहाकल्प अनुसंधान संघ (INQUA) कांग्रेस 2023 रोम, इटली: 2027 में इंक्वा कांग्रेस की मेजबानी हेतु भारत का सफल प्रयास

इंटरनेशनल यूनियन फॉर क्वार्टरनरी रिसर्च जिसकी स्थापना 1928 में हुई थी, यह 50 देशों में कार्यरत 5000 से अधिक वैज्ञानिकों का एक वैश्विक नेटवर्क है, जो वर्तमान समय (चतुर्थमहाकल्प; आखिरी 2.58 मिलियन वर्ष से वर्तमान तक) के हिमनद एवं अंतर हिमनदीय (इंटरग्लेशियल) काल के दौरान पर्यावरण में परिवर्तनों के अध्ययन पर केंद्रित हैं। स्थापना के पश्चात से इंक्वा (INQUA) सम्मेलन हर चौथे वर्ष आयोजित किया जाता है। XXI कांग्रेस रोम, इटली के सैपिएन्ज़ा विश्वविद्यालय में 14-20 जुलाई, 2023 के बीच "बदलाव का समय" ("TIME FOR CHANGE") के मुख्य विषय के साथ आयोजित की गई थी। XXI इंक्वा (INQUA) कांग्रेस 2023 में विश्व भर से 2783 प्रतिनिधियों की भागीदारी देखी गई। शोधकर्ताओं ने सात प्रमुख विषयों के अंतर्गत आयोजित विभिन्न सत्रों में अपने शोध निष्कर्ष प्रस्तुत किए। जो निम्न थे: 1. प्राकृतिक प्रक्रिया से लेकर भू-खतरों तक (फ्राम नैचुरल प्रोसैस टु जिओहजार्ड) 2. भू-आकृतियाँ, फैसीस वास्तुकला तथा अनुक्रम स्तरिकी (लैंडफॉर्म्स, फैसीस आर्किटैक्चर एंड सीकुएंस स्ट्राटीग्राफी); 3. चतुर्थमहाकल्प पर्यावरण एवं मानव विकास: जीवाश्म अभिलेख, फाइलोजेनी, पुराजीव विज्ञान, पुरापरिस्थितिकी तथा सांस्कृतिक मॉडल (क्वार्टरनरी इनवाइरमेंट्स एंड ह्यूमन एवल्यूशन: फ़ोसिल रिकॉर्ड, फाइलोजेनी, पैलियोबायोलोजी, पैलियोइकोलोजी एंड कल्चरल मॉडल); 4. नवीनतम प्लायोसीन से एंथ्रोपोसीन तक पारिस्थितिकी तंत्र तथा जैवभूगोल (इकोसिस्टम्स एंड बायोजिओग्राफी फ्राम द लेटैस्ट प्लायोसीन टु एंथ्रोपोसीन); 5. जलवायु अभिलेख, प्रक्रियाएं एवं मॉडल (क्लाइमेट रिकॉर्ड, प्रोसैस एंड मॉडेल्स): 6. चतुर्थमहाकल्प समय यंत्र (द क्वार्टरनरी टाइम मशीन); तथा 7 .चतुर्थमहाकल्प विज्ञान में परिवर्तन का समय (टाइम फॉर चेंज इन क्वार्टरनरी साइन्सेस)।

वैज्ञानिक सत्र के दौरान चतुर्थमहाकल्प वैज्ञानिकों ने अपने नवीन शोध प्रस्तुत किए। सत्र के मध्य में ही कुछ महत्वपूर्ण आमंत्रित सत्र भी आयोजित हुए। रोम स्थित सैपिएन्ज़ा विश्वविद्यालय, के प्रोफेसर कार्लो डोग्लियन ने 'चतुर्थमहाकल्प पृथ्वी कि प्रवणता (द ग्रेडियेंट ऑफ द क्वार्टरनरी अर्थ)' विषय पर चर्चा की। नॉर्वे स्थित आर्कटिक विश्वविद्यालय संग्रहालय के प्रोफेसर इंगर ग्रेव अलसोस ने 'प्राचीन अवसादीय डीएनए (एंशिएंट सेड़िमेंटरी डीएनए)' पर चर्चा की। मैसाचुसेट्स एमहर्स्ट विश्वविद्यालय में भूविज्ञान विभाग की प्रोफेसर जूली ब्रिघम-ग्रेटे ने 'आर्कटिक के प्लायोसीन चतुर्थमहाकल्प विकास: वन से टुंड्रा तक अव्यवस्थित परिवर्तन एवं अब हमारा पुनरागमन (प्लायोसीन क्वार्टरनरी एवल्यूशन ऑफ द आर्कटिक: द मेस्सी ट्रांज़िशेन फ्राम फॉरेस्ट टु टुंड्रा एंड नाऊ अवर रिटर्न)', विषय पर अंत:र्दृष्टिपूर्ण मुख्य व्याख्यान दिया, तथा आईआईटी रूड़की, भारत के प्रोफेसर प्रदीप श्रीवास्तव ने 'हिमालय में बाढ़ के भूगर्भविज्ञान' विषय पर आधारित एक रोचक व्याख्यान प्रस्तुत किया।

आमंत्रित तथा वैज्ञानिक सत्रों के अलावा, सम्मेलन में छात्रों, प्रारंभिक वृति शोधकर्ताओं (अर्ली कैरियर रिसर्चर्स - ईसीआर) तथा इच्छुक शोधकर्ताओं हेतु डिज़ाइन की गई विशेषज्ञ कार्यशालाओं एवं लघु पाठ्यक्रमों की एक विविध श्रृंखला शामिल थी। कुल मिलाकर दस कार्यशालाएँ एवं चार लघु पाठ्यक्रम आयोजित किए गए। सम्मेलन में प्रत्येक दिन चौदह समानांतर सत्रों में नियोटोमा पुरापारिस्थितिकी डेटाबेस: सुगम्य चतुर्थमहाकल्प अनुसंधान को प्रोत्साहित करना; अनाटोलियन प्रायद्वीप के विस्फोटक चतुर्थमहाकल्प ज्वालामुखीय अतीत का पुनर्निर्माण: तुर्की में ज्वालामुखीय विपत्ति के मूल्यांकन के परिणाम; ऐतिहासिक जलवायु के पुनर्निर्माण हेतु जैविक समुच्चयों का उपयोग करना; जैसे विषयों को शामिल करते हुए कई कार्यशालाएँ आयोजित की गईं।

इसके अतिरिक्त, सम्मेलन में HABCOM, PALCOM, SACCOM, TERPRO तथा अन्य INQUA

आयोगों की विशेष बैठकें हुईं। 'भूस्खलन विज्ञान में हाल के विकास: भू-आकृतिक मॉडलिंग, विपत्ति आकलन तथा पुराजलवायु प्रॉक्सी सिस्टम हेतु निहितार्थ' नामक सम्मेलन भी आयोजित किया गया था।

रोम में इंक्वा (INQUA) के दौरान आईयूजीएस (IUGS) और इंक्वा (INQUA) हेतु राष्ट्रीय समिति के लिए INSA के अध्यक्ष प्रोफेसर डी.एम. बनर्जी के नेतृत्व में भारतीय प्रतिनिधिमंडल का सशक्त प्रतिनिधित्व था। विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी विभाग, नई दिल्ली से डॉ. एम. मोहंती एवं डॉ. उषा दीक्षित; पृथ्वी विज्ञान मंत्रालय, नई दिल्ली की वैज्ञानिक डॉ. वंदना चौधरी के साथ अन्य प्रख्यात वैज्ञानिक जैसे डॉ. वंदना प्रसाद, बीएसआईपी, लखनऊ; डॉ. प्रदीप श्रीवास्तव, भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान, रुड़की; डॉ. राहुल मोहन, एनसीपीओएआर, गोवा; डॉ. हेमा अच्युतन, आईओएम, अन्ना विश्वविद्यालय, चेन्नई; डॉ. अनुपमा कृष्णमूर्ति, फ्रेंच इंस्टीट्यूट, पांडिचेरी; प्रोफेसर शांति पप्पू, शर्मा सेंटर फॉर हेरिटेज एजुकेशन, चेन्नई; डॉ. जावेद मलिक, भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान, कानपुर; डॉ. लैलुक्य बोर्गोहेन, ऑयल इंडिया लिमिटेड से शामिल थे। इसके अलावा डॉ. पार्थ चौहान, आईआईएसईआर मोहाली से, डॉ. रजनी पंचांग, एसपीपीयू, पुणे से; डॉ. प्रभिन सुकुमारन, चारुसैट, गुजरात; डॉ. कपेसा लोखो, डब्ल्यूआईएचजी, देहरादून; डॉ. लिंटो अलाप्पट, क्राइस्ट कॉलेज, इरिंजलाकुडा, केरला; डॉ. एकता गुप्ता, शूलिनी विश्वविद्यालय, सोलन; डॉ. नूपुर तिवारी, आईआईटी-मुंबई; डॉ. तेजपाल सिंह, सीएसआईआर-सीएसआईओ, चंडीगढ़; डॉ. नवीन चौहान, पीआरएल, अहमदाबाद; डॉ. रईस शाह, कश्मीर विश्वविद्यालय, कश्मीर; डॉ. सिजिन कुमार एवी, केरला केंद्रीय विश्वविद्यालय जैसे कुछ प्रमुख विभूतियाँ भी उपस्थित थे। बीएसआईपी, लखनऊ से डॉ. अनुपम शर्मा, डॉ. बिनीता फर्तियाल, डॉ. संतोष के. शाह, डॉ. फिरोज क़मर, डॉ. स्वाति त्रिपाठी, डॉ. निवेदिता मेहरोत्रा ने भी इस सम्मेलन में सहभागिता की। इस सम्मेलन में 100 से अधिक भारतीय शोधकर्ताओं ने विभिन्न सत्रों में अपने शोध कार्य प्रस्तुत किए।

इंक्वा (INQUA) की परिषद बैठक में, XXII इंक्वा (INQUA) काँग्रेस की मेजबानी हेतु भारतीय बिड (निविदा) को डॉ. बिनीता फर्तियाल, बीएसआईपी द्वारा प्रस्तुत किया गया। वैज्ञानिकों के प्रयासों तथा प्रस्तुतिकरण ने अंतर्राष्ट्रीय चतुर्थमहाकल्प परिषद (इंटरनेशनल क्वाटरनरी काउंसिल) पर महत्वपूर्ण प्रभाव डाला, जिसके परिणामस्वरूप भारत को उत्तर प्रदेश की राजधानी लखनऊ में गौरवपूर्ण कांग्रेस (INQUA-2027) की सफलतापूर्वक मेजबानी हेतु चुना गया। अधिकांश मतदान करने वाले देशों के साथ यूरोपीय संघ, सर्वसम्मति से भारत के पक्ष में गया। महासभा की बैठक के दौरान, INQUA के तत्कालीन अध्यक्ष प्रोफेसर थिज्स वान कोल्फ्सचोटेन ने भारतीय प्रतिनिधिमंडल के प्रति अपना आभार व्यक्त किया। उन्होंने आगामी INQUA कांग्रेस की मेजबानी में उनके प्रयासों की सराहना की और इस आयोजन के सफल आयोजन हेतु भारत को शुभकामनाएं दीं। रोम में भारतीय राजदूत डॉ. श्रीमती नीना मल्होत्रा, आईएफएस द्वारा INQUA 2027 की मेजबानी हेतु स्वीकृति भाषण दिया गया। भाषण के दौरान भारत की तरफ से उन्हें सम्मानित किया गया। आगामी INQUA कांग्रेस 01-07 फरवरी 2027 को लखनऊ में आयोजित होगी तथा अध्यक्ष के रूप में इसका नेतृत्व प्रोफेसर प्रदीप श्रीवास्तव, उपाध्यक्ष के रूप में डॉ. राहुल मोहन और आयोजन महासचिव के रूप में डॉ. बिनीता फर्तियाल द्वारा किया जाएगा। INQUA इंडिया का विषय "समाज की सेवाओं के तौर पर चतुर्थमहाकल्प विज्ञान" (क्वार्टरनरी साइन्स एज़ सोसाएटल सर्विसेस) निर्धारित है।

रोम में आयोजित इंक्वा (INQUA) सम्मेलन में बीरबल साहनी पुराविज्ञान संस्थान (बीएसआईपी), लखनऊ के वैज्ञानिकों द्वारा प्रस्तुत शोध निष्कर्षों को चतुर्थमहाकल्प विज्ञान के विभिन्न पहलुओं पर काम करने वाले शोधकर्ताओं द्वारा अत्यधिक सराहना मिली। बीएसआईपी प्रतिनिधियों में डॉ. वंदना प्रसाद जो उस अंतराल में बीएसआईपी की निदेशक थीं, उनके नेतृत्व में डॉ अनुपम शर्मा, डॉ बिनीता फर्तियाल, डॉ संतोष कुमार शाह, डॉ स्वाति त्रिपाठी, डॉ मनोज एम सी और डॉ मो० फिरोज क़मर जैसे प्रमुख वैज्ञानिक शामिल हुए। इस कार्यक्रम में कई युवा शोधकर्ता सम्मिलित हुए। देश भर से आए भारतीय प्रतिनिधियों ने पुरा-पारिस्थितिकी के विविध क्षेत्रों से संबंधित विषयों पर अपने शोध प्रस्तुत किए। बीएसआईपी के कई शोध छात्रों को कांग्रेस

में सम्मिलित होने के लिए एसईआरबी, नई दिल्ली तथा इंक्वा (INQUA) से वित्तीय सहायता प्राप्त हुई।

भारतीय प्रतिनियुक्त वैज्ञानिक इंडियन एक्सपो स्टॉल में भी सम्मिलित हुए तथा भारत की भौमिकीय क्षेत्रीय यात्राओं के बारे में सूचित किया, और वर्ष 2027 में देश में XXII INQUA कांग्रेस आयोजित करने के उद्देश्य के बारे में विस्तार से चर्चा की। उन्होंने आगामी INQUA कांग्रेस की मेजबानी हेतु भारत की बिड का समर्थन करने के लिए विश्व भर के शोधकर्ताओं को आग्रह किया। भारत के प्रतिनिधिमंडल को संबोधित करते हुए प्रोफेसर डी.एम. बनर्जी एवं डॉ. वंदना प्रसाद ने एक विशेष बैठक में भारतीय वैज्ञानिकों हेतु भविष्य के चरणों पर चर्चा की। इंक्वा (INQUA), रोम में भारतीय प्रतिनिधियों की मौखिक तथा पोस्टर प्रस्तुतियाँ निस्संदेह प्रेरणादायक थीं और संभवतः उनके शोध प्रयासों को महत्वपूर्ण प्रोत्साहन मिला। उम्मीद है की INQUA जैसे अंतर्राष्ट्रीय मंच पर प्रदर्शन एवं नियोजन ने तकनीकों को बढ़ाने तथा नयी प्रॉक्सी के अन्वेषण हेतु बहुमूल्य अंतर्दृष्टि तथा विचार प्रदान किए होंगे।

कांग्रेस के समापन सत्र में इंक्वा-2027 (INQUA – 2027) की आयोजन महासचिव डॉ बिनीता फर्तियाल ने इंक्वा (INQUA) – विजयी प्रस्ताव वृत्तचित्र का प्रदर्शन किया। प्रस्तुति के दौरान, उन्होंने इस बात पर बल दिया कि भारत की चतुर्थमहाकल्प अवधि की सम्पूर्ण श्रृंखला को समाहित किए हुए है व अनुसंधान के नए अवसर प्रदान करता है। हाल के वर्षों में भारत ने चतुर्थमहाकल्प विज्ञान में काफी प्रगति हुई है, जिससे पृथ्वी की प्रक्रियाओं तथा उनकी विशेष भूवैज्ञानिक व्यवस्थाओं एवं चुनौतियों के बारे में हमारी समझ में महत्वपूर्ण आयाम प्राप्त हुआ है। भारतीय शोधकर्ताओं को आशा है कि वे विश्व भर के वैज्ञानिकों को भारत आने तथा इंक्वा-2027 कांग्रेस के माध्यम से चतुर्थमहाकल्प स्थलों की एक झलक प्रदान कर उन्हें चतुर्थमहाकल्प इतिहास तथा प्रक्रियाओं की जांच करने हेतु प्रोत्साहित करेंगे। उन्होंने भारतीय चतुर्थमहाकल्प बिरादरी की तरफ से विश्वभर के प्रतिनिधियों को भारत आने तथा देश की समृद्ध ऐतिहासिक तथा सांस्कृतिक विरासत को जानने हेतु आमंत्रित किया। क्षमता निर्माण और उनके कार्यक्रमों में सहयोग हेतु सक्रिय समर्थन के साथ, इंक्वा-2027 सार्क और बिम्सटेक देशों के साथ भारतीय विज्ञान एवं विशेषज्ञता को एकीकृत तथा प्रसारित करने का अवसर प्रदान करता है। हम इसे भारत के लिए इन क्षेत्रों के क्षमता विकास हेतु अपने उत्तरदायित्व को समझने और अंततः सद्भावना की नींव तैयार करने के एक उल्लेखनीय अवसर के रूप में देखते हैं।

भारतीय अनुसंधान पर इंक्वा–2027 का संभावित प्रभाव

चतुर्थमहाकल्प विज्ञान शोधकर्ताओं हेतु सबसे अग्रणी मंच के रूप में, इंक्वा (INQUA) का लक्ष्य उपस्थित शोधकर्ताओं को अनुसंधान विषयों की एक विस्तृत श्रृंखला, चतुर्थमहाकल्प समुदाय में करियर तथा अंतःविषय एवं अंतर्राष्ट्रीय शोधकर्ताओं के साथ नेटवर्किंग के अवसरों से परिचित कराना है। भारत में इंक्वा की मेजबानी हेतु बिड (प्रस्ताव) जीतना हमारे देश के लिए सम्मान की बात है, तथा भारतीय चतुर्थमहाकल्प शोधकर्ता आगामी कांग्रेस को उत्कृष्टता के साथ आयोजित करने और निष्पादित करने की जिम्मेदारी लेते हैं। सार्क देशों के मध्य, भारतीय उपमहाद्वीप में आयोजित होने वाली यह पहली इंक्वा कांग्रेस है। इस चतुर्थमहाकल्प सम्मेलन द्वारा रोमांचक अनुसंधान के अवसर प्रदान किए जाएंगे, जो हमें क्षेत्र की भूवैज्ञानिक और सांस्कृतिक विरासत को प्रदर्शित करने में सक्षम बनाएगा। यह भूवैज्ञानिक अनुसंधान प्रौद्योगिकी को आगे बढ़ाने हेतु अवधारणाओं, सूचनाओं तथा अनुभव को साझा करने की स्वीकृति भी है। इसके अतिरिक्त, यह अवसर ज्ञान के प्रचार प्रसार तथा जनता को विज्ञान से जोड़ने संबंधी हमारे प्रयासों को सार्थक करेगा। विज्ञान और प्रौद्योगिकी विभाग, नई दिल्ली, पृथ्वी विज्ञान मंत्रालय, और भारतीय राष्ट्रीय विज्ञान अकादमी, नई दिल्ली सहित प्रोत्साहन और वित्तीय सहायता के हमारे स्तंभों ने बिड हेतु योजना के प्रारंभिक चरणों से ही लगातार हमारे विचारों को दृढ़ता और प्रयासों को सबलता प्रदान की है। उनका प्रबल समर्थन बिड जीतने तथा 2027 में इंक्वा इंडिया के

सफल आयोजन हेतु सहायक है। यह आयोजन 1928 में इंक्वा की स्थापना के बाद उपमहाद्वीप में अपनी तरह के पहले आयोजन के रूप में ऐतिहासिक महत्व रखता है।

INQUA-2023, रोम, इटली में बीरबल साहनी पुराविज्ञान संस्थान के शोधकर्ताओं द्वारा व्याख्यान

INQUA-2023, रोम, इटली में भारत के विभिन्न शोध संस्थानो द्वारा प्रतिनिधित्व

बिनीता फर्तियाल, विज्ञानी 'एफ'

binita_phartiyal@bsip.res.in

स्वाति त्रिपाठी, विज्ञानी 'ई'

एवं

मनोज एम सी, विज्ञानी 'डी'

बीरबल साहनी पुराविज्ञान संस्थान, लखनऊ

2 x 2 के कमरे में जीवन

जीवंत शहर के केंद्र में, जहां ऊंची इमारतें आसमान तक पहुंचती थीं और सड़कें शहरी जीवन की जीवंत आवाज़ों से गूंजती थीं, वहां अनकही कहानियों से भरी एक दुनिया थी। यह स्थान आकांक्षाओं और वास्तविकता के बीच एक मिलन बिंदु के रूप में कार्य करता था, जहां आशावाद निराशा के साथ जुड़ा हुआ था, और जहां प्रत्येक दिल की धड़कन शहरी वातावरण की लय को प्रतिध्वनित करती थी।

जीवन हर किसी के लिए आसान नहीं है, खासकर गांवों में रहने वाले लोगों के लिए जो शहरी क्षेत्रों जैसे अत्यधिक विविधता वाले क्षेत्रों में जीवित रहने के लिए संघर्ष करते हैं। सब कुछ तेजी से और बिना किसी चेतावनी के बदल सकता है, जिससे आप अलग-थलग और परिस्थितियों से अनजान महसूस करेंगे। अंत में, आपको उस योजना के लिए जिम्मेदार ठहराया जा सकता है जिसके बारे में आपको कोई जानकारी नहीं थी। यह महसूस करने पर कि मनगढ़ंत दुनिया में उनके साथ महज एक जोकर के रूप में व्यवहार किया जा रहा है, व्यक्ति ने अपनी दूरदर्शी क्षमताओं को बढ़ाने और समाज की भलाई के लिए कुछ सार्थक योगदान देने का निर्णय लिया। उनका लक्ष्य इस कृत्रिम दुनिया में एक रोल मॉडल बनना था, अपनी गरिमा और प्रगतिशील मानसिकता का उपयोग करके अपने सीमित स्थान के दायरे में एक बेहतर समाज बनाना था।

उन्होंने सीमित स्थान वाले एक कॉम्पैक्ट कमरे में रहना चुना, लेकिन एक साफ़ और आरामदायक वातावरण वाला जो किसी भी असुविधा के विपरीत निकटता और सुविधा की भावना पैदा करे। सुविधाजनक क्षेत्र में स्थित ये छोटे स्थान अपने निवासियों के लिए एक शांत और सुकून भरा वातावरण प्रदान करते हैं। निजता और शांति के लिए अलग-थलग यह कमरे विश्राम और पुनर्जीवन्त होने के लिए एक उचित वातावरण के रूप में काम करते हैं। विभिन्न मानसिकताओं वाले मनुष्यों को समाज में एक समय में विशिष्ट स्थान बनाने में भी योगदान करते हैं।

साधारण सजावट और मद्धम रंग एक शांत वातावरण बनाते हैं, जिसमें एक आरामदायक और पुनर्जीवन्त करने वाली नींद सुनिश्चित हो सके। सभी अनुभाग आसानी से उपलब्ध हों, जिससे दैनिक जीवन में दक्षता और सुविधा की भावना को बढ़ावा मिलता रहे। चाहे इसमें सुबह में एक कप कॉफी बनाने के लिए कल्पनाशील और नवीन तरीकों का उपयोग करना शामिल हो, दोपहर के दौरान एक मनोरम पुस्तक का आनंद लेना हो, या शाम को एक गिलास चाय के साथ आराम करना हो, सब कुछ आसान और पहुंच के भीतर हो, स्पष्टता की भावना को बढ़ावा देता हो और वह सहजता भी हो जो वास्तव में उस स्थान को एक घर में बदल देती है। अपने छोटे आकार के बावजूद, 2 x 2 के कमरे में अनुकूलन और व्यक्तिगत अभिव्यक्ति के लिए बहुत सारी संभावनाएं हैं। अंतरिक्ष के भीतर प्रत्येक क्षेत्र कलात्मक प्रतिनिधित्व के लिए एक माध्यम के रूप में कार्य करता है, जहां क़ीमती स्मृति चिन्ह, प्रिय कलाकृतियाँ और बेशकीमती संपत्ति को निवासियों की व्यक्तिगत कहानी बताने के लिए संजोया जाता है। यह एक ऐसा स्थान है जहां यादें बनती हैं, आकांक्षाएं पोषित होती हैं और संबंध स्थापित होते हैं; शहरी अस्तित्व की हलचल के बीच एक शांत आश्रय। दरअसल, जगह की सीमाएं अक्सर न्यूनतम जीवन शैली को बढ़ावा देती हैं, जोकि व्यक्तियों को महत्वपूर्ण वस्तुओं को प्राथमिकता देने और सामानों के अनावश्यक संचय को रोकने के लिए मजबूर किया जाता है। किसी स्थान पर अतिसूक्ष्मवाद अपनाना न केवल व्यावहारिक है बल्कि दैनिक जीवन में शांति और सरलता की भावना को भी बढ़ावा देता है।

एक छोटी सी जगह में न्यूनतम जीवनशैली अपनाने का एक प्रमुख लाभ है मात्रा से अधिक गुणवत्ता को प्राथमिकता देना। सीमित स्थान के कारण, निवासियों को सावधानीपूर्वक अपने सामान का चयन और संरक्षण करना चाहिए, ऐसी वस्तुओं का

चयन करना चाहिए जो कार्यात्मक हों और वास्तव में उनके जीवन के लिए मूल्यवान हों। संपत्ति के प्रति सजग दृष्टिकोण न्यूनतम जीवन शैली की समझ को बढ़ावा देता है और अनावश्यक अव्यवस्था जमा करने की प्रवृत्ति को कम करता है।स्वायत्त रूप से रहना, व्यक्तियों को एकल रोमांच, व्यक्तिगत विकास और आत्म-खोज के लिए एक अनूठा अवसर प्रदान करता है। यह विशेष आवासीय स्थान एक ऐसे स्वर्ग में रूपांतरित हो रहे हैं जहां व्यक्ति खुले तौर पर अपनी प्रामाणिक पहचान व्यक्त कर सकते हैं, अपने हितों का पोषण कर सकते हैं और बिना कोई समझौता किए अपनी स्वतंत्रता को पूरी तरह से अपना सकते हैं।

अंतर्मुखी लोगों या ऐसे व्यक्तियों के लिए जो अकेले रहना पसंद करते हैं, एक व्यक्तिगत सुरक्षित आश्रय एक पथ्य आश्रय के रूप में कार्य करता है जहां वे बाहरी दुनिया की मांगों से पीछे हट सकते हैं और गुमनामी में अपने विचारों को फिर से भर सकते हैं। इस विशिष्ट वातावरण में, व्यक्तियों को सामाजिक प्रतिबद्धताओं के विकर्षणों और दायित्वों से मुक्त होकर सांत्वना और संतोष मिलता है।

नवोन्मेषी विचार प्रेरणा या अंतर्दृष्टि से अचानक आ सकते हैं। ऐसा चलने, नहाने या सोचने पर हो सकता है। रचनात्मक अंतर्दृष्टि में कभी-कभी स्पष्ट रूप से असंबद्ध विचारों को जोड़ना या परिचित चीज़ों को नए तरीकों से देखना शामिल होता है। लोगों को अक्सर समस्याओं के कल्पनाशील समाधान की आवश्यकता होती है। मस्तिष्क विभिन्न विकल्पों पर विचार करके और असामान्य विचारों के साथ समस्याओं को हल करने के लिए विभिन्न विचारों का उपयोग करता है। विभिन्न क्षेत्रों के विचारों को संश्लेषित करने से नए विचारों को जन्म मिल सकता है। कई क्षेत्रों से ज्ञान का संश्लेषण जटिल समस्याओं के लिए नए दृष्टिकोण और समाधान प्रदान कर सकता है। जिज्ञासा और अन्वेषण की इच्छा, सक्रिय रूप से नए अनुभवों की तलाश करना, दूसरों से सीखना और कई प्रश्न पूछना संज्ञानात्मक विचारों को बढ़ा सकता है और नई खोजों को जन्म दे सकता है। माइंडफुलनेस और आत्म-प्रतिबिंब विचारों, भावनाओं और अनुभवों के बारे में जागरूकता बढ़ाते हैं। आत्मनिरीक्षण अंतर्निहित मान्यताओं, पूर्वाग्रहों और धारणाओं को प्रकट कर सकता है, जिससे नए विचार और व्यक्तिगत विकास हो सकता है। संयोग से, जैसे आकस्मिक मुलाकातें, खोजें या रिश्ते भी इसमें शामिल हैं। अनिश्चितता को स्वीकार करने और अप्रत्याशित घटनाओं के प्रति खुले रहने से नई खोजें और गहरी समझ पैदा हो सकती है। बातचीत और साझेदारियाँ, रचनात्मकता और नवीनता को बढ़ावा दे सकती हैं। विचारों को साझा करके, धारणाओं को चुनौती देकर और अन्य दृष्टिकोणों पर विचार करके, लोग नए समाधान खोजने और अधिक जानने के लिए सहयोग कर सकते हैं। नवोन्मेषी दृष्टिकोण के विभिन्न तरीके और विफलता को स्वीकार करने से नई अंतर्दृष्टि और बड़ी प्रगति हो सकती है। व्यवस्थित परीक्षण और विश्लेषण के द्वारा, लोग अपने विचारों में सुधार कर सकते हैं और एक छोटे से क्षेत्र में भी, समाज को बेहतर बनाने के नए तरीके खोज सकते हैं।

दुनिया पर एक 2 x 2 के कमरे का प्रभाव उसके रहने वालों के दृष्टिकोण पर निर्भर करता है। मेरा मानना है कि रचनात्मक परिवर्तन के लिए प्रभावशाली एजेंटों के रूप में- नवाचार, शिक्षा, सहयोग और नैतिक दायित्वों को बढ़ावा देने वाले वातावरण को विकसित करके, 2 x 2 के अध्ययन कक्षों में भविष्य के लिए एक बेहतर दुनिया तैयार करने के लिए सक्रिय रूप से योगदान करने की क्षमता है।

"कल को बदलने के लिए आज खुद को बनाएं।"

संग्राम साहू
शोध छात्र
बीरबल साहनी पुराविज्ञान संस्थान, लखनऊ

शैवाल एक वरदान या अभिशाप: समाज के निरंतर विकास में भूमिका

हम सभी, नम सतह, पौधों की छाल, तालाब क्षेत्र के साथ-साथ स्थिर जल निकायों की सतह के पास चिपचिपे पदार्थ की नीली-हरी-भूरी फिसलन परत से परिचित हैं। ये सभी विभिन्न प्रकार के शैवाल हैं, चिपचिपा पदार्थ जो उच्च आर्थिक मूल्यों और पारिस्थितिकी तंत्र स्वास्थ्य का प्रमाण है। शैवाल की उपलब्धता केवल स्थलीय भूमि में ही सीमित नहीं है, यह उच्च विविधता और अधिक आर्थिक लाभ वाले समुद्री क्षेत्रों में भी उपलब्ध है। इसी तरह, उन्हें दो शाखाओं- मीठे पानी और खारे-समुद्री पानी शैवाल में वर्गीकृत किया गया है। जैसे-जैसे पारिस्थितिकी तंत्र बदलता है, शैवाल की कार्यप्रणाली और तंत्र भी इससे प्रभावित होते हैं और पारिस्थितिकी पारिस्थितिकी तंत्र में सभी छोटे पैमाने के बदलावों को इस छोटे सूक्ष्मजीव द्वारा पकड़ा जा सकता है।

शैवाल को यूकेरियोटिक (नाभिक-वाले) जीवों के रूप में परिभाषित किया गया है जो पौधों जैसे विशेष बहुकोशिकीय प्रजनन संरचनाओं की कमी के बावजूद भी प्रकाश संश्लेषण करते हैं और उन्हें ऑटोट्रॉफ़ माना जाता है। शैवाल में वास्तविक जड़ों, तनों और पत्तियों का भी अभाव होता है। कुछ विशेषताएं हैं जो वे अवाहिकीय (एवैस्कुलर) निचले पौधों (जैसे, मॉस, लिवरवॉर्ट्स और हॉर्नवॉर्ट्स) के साथ साझा करते हैं। इसके अतिरिक्त, नीले-हरे शैवाल (सायनोबैक्टीरिया) को प्रोकैरियोटिक (नाभिक-रहित) जीवों के अंतर्गत वर्गीकृत किया गया है। शैवाल का आकार सूक्ष्म से मीटर तक होता है, उदाहरण के लिए सूक्ष्म पेडियास्ट्रम, बोट्रीओकोकस, क्लोरेला, माइक्रोसिस्टिस और मैक्रोस्कोपिक मैक्रोसिस्टिस (विशालकाय ब्लैडर केल्प), उल्वा, कोडियम आदि।

शैवाल की वृद्धि सीधे तौर पर प्रणाली में पोषक तत्वों की उपलब्धता और शैवाल की प्रकाश संश्लेषण क्षमता से संबंधित है। पोषक तत्व कृषि भूमि, औद्योगिक अपशिष्ट, सीवेज और प्राकृतिक स्रोतों जैसे कई माध्यम से पारिस्थितिकी प्रणाली में आते हैं। प्राकृतिक स्रोत पृथ्वी पर पुरातन समय से जीव (शैवाल) तक पहुंच रहे हैं, और अपनी कोशिकाओं को सीमित गति से या आवश्यकता के अनुसार बढ़ा रहे हैं, और पारिस्थितिकी तंत्र को बनाए रखने में मदद कर रहे हैं। चूंकि मानवजनित क्रिया कृषि, उद्योग अपशिष्ट और सीवेज से उर्वरकों के रूप में पोषक तत्वों भी प्राकृतिक स्रोतों के साथ एकत्रित हो जाते हैं। जलीय पारिस्थितिकी तंत्र में पोषक तत्वों की लोडिंग हानिकारक अल्गल ब्लूम (एचएबी) की ओर ले जाती है, जिससे प्रणाली में ऑक्सीजन अवरुद्ध हो जाता है व यूट्रोफिकेशन की क्रिया (अतिरिक्त पोषक तत्वों के अधिकता के कारण सरलतम जीव की अतिवृद्धि) को रूप देती है। यद्यपि शैवाल आगामी भविष्य में भोजन, फार्मास्यूटिकल्स, सौंदर्य प्रसाधन, जैव ईंधन और ऊर्जा उद्देश्यों के क्षेत्र में कई भूमिकाएँ निभा सकते हैं। आजकल शैवाल संवर्धन के सिंथेटिक रूप काफी मांग में हैं, जिसे पर्यवेक्षण द्वारा कृत्रिम पोषक तत्व लोडिंग द्वारा बनाया जाता है।

हम सभी तीव्र जलवायु परिवर्तन के युग में रह रहे हैं, शैवाल जलवायु परिवर्तन के क्षेत्र में महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकते हैं और जलवायु परिवर्तन के मुद्दों से लड़ने में इसे एक हथियार के रूप में इस्तेमाल किया जा सकता है। जलवायु परिवर्तन का प्रमुख मुद्दा ग्लोबल वार्मिंग है और इसके पीछे का सबसे बड़ा कारण जो सभी जानते हैं वह है हमारे वातावरण में तेजी से बढ़ रही CO_2। शैवाल अपनी कोशिका की नकल सौ गुना अधिक गति से कर सकते हैं जो अन्य जीवों के लिए यह संभवतः असंभव है।

हम ऑक्सीजन और बायोमास प्रदान करने के लिए, वायुमंडलीय CO_2 को अवशोषण करने के लिए शैवाल की क्षमता का उपयोग कर सकते हैं। यह कार्बनिक कार्बन से बेहद समृद्ध है जो स्थानीय से क्षेत्रीय स्तर पर एक प्रकार के कार्बन पृथक्करण के रूप में काम करेगा। यहां हम हानिकारक शैवाल ब्लूम (Harmful Algal Blooms) से सहायक शैवाल ब्लूम (Helpful Algal Blooms) तक शैवाल के चरणों का प्रदर्शन करेंगे:

आदर्श स्थितियाँ (उपलब्ध नहीं हैं या पहले कभी मौजूद थी): पृथ्वी के इतिहास के शुरुआती समय के दौरान शैवाल ने महत्वपूर्ण भूमिका निभाई, समुद्री क्षेत्रों में ऑक्सीजन प्रदान करने से लेकर क्रेटेशियस समय सीमा के संभावित तेल-युक्त संस्तर प्रदान करने तक। इसके साथ ही शैवाल ने वायुमंडलीय CO_2 को पृथ्वी की सतह में गहराई तक स्थिर कर दिया (भारत में होलोसीन की बोट्रीओकोकस घटना) और चावल की खेती के लिए उपजाऊ भूमि प्रदान की। यह भूमि विश्व में सबसे पहले चावल की खेती होने का एक प्रकार से प्रमाण है जेपीएसआई प्रकाशन खंड 67(1) (आई.बी. सिंह खंड):113-125 देखें।

जैसे-जैसे मानवजनित दबाव बढ़ता है, प्रकृति की क्षमता में गिरावट आती है, अब प्रकृति हमारे द्वारा बनाई गई स्थितियों को संभाल नहीं सकती है। वैज्ञानिक पर्यवेक्षण एवं प्रबंधन की तत्काल आवश्यकता।

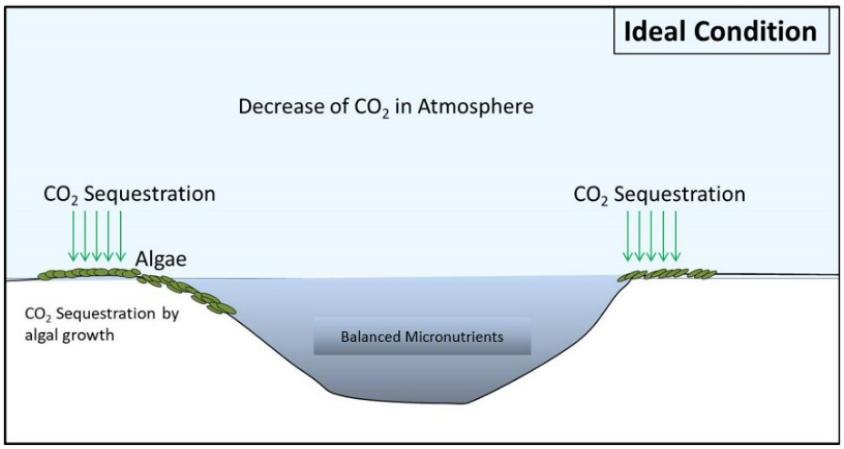

वर्तमान स्थिति (ज्यादातर हर जगह उपलब्ध): जब मनुष्य इस धरती पर आये तो उन्होंने इसे अपनी माँ माना और जो कुछ भी आवश्यक था वह माँगना शुरू कर दिया, इसी तरह भूमि, हवा, पानी, भोजन, वह सब कुछ जो हम धरती माँ से ले रहे थे। लेकिन हमने इसे क्या प्रदान किया। एक प्रदूषित वातावरण, लगातार बढ़ रहा वायुमंडलीय CO_2, और सबसे बड़ा ग्लोबल वार्मिंग है, हमारे कार्यों और उस पर लागू होने वाले दबावों से धरती माता का दम घुट रहा है। प्राकृतिक संसाधनों का निरंतर और तीव्र उपयोग हमें मानव युग के भयावह अंत की ओर ले जा रहा है। जो समय हम पहले ही व्यतीत कर चुके हैं उसे वापस नहीं लाया जा सकता, लेकिन जो हमारे पास शेष रह गया है उसे पुनःस्थापित करने के लिए हम अपना वैज्ञानिक प्रयास जोड़ सकते हैं। वर्तमान मानवीय क्रियाएं हमारे जलीय तंत्र पर भारी दबाव डाल रही हैं, जो हमारे लिए खतरों में बदल रही है। ये पारिस्थितिकी तंत्र न केवल आज के लिए ख़राब हो रहे हैं, बल्कि आने वाले भविष्य के वातावरण के लिए पिछले खतरों बड़ा भयंकर हो रहे हैं।

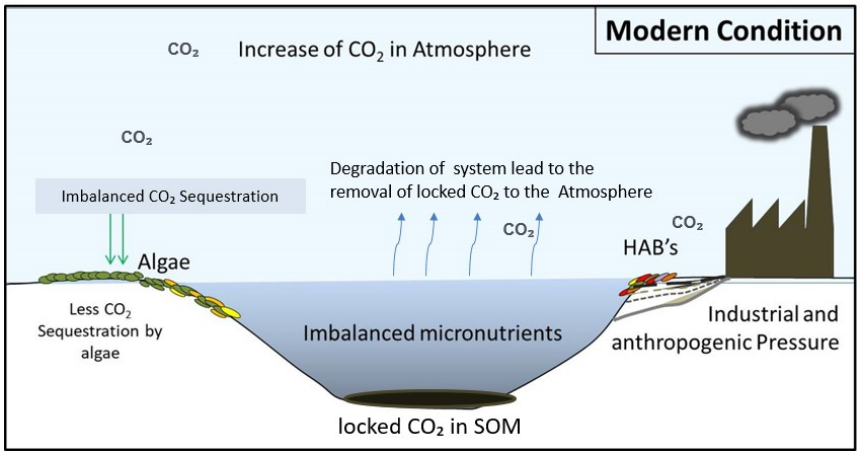

सतत विकास के लिए आवश्यक स्थिति (उपलब्ध नहीं हैं या शायद ही कहीं मौजूद हैं): मानवजनित दबाव हमारे पारिस्थितिक तंत्र का एक अभिन्न अंग बन गए हैं, हम उन्हें जूठला नहीं सकते हैं, और अब समय आ गया है कि हमारे पास जो कुछ भी है उसे बनाए रखा जाए और जलवायु परिवर्तन और बदलते मौसम की घटनाओं के क्षेत्र में सतत विकास के लिए हमारे देश की मदद की जाए। जैसा कि हम पहले ही चर्चा कर चुके हैं कि हमारे जलीय पारिस्थितिकी तंत्र पर अप्रलेखित भार है, जो यूट्रोफिकेशन का कारण बन रहा है और HAB's के विकास के साथ-साथ पारिस्थितिकी तंत्र में उपलब्ध ऑक्सीजन को रोक रहा है। बाहरी स्रोतों से आने वाले तत्वों/पोषक तत्वों की रोकथाम से लिपिड के संदर्भ में शैवाल स्वास्थ्य के आधार पर प्राकृतिक प्रणाली/कृत्रिम सह प्राकृतिक प्रणाली में पोषक तत्व लोडिंग की योजना के साथ-साथ क्षेत्रीय मापदंडों को विकसित करने में मदद मिलेगी। प्रभावित करने वाले कारकों को शुरुवात में ही प्रबंधित किया जा सकता है। औद्योगिक कचरे से आने वाला इनपुट CO_2, NO_3, NH_4, SO_4, PO_4 और भारी मात्रा में भारी धातुओं से समृद्ध होता है। कार्बन, नाइट्रोजन और फास्फोरस प्रमुख बायोजेनिक तत्व हैं और बायोमास उत्पादन के लिए आवश्यक हैं, इनका प्रबंधन करते हुए हम पारिस्थितिकी तंत्र के स्वास्थ्य को सुनिश्चित करने में सक्षम होंगे।

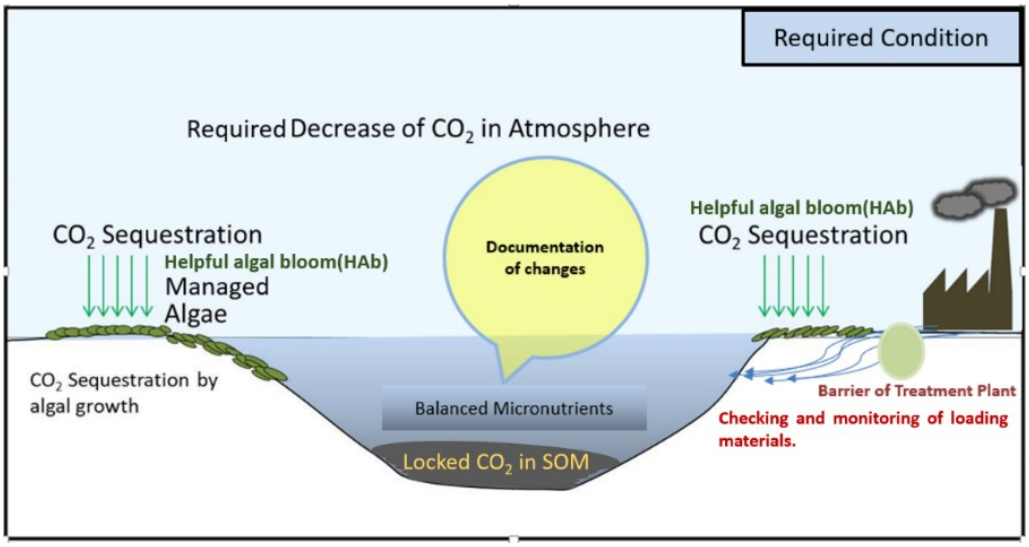

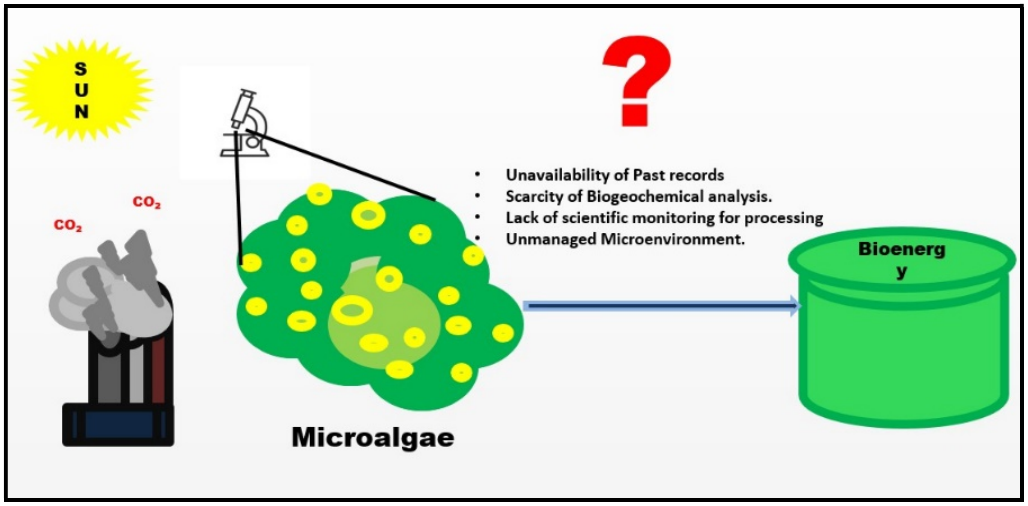

व्यवस्थित रूप से उत्पन्न शैवाल कार्बन पृथक्करण, अपशिष्ट जल उपचार और खाद्य सुरक्षा के लिए एक समाधान हो सकता है, साथ ही यह दुनिया के आगामी भविष्य के तेल संकट का समाधान भी प्रदान करने में सक्षम होगा।

आनंद राजोरिया
शोध छात्र,
रेडियोक्रोनोलॉजी और समस्थानिक लक्षण वर्णन प्रयोगशाला,
बीरबल साहनी पुराविज्ञान संस्थान, लखनऊ

दक्कन के ज्वालामुखी क्षेत्र: भौमिकीय समय में एक आभासी यात्रा

ज्वालामुखी पृथ्वी के भीतर से सतह तक बड़ी मात्रा में पिघली हुई चट्टानों का विस्फोट है। ज्वालामुखी शब्द जिसे अंग्रेजी में 'वोल्केनो' कहा जाता है की उत्पत्ति रोमन अग्नि देवता "वल्कन" के नाम से हुई है। आज भी, ज्वालामुखी सबसे घातक प्राकृतिक आपदाओं में से एक है जो बड़े लावा प्रवाह, विस्फोट, जहरीली गैस के बादल, राख और जंगल में आग के उत्पादन से पृथ्वी पर उपस्थित जीवन को नष्ट करने में सक्षम है। ज्वालामुखी कोई नई घटना नहीं है; वास्तव में, यह चट्टानों के चक्र का एक हिस्सा है और यह हमारी धरती पर निरंतर विविध स्थानों पर घटित होती रहती हैं। पृथ्वी पर अब तक पाँच प्रमुख सामूहिक महाविलुप्ति की घटनाएँ (Mass Extinction events) हो चुकी हैं जिसमे अधिकांश ज्वालामुखी के कारण हुई हैं। उदाहरणार्थ, क्रेटेशियस-पैलियोजीन सामूहिक विलोपन (K-Pg Mass extinction), जो दक्कन के ज्वालामुखी (Deccan Volcanism) के कारण लगभग 6.6 करोड़ साल पहले हुआ हैं ।

दक्कन ज्वालामुखी भारतीय पटल पर हुआ, किंतु इस घटना के दुष्प्रभाव से विश्व स्तर पर जीवन की क्षति हुई । मेसोज़ोइक (Mesozoic) पृथ्वी के दो सबसे प्रमुख जीवन रूप, अमोनोइड्स और डायनासोर के समुदायों को दक्कन ज्वालामुखी द्वारा समाप्त कर दिया गया, जो दक्कन ज्वालामुखी के विनाशकारी प्रभाव का आकलन करने के लिए पर्याप्त है। अन्य जीवीय रूप जो दक्कन ज्वालामुखी से गंभीर रूप से प्रभावित हुए थे उनमें पौधे, मूंगा, मछलियाँ, समुद्री सरीसृप, कीड़े और स्तनधारी शामिल हैं।

दक्कन से संबंधित तलछट मुख्य रूप से मध्य भारत में स्थित हैं और उनका सबसे मोटा जमाव पश्चिमी घाट क्षेत्र में पाया जाता है, जिसकी मोटाई लगभग 400 -1650 मीटर तक होती है। दक्कन ज्वालामुखी मास्ट्रिच्टियन-डेनियन (Maastrichtian-Danian) में हुआ, जिसके कारण के-पीजी समय सीमा से 250 किलो वर्ष पूर्व ही हाइपरथर्मल वार्मिंग, सतही महासागर अम्लीकरण और अशांत वातावरण की स्थिति उत्पन्न हो गई थी। अनुसंधानकर्ताओं द्वारा प्रकाशित सक्ष्यों के आधार पर क्रेटेशियस-पैलियोजीन सामूहिक विलोपन निम्नलिखित तीन चरणों हुआ। इन चरणों का यदि परिकल्पनाओं के आधार पर आभासी यात्रा के रूप में देखा जाए तो निम्नतः होगा-

पूर्व-दक्कन ज्वालामुखी चरण (Pre-Deccan Volcanism Phase)

यदि परिकल्पना के अनुसार प्रारंभिक मास्ट्रिच्टियन का यह परिदृश्य (चित्र 1.) हरे-भरे जंगलों से भरा दिखता है। आवृतबीजी (एंजियोस्पर्म) के सभी प्रमुख समूह इस समय तक पूर्ण रूप से विकसित और विविध हो गए है जिसने जंगलों को चमकीले फूलों और उनके गुलजार परागणकों से सजा दिया है। प्रारंभिक क्रेटेशियस के दौरान एंजियोस्पर्म की उत्पत्ति से पौधे की दुनिया के रंगों में यह बड़ा बदलाव आया है। रंगों में विविधता के अलावा, एंजियोस्पर्म अपने स्वरूप में भी विविध हो चुके हैं, जिसमे जड़ी-बूटियाँ (herb), झाड़ियाँ (shrub) और पेड़ शामिल हैं, जिसके कारण जंगल में अब विभिन्न परतें देखी जा सकती हैं। हालाँकि, इस समय तक एंजियोस्पर्म बहुत विकसित और विविध हो चुके हैं, लेकिन अभी भी जंगलों में अनावृतबीजी (जिम्नोस्पर्म), विशेषकर शंकुधारी पौधों का प्रभुत्व है। जलवायु गर्म और आर्द्र थी और जंगल उप-आर्द्र उष्णकटिबंधीय परिस्थितियों के अनुकूल ही विकसित हो रहे हैं।

इन जंगलों के भीतर, छोटे शाकाहारी डायनासोर देखे जा सकते हैं, जो जमीन पर फैलने वाले फर्न को कुतर रहे हैं। जबकि, विशाल सॉरोपोड जंगलों के बाहरी इलाके में, नर्मदा घाटी के आसपास रह रहे हैं और जंगल के बाहरी इलाके में उगने वाली शंकुधारी सुइयों पर भोजन कर रहे हैं। मांसाहारी डायनासोर भी समान आवासों मे रह रहे हैं और जंगल के अन्य पशु

समुदायों को खा रहे हैं। विशाल शारीरिक संरचना वाले सॉरोपोड्स का आहार विशेष रूप से बड़े शंकुधारी पौधों पर आधारित होता है और उनकी विशाल शारीरिक संरचना जंगल पर गंभीर दुष्प्रभाव डाला रही है जिसके कारण क्लोज्ड कनोपी वाले जंगलों का विकास प्रतिबाधित हो रहा है। इस समय डायनासोर ही केवल जीवित रहने वाले एकमात्र जानवर नहीं थे। इस चरण के दौरान कई अन्य जानवर जैसे, साँप, कछुए, मगरमच्छ, मछलियाँ और स्तनधारी जिन्हे जंगल के विभिन्न स्थानो मे आवास करते देखा जा सकता है लेकिन,पशु समुदाय पर मुख्य रूप से डायनासोर का ही प्रभुत्व हैं, यह भी सच है कि इनका विकास और विविधीकरण अन्य जानवरों की क्षति की कीमत पर होता दिख रहा है।

1.

दक्कन ज्वालामुखी चरण (Deccan Volcanism Phase)

यह एक भयावह द्रश्य है जिसमे पृथ्वी पर संपूर्ण जीवन अशांत स्थिति में है (चित्र 2)। ज्वालामुखी का पहला चरण शुरू हो गया है, और पर्यावरण में भारी मात्रा में लावा और ग्रीनहाउस गैसें फैल रही हैं। बाहर निकलता हुआ लावा परिदृश्य को काफी हद तक बदल रहा है, लावा के माध्यम से झीलों और नदी घाटियों में ग्रीनहाउस गैसें और राख भर गई है जिससे पूरा जीवमंडल अशांति की स्थिति में आ गया है। विशाल आकार के डायनासोर अपनी जान बचाने के लिए भाग रहे हैं जबकि लावा और राख के कारण जंगलों में आग लगा रही है। यह चरण बहुत ही संक्षिप्त अवधि के लिए हुआ जो दक्कन ज्वालामुखी के द्वारा किए गए कुल ज्वालामुखी विस्फोट का 6% ही हैं।

ज्वालामुखी गतिविधि रुक गई है, लेकिन डायनासोर भूखे मर रहे हैं क्योंकि ज्वालामुखी से लगी जंगल की आग के कारण उनका भोजन नष्ट हो गया है, और उनके समुदाय के अधिकांश सदस्य मर गए हैं। डायनासोर के समुदाय का भविष्य खतरे में है क्योंकि इस प्राकृतिक आपदा के कारण उनके अंडे और घोंसले के स्थान भी नष्ट हो गए हैं। अनुकूल पर्यावरणीय परिस्थितियों के आने से पहले ही दक्कन के ज्वालामुखी का दूसरा चरण शुरू हो गया है।

यह चरण और भी घातक है क्योंकि इसमें दक्कन ज्वालामुखी और बड़े स्तर पर हुआ (80%) जिसने विस्तृत भौगोलिक क्षेत्र को आच्छादित किया और जीवन को और अधिक गंभीर रूप से प्रभावित किया। ज्वालामुखी अब बड़ी मात्रा में लावा, CO_2, CH_4, SO_2, HCl जैसी हानिकारक ग्रीनहाउस गैसें और धातु विषाक्तता निकाल रहा है, जो वैश्विक पर्यावरण को असहनीय बना रहा है। इस बार विशाल डायनासोरों के पास खुद को और अपनी संतानों को बचाने के लिए और छिपने की कोई जगह नहीं है परिणामस्वरूप पूरा समुदाय इस आपदा में नष्ट हो गया।

हालाँकि, छोटे आकार के अन्य जानवर प्रजातियाँ इस आपदा से कम प्रभावित हुई और बच गईं। धूल, कालिख और राख दूर-दराज के स्थानों पर जंगल की आग का कारण बन रही हैं। दक्कन ज्वालामुखी विस्फोट का समय तय नहीं है बीच-बीच में कई शांत चरणों होता है। शांत चरण के दौरान वनों की पुरुत्थान बहुत तेजी से हो रहा हैं और भूमि वनों में ढक गई है। पर इस चरण के जंगल पिछले चरण से बहुत अलग हैं। इस चरण के वनों में एंजियोस्पर्म का वर्चस्व है क्योंकि वे तेजी से विकास, बेहतर अनुकूलनशीलता और उन्नत प्रजनन रणनीतियों के कारण जिम्नोस्पर्मों कि अपेक्षा तीव्र गति से प्रसार कर लेते हैं।

सामान्य तौर पर, विरासत वनस्पति (legacy flora) में मौजूद बीज की उपलब्धता के कारण पौधे कम दर पर विलुप्त हुए और बहुत तेजी से पुरुत्थान होने के कारण इस आपदा से बच गए। पादपीय जीवाश्म साक्ष्य हमें विभिन्न पौधों के समुदायों के साथ उपलभ्यता का प्रमाण देते हैं, जो तटीय सेटिंग से लेकर आंतरिक वनस्पतियों तक के परिदृश्यों को दर्शाता हैं, जिसमे मुलतः उष्णकटिबंधीय वन शामिल हैं। अब जंगल घने छत्र वाले हैं जिनके जीवाश्म साक्ष्य मध्य भारत के विभिन्न जीवाश्म पार्कों जैसे डिंडोरी और घुघवा राष्ट्रीय जीवाश्म पार्क में देखे जा सकता है।अंतिम चरण भी बहुत ही संक्षिप्त अवधि के लिए हुआ जिसमे मात्र 14% लावा विस्थापन हुआ। दक्कन ज्वालामुखी ने जीवन हर स्वरूप पर भिन्न-भिन्न प्रभाव डाला, परन्तु यह घातक आपदा डायनासोरों के विलुप्त होने और वनों में एंजियोस्पर्म के वर्चस्व का कारण बना।

दक्कन के बाद का ज्वालामुखी चरण (Post-Deccan Volcanism Phase)

इतनी बड़ी तबाही और भौमिकीय, पारिस्थितिक और जैविक उथल-पुथल के बाद अब दुनिया खामोश है (चित्र 3)। दक्कन ज्वालामुखी के बाद जीवन में सुधार आ रहा है, जिसके कारण एक बहुत ही अलग दुनिया उभर कर सामने आ रही है। यह डायनासोर-रहित दुनिया, अब अन्य जानवरों के विकसित और विविध होने के लिए अवसर उपलब्ध है। जीव-जंतु और जंगल आज के जंगलों की तरह ही दिखने लगे हैं। ये नव विकसित बंद छत्र वाले सदाबहार उष्णकटिबंधीय वर्षा वन सतही तौर पर उन जंगलों के समान दिखते हैं जिन्हें हम आज के पश्चिमी घाटों में देखते हैं क्योंकि दोनो में पारिवारिक स्तर पर समान वनस्पतियों का

गठन देखा जा सकता है। इस चरण के दौरान एंजियोस्पर्म पौधों ने जंगल के बुनियादी ढांचे का निर्माण किया, छत्र का निर्माण किया और जानवरों के लिए भोजन और आश्रय प्रदान किया। अनुकूल वातावरण मे उपस्थित नए आवास वनस्पतियों और जीवो को बढ़ने, विकसित होने और विविधता लाने के पर्याप्त अवसर दे रहे है। अंततः, जमीन पर रहने वाले पक्षी, बाद में हमारे गाने वाले पक्षी बन जाएंगे और स्तनधारियों की एक शाखा मनुष्य रूप में विकसित हो जाएगी। यदि दक्कन ज्वालामुखी न होता, तो संभवतः डायनासोर अभी भी पृथ्वी पर शासन करते और हमारा (मानव का) अस्तित्व ही ना होते ।

श्रेया मिश्रा
विज्ञानी 'सी'
बीरबल साहनी पुराविज्ञान संस्थान, लखनऊ

समसामयिक लेख

"नदी जोड़ो परियोजना": एक विश्लेषण

किसी भी राष्ट्र के विकास में वहां बहने वाली सदानीरा नदियों की विशिष्ट भूमिका होती है। जो राष्ट्र नदियों के जल से अधिक संपन्न है वहां कृषि तथा अन्य क्षेत्रों का भरपूर विकास होता है। ये जीवनदायिनी नदियाँ सदानीरा बनी रहे इस हेतु नदियों को जोड़ने की परियोजना पर विस्तृत कार्य योजना बनाई जा रही है तथा कुछ पर कार्य भी तीव्र गति से चल रहा है। प्रस्तुत लेख में नदी जोड़ो परियोजना की विकास यात्रा के वर्णन के साथ-साथ इस संदर्भ में चुनौतियों की भी चर्चा की गई है। नदियों को जोड़ने की इस महत्वाकांक्षी परियोजना के पर्यावरणीय प्रभावों पर का भी विश्लेषण इस लेख में किया गया है।

नदियाँ सभ्यताओं की जननी हैं, दुनिया की अनेक महानतम सभ्यताओं के बीज विभिन्न नदियों के किनारे ही पल्लवित होकर वृक्ष बने हैं। इस क्रम में सिधु नदी के किनारे सिधु घाटी सभ्यता एवं नील नदी के किनारे मिस्र की सभ्यता का उदाहरण विशेष अवलोकनीय है। इन नदियों ने न केवल सभ्यताओं को जना है बल्कि उनका पालन पोषण भी किया है। नदियों की इन्हीं विशेषताओं के कारण हम दुनिया के अकेले ऐसे देश हैं जो नदी को माता कहकर उसकी पूजा करते हैं।

भारत एक बहु-सांस्कृतिक विविधता वाला विशिष्ट राष्ट्र है। भारत की यह विविधता भौगोलिक क्षेत्र में भी विद्यमान है, यहां उत्तर में एक ओर विशालकाय हिमालय की पर्वत श्रृंखलाएं हैं तो दक्षिण में अथाह जल राशि लिए समुद्री सीमाएं। मौसम की विविधता भी यहां विशेष दस्तावेज़ है जिसके अंतर्गत दक्षिणी भूभाग पर वर्ष भर गर्मी और उत्तर के हिमालय क्षेत्र में वर्ष भर सर्दी का मौसम रहता है। भारत के उत्तर में स्थित हिमालय की विविध पर्वतमालाएं अनेक नदियों का उद्गम स्रोत भी हैं। जिनके उद्गम से निकलने वाला जल वर्षा जल का संचयन करते हुए अनेक नदियों को वर्ष भर जलवाहिनी बनाये रहता है। उत्तरी क्षेत्र की प्रमुख नदियों में गंगा एवं ब्रह्मपुत्र अपनी सहायक नदियों के साथ एक ऐसा जलतंत्र विकसित करती हैं जिसने समूचे संलग्न भूभाग को कृषि कार्य एवं अन्य आवश्यकताओं हेतु भरपूर मात्रा में जल प्रदान किया हुआ है।

एक ओर जहां हिमालय से निकलने वाली नदियों में वर्ष भर जल भरपूर मात्रा में बना रहता है और वर्षा के आने पर यह नदियां अतिरिक्त जलराशि से विकराल रूप धारण कर अपनी परिधि में रहने वाले नागरिकों के जीवन को दुष्प्रभावित भी करती हैं। पूर्वोत्तर भारत मे ब्रह्मपुत्र और उत्तरी भाग में गंगा व कोसी नदी के जलस्तर में अत्यधिक वृद्धि के कारण विनाशलीला की खबरों से हम सभी परिचित हैं। ग्रीष्मकालीन मानसून में 85 प्रतिशत से अधिक वर्षा होती है। लंबे समय तक शुष्क दौर और मौसमी एवं वार्षिक वर्षा में उतार-चढ़ाव के कारण वर्षा की अनिश्चितता देश के लिए एक गंभीर समस्या है।

हरियाणा, महाराष्ट्र, आंध्र प्रदेश, राजस्थान, गुजरात, मध्य प्रदेश, कर्नाटक और तमिलनाडु के बड़े हिस्सों में न केवल वर्षा की कमी है, बल्कि भारी विविधता भी है, जिसके परिणामस्वरूप बार-बार सूखा पड़ता है या बाढ़ का सामना करना पड़ता है जिससे राष्ट्र एवम आबादी को भारी कठिनाई और नुकसान होता है। यह विडंबना ही है कि एक ओर जहां इन नदियों की बाढ़ के कारण एक क्षेत्र विशेष में विनाश लीला हो रही होती है वहीं दूसरी ओर भारत के अनेक विभाग पानी की कमी के चलते सूखाग्रस्त होकर संकट से जूझ रहे होते हैं।

ऐसे में उत्तरी भाग जहां जल के अतिरिक्त से ग्रस्त होता है वहीं प्रायद्वीपीय भारत में नदियों के जल के सूखने से अनेक तरह का संकट खड़ा हो जाता है। दरअसल, हमारे देश में गर्मियों का मौसम अभी आया नहीं होता, लेकिन पानी की उपलब्धता को

लेकर योजनाएँ बनने लगती हैं और चिंता जताई जाने लगती हैं। ऐसा हर साल देखने को मिलता है। देश में छोटी -बड़ी नदियों, झीलों और तालाबों आदि में पानी की असमान उपलब्धता की वज़ह से यह समस्या उत्पन्न होती है और इसके एक संभावित समाधान ने नदियों को आपस में जोड़ने की अवधारणा को जन्म दिया है। ऐसे में "नदी जोड़ो परियोजना" आशा की एक राह दिखाती है जिसके माध्यम से पानी की अधिकता वाली नदियों में से पानी लेकर पानी की कमी वाली नदियों में भेजा जा सकता है। इस परियोजना के माध्यम से उत्तरी भारत एवं प्रायद्वीपीय भारत की विभिन्न नदियों को आपस में जोड़कर अतिरिक्त जल राशि वाले क्षेत्र से जल को सूखाग्रस्त क्षेत्रों में भेज कर संतुलन बनाए रखा जा सकता है।

भारत में नदियों को आपस में जोड़ने का विचार पहली बार 1858 में मद्रास प्रेसीडेंसी के मुख्य अभियंता सर आर्थर थॉमसकॉटन द्वारा रखा गया था। इस परियोजना के माध्यम से उनका उद्देश्य ईस्ट इंडिया कंपनी को बंदरगाहों की सुविधा प्राप्त कराना और दक्षिण-पूर्वी प्रांतों में बार-बार आने वाले सूखे से निपटना था। सर आर्थर के इस विचार के बाद लंबे समय तक इस परियोजना पर कोई भी प्रगति नहीं हो सकी। स्वतंत्र भारत में सबसे पहले वर्ष 1960 में तत्कालीन केंद्रीय ऊर्जा और सिंचाई राज्यमंत्री के. एल. राव ने गंगा और कावेरी नदियों को जोड़ने का प्रस्ताव रखा था, जिसके बाद नदी जोड़ो अभियान को बल मिला। लंबे समय के बाद 80 के दशक में राष्ट्रीय नदी जोड़ो परियोजना (एनपीपी) को अगस्त 1970 में तत्कालीन सिंचाई मंत्रालय ने तैयार किया था। इस परियोजना का उद्देश्य पानी के अंतर बेसिन हस्तांतरण के ज़रिए जल संसाधन विकास करना था। एनपीपी के तहत, राष्ट्रीय जल विकास एजेंसी (एनडब्ल्यूडीए) ने व्यवहार्यता रिपोर्ट तैयार करने के लिए 30 लिंक (प्रायद्वीपीय घटक के तहत 16 और हिमालयी घटक के तहत 14) की पहचान की है। हालांकि इसके बावजूद इस दिशा में कोई ठोस कदम नही उठाये जा सके। वर्ष 1999 में राष्ट्रीय जनतांत्रिक गठबंधन सरकार बनने के बाद इस परियोजना को फिर से शुरू किया गया लेकिन इस दिशा में आशातीत कार्य नहीं हो सका।

वर्ष 2002 में भारत के सर्वोच्च न्यायालय ने भारत सरकार के नदी जोड़ो परियोजना को अगले 12-15 वर्षों में पूरा करने का आदेश दिया। इसके बाद केंद्र की यूपीए सरकार के दोनों कार्यकाल में भी इस दिशा में कोई ठोस कदम नहीं उठाया जा सका उस समय के तत्कालीन पर्यावरण मंत्री ने भी इस योजना को विनाशक बताया था। फरवरी 2012 में सुप्रीम कोर्ट ने अपने एक निर्णय में नदी जोड़ो अभियान की दिशा में महत्वपूर्ण निर्णय देते हुए इस संदर्भ में एक विशेष कमेटी बनाये जाने का आदेश दिया। तदुपरांत केंद्र में राष्ट्रीय जनतांत्रिक गठबंधन की सरकार बनने के बाद नदी जोड़ो अभियान की दिशा में महत्वपूर्ण प्रयास किए गए।

भारत सरकार ने सितंबर 2014 में जल संसाधन नदी विकास और गंगा सफाई मंत्रालय के अंतर्गत एक विशेष समिति का गठन इस हेतु किया था तथा अप्रैल 2015 में एक स्वतंत्र कार्य बल भी नदियों को जोड़ने के लिए गठित किया गया। नदियों को जोड़ने के लिए अब तक की हुई प्रगति में अनेक कार्य योजनाएं बनाई गई हैं। देश की विभिन्न नदियों को आपस में जोड़े जाने की संभावनाओं पर गंभीरता पूर्वक विचार किया गया है, अनेक ऐसे कॉरिडोर चिन्हित किए गए हैं जिनके माध्यम से नदियों को जोड़कर जल संतुलन स्थापित किया जा सकता है।

इस अनुक्रम में सर्वाधिक चर्चा में आंध्र प्रदेश की गोदावरी-कृष्णा लिंक परियोजना और मध्य प्रदेश की केन-बेतवा लिंक परियोजना रही है जिस पर पर्याप्त कार्य अब तक हो चुका है। मध्य प्रदेश सरकार एवं उत्तर प्रदेश सरकार के साथ-साथ भारत सरकार ने इस दिशा में अनेक समझौते पर हस्ताक्षर किए हैं तथा इस हेतु बजट का आवंटन भी किया जा चुका है। नदियों को जोड़ने की यह परियोजना काफी महत्वाकांक्षी परियोजना है जिसके अंतर्गत बुंदेलखंड के विभिन्न सूखाग्रस्त क्षेत्रों को जल पहुंचाया जा सकेगा। भारत में विभिन्न नदियों को जोड़ने की प्रस्तावित कार्य योजना को हम चित्र 1 के माध्यम से समझ सकते हैं।

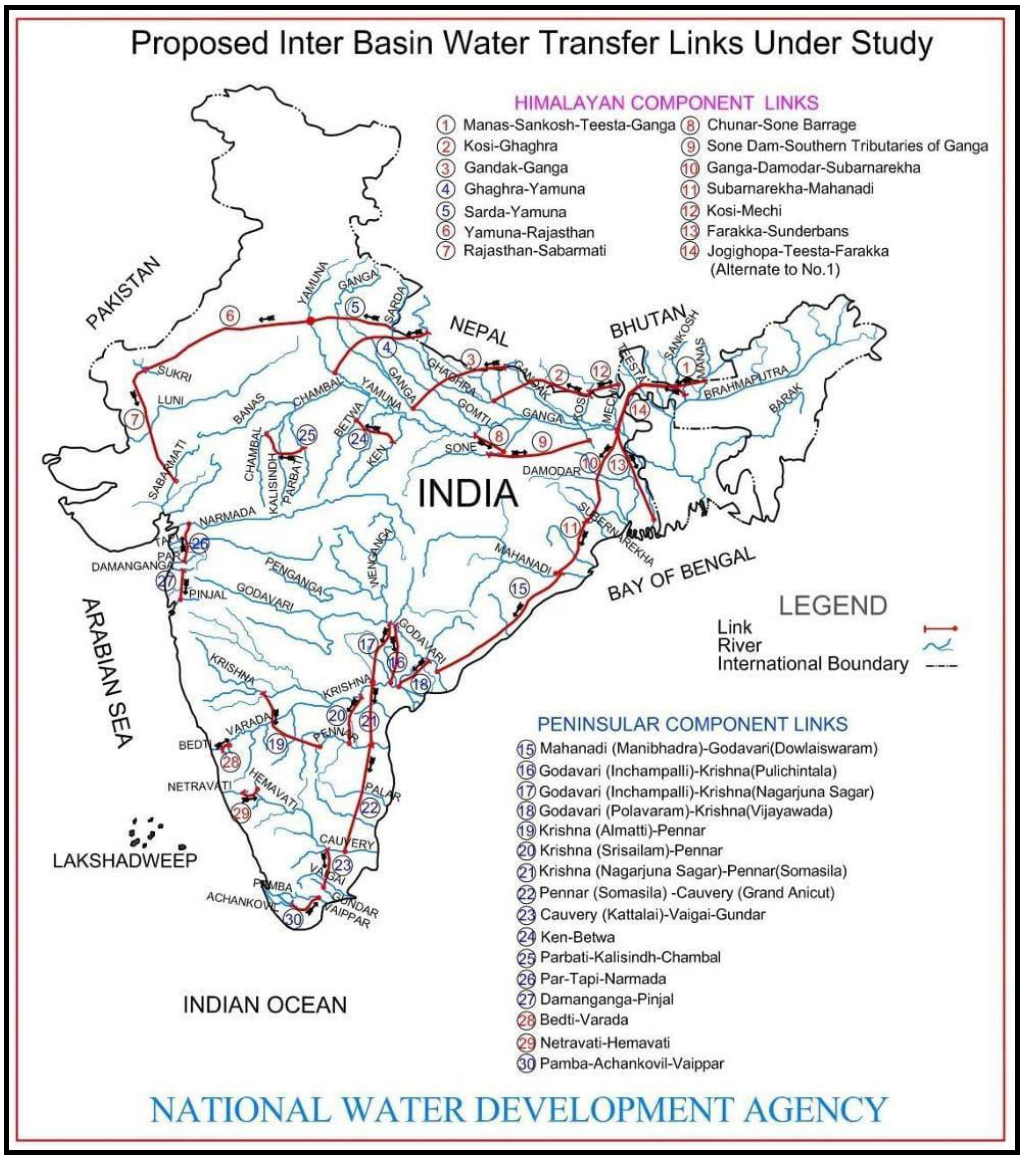

चित्र 1: *उपरोक्त भारतीय मानचित्र हिमालयी और प्रायद्वीपीय घटक लिक के तहत नदियों के प्रस्तावित इंटरलिकिग को दर्शा रहा है।*
(https://nwda.gov.in/content/leftpage/ilr-related-matters.php).

विश्व में अंतर बेसिन जल अंतरण की स्थिति

विश्वस्तर पर भी बड़े पैमाने में जल अंतरण योजनाओं का सृजन कर, कार्यान्वित किया गया है। इनमें से कुछ महत्वपूर्ण योजनाएं जैसे चीन की यंग्तीज़् नदी पर दक्षिण-उत्तरी जल अन्तरण परियोजना, स्पेन की तेगस-सेगुरा जल अन्तरण परियोजना, दक्षिण अफ्रिका की लेसोथो हाइलैंड्स जल अन्तरण परियोजना और अमेरिका की कैलिफोर्निया राज्य जल परियोजना शामिल है। चीन की महत्वाकांक्षी दक्षिण-उत्तरी जल अंतरण परियोजना के अंतरगत यांगतीज नदी बेसिन से जल का अंतरण पीली नदी बेसिन में होना है। चीन की ये परियोजना कई मामले में अत्यंत महत्वपूर्ण इसलिए भी है की इस परियोजना के माध्यम से चीन, देश का दो-तिहाई जल दक्षिण से उत्तर की ओर भेजना चाहता है जहाँ चीन की कुल आधी आबादी रहती है तथा 65 प्रतिशत भूमि कृषि के कार्य में व्यस्त है।

स्पेन के टेगस सेगुरा परियोजना सन 1978 में शुरू हुई जिसमे स्पेन की चार नदियों को जोड़ा गया है। हालांकि इस

परियोजना से दक्षिणी पूर्वी स्पेन में 1.7 लाख हेक्टेयर भूमि सिचाई के अधीन हुई तथा 76 नगर निगमों में पेय जल की सुविधा प्रदान की गयी, किन्तु इस परियोजना से टेगस नदी के जल बहाव व् पारिस्थितिकी तंत्र में काफी कमी आयी है। ऐसे ही विश्व के अन्य देशों में भी जल अंतरण परियोजनाओं का सृजन हो रहा है जिससे मानव कल्याण को ध्यान में रखते हुए बनाया जा रहा है फिर भी इन परियोजनाओं से प्रकृति पर होने वाले दुष्प्रभाव को भी ध्यान में रखा जा ना चाहिए जिससे आगामी योजनाओं को टिकाऊ एवं पर्यावरण के अनुकूल बनाया जा सके।

नदियों को आपस में जोड़ने के लाभ

यदि प्रस्तावित कार्य योजनाओं को अंतिम रूप प्रदान कर भारत में विभिन्न नदियों को जोड़ने का कार्य कर लिया जाता है तो इसके अनेक लाभ होंगे। कुछ नदी घाटियों में पानी "अधिशेष" है जबकि अन्य में "कमी" है, और यह परियोजना पहले से दूसरे में पानी स्थानांतरित करेगी। भारत के अनेक भूभाग ऐसे हैं जो जल संकट से ग्रस्त हैं यदि नदियों को जोड़कर वहां जल पहुंचाया जा सकता है तो उसे न केवल वहां पीने के पानी की समस्या दूर होगी बल्कि कृषि कार्य हेतु भी जल की उपलब्धता उसे क्षेत्र विशेष की अनेक समस्याओं को दूर करने हेतु सक्षम होगी। सिचाई के साथ -साथ मत्स्य पालन एवं उद्योगों हेतु भी जल की उपलब्धता उस क्षेत्र के विकास को नवीन आधार प्रदान करेंगे। जल की पर्याप्त उपलब्धता, क्षेत्र में वनीकरण को बढ़ावा देगी जिससे पारिस्थितिकी संतुलन में भी सहायता मिलेगी। इसके साथ-साथ उस क्षेत्र में आर्थिक संपन्नता भी आएगी जिससे वहां के लोग न केवल रोजगार से जुड़ेंगे बल्कि पलायन की समस्या पर भी नियंत्रण किया जा सकेगा। नहरों से जोड़कर जल पहुंच जाने के कारण वहां नौवहन के माध्यम से परिवहन लागत को भी सीमित किया जा सकता है। ऐसे भौगोलिक क्षेत्र जो जल की अल्पता के कारण उपेक्षित हैं, जल की उपलब्धता वहां पर्यटकों को भी आकर्षित करेगी जिससे वे वहां के स्थानीय पर्यटन का लाभ उठा सकेंगे जो की उस क्षेत्र विशेष की अर्थव्यवस्था को सुदृढ़ करेगा।

इसके साथ-साथ जब अधिशेष जल को दूसरे क्षेत्रों में स्थानांतरित किया जाएगा तो ऐसे में वर्षा के जल की अधिकता के कारण ऐसे क्षेत्र जहां बाढ़ की समस्या आती है उन्हें इससे बचने में सहायता मिलेगी। नदियों के किनारे बने अनेक स्थानीय आवास इसलिए भी सुव्यवस्थित नहीं बनाए जाते क्योंकि वर्षा के मौसम में बाढ़ में उनके बह जाने की आशंका रहती है यदि उस क्षेत्र में बाढ़ को नियंत्रित किया जा सकेगा तो वहां के निवासियों को एक संतुलित जीवनचर्या में ढाला जा सकेगा।अंतर बेसिन जल अंतरण की आवश्यकता जल की उपयोगिता बढ़ाने एवं अधिशेष क्षेत्रों में जल की बर्बादी को कम करने में मददगार सिद्ध हो सकते हैं।

यह उम्मीद की जाती है कि उचित रूप से नियोजित जल संसाधन विकास और प्रबंधन गरीबी को कम कर सकता है, जीवन की गुणवत्ता में सुधार कर सकता है और क्षेत्रीय असमानताओं को कम कर सकता है , कानून और व्यवस्था की स्थिति बेहतर कर सकता है और प्राकृतिक पर्यावरण की अखंडता का प्रबंधन कर सकता है।

चुनौतियां

नदी जोड़ो परियोजना को एक अति महत्वाकांक्षी परियोजना के रूप में देखा जा रहा है वही दूसरी ओर इस परियोजना के समक्ष अनेक प्रकार की चुनौतियां भी हैं जिनके कारण इस दिशा में अब तक आशातीत प्रयास नहीं हो पाए हैं। इस परियोजना को कार्य रूप प्रदान करने के लिए आने वाली आर्थिक लागत काफी अधिक है जिसके कारण सरकारों को इस दिशा में काम करने के लिए विशेष आर्थिक स्रोत तलाशने होंगे। यह परियोजना अर्थ की दृष्टि से काफी खर्चीली है। भारत जैसे विकासशील देश के लिए इस लागत का वहनकर पाना चुनौती पूर्ण है। वहीं दूसरी ओर इस परियोजना को अंजाम तक पहुंचाने के लिए अनेक पर्यावरणीय चुनौतियों से भी निपटना आसान नहीं होगा। नदिया जब अपने प्राकृतिक स्वरूप में बहती हैं तो वह एक तंत्र का निर्मा ण करती हैं

जो उसे समूचे क्षेत्र में एक संतुलन साधता है। यदि नदियों के प्राकृतिक प्रवाह के साथ छेड़छाड़ की गई तो उस क्षेत्र विशेष में प्राकृतिक असंतुलन उत्पन्न होने की आशंका हो सकती है जिससे समस्याएं उत्पन्न हो सकती हैं। नदियों के किनारे जैव विविधता की स्पष्ट झलक हमें दिखाई पड़ती है, यदि हम उनके स्वरूप को परिवर्तित करने की कोशिश करेंगे तो यह स्थिति जैव विविधता हेतु भी घातक सिद्ध हो सकती है।

नदियों को जोड़ने की परियोजना को पूरा करने के लिए सैकड़ो किलोमीटर नहरे बनाए जाने की आवश्यकता पड़ेगी जिसके लिए मार्ग में आने वाले क्षेत्रों में लोगों को विस्थापित किए जाने की आवश्यकता होगी। विस्थापन सदैव अनेक समस्याओं को जन्म देता है जिससे स्थानीय संस्कृति भी प्रभावित होती है। पर्यावरण के क्षेत्र में कार्य करने वाले अनेक विशेषज्ञ इन परियोजनाओं के पक्ष में खड़े होते दिखाई नहीं देते हैं और इस संदर्भ में उनका तर्क है कि यदि हम प्रकृति के मूल स्वरूप को परिवर्तित करने की कोशिश करेंगे तो यह पारिस्थितिकी असंतुलन उत्पन्न करेगा जिसके परिणाम स्वरूप अनेक विनाशकारी प्रभाव भी हमें झेलने पड़ सकते हैं। नदियों को जोड़ने के और भी कई पर्याव रणीय प्रभाव होंगे जिनमें भूमि और जंगलों का जलमग्न होना, नदियों का विनाश, जलीय और स्थलीय जैव विविधता, डाउनस्ट्रीम प्रभाव, मत्स्य पालन का विनाश, लवणता का प्रवेश, प्रदूषण एकाग्रता, भूजल पुनर्भरण का विनाश और मीथेन में वृद्धि शामिल है। एक विषैली नदी को एक गैर विषैले नदी से जोड़ने से हमारी सभी नदियों पर और परिणामस्वरूप, सभी मनुष्यों और वन्य जीवन पर विनाशकारी प्रभाव पड़ेगा। भारत संवैधानिक रूप से एक संघीय राष्ट्र है जहां शक्तिशाली केंद्र के साथ-साथ विभिन्न राज्यों की सरकारों के साथ तादात्म्य में बिठा पाना आसान नहीं होगा ऐसे में आवश्यकता यह भी होगी कि इस परियोजना से प्रभावित होने वाले विभिन्न राज्य आपसी सहमति के आधार पर इस दिशा में आगे बढ़कर कार्य करें। हम अब तक बेसिन के भीतर के राज्यों को बिना किसी विवाद के नदी जल साझा करने के लिए मनाने में उल्लेखनीय रूप से सफल नहीं हुए हैं। बेसिन के संसाधनों के बेहतर, अधिक किफायती और अधिक सहकारी प्रबंधन के माध्यम से ऐसे अंतर-बेसिन विवादों को हल करने के बजाय, क्या हमें दूसरे और अधिक दूर के बेसिन से पानी लाने का प्रयास करना चाहिए। उदाहरण के लिए, यह मानते हुए कि तमिलनाडु और कर्नाटक के बीच कावेरी विवाद कावेरी में बंटवारे के लिए पानी की वास्तविक कमी के कारण उत्पन्न हुआ है और इसे सुवर्णरेखा, महानदी, गोदावरी, कृष्णा और पेन्नार के माध्यम से गंगा से पानी लाकर हल किया जा सकता है या इससे समस्या पैदा हो सकती है। यदा कदा राजनीतिक सर्वसम्मति का अभाव इस परियोजना को पूरी तरह विफल बना देगा।

भविष्य का दृष्टिकोण

नदी जोड़ो परियोजना भारत जैसे भौगोलिक विविधता वाले राष्ट्र की जल संबंधी समस्याओं के निराकरण हेतु आशा की किरण अवश्य दिखलाता है किंतु इस दिशा में चुनौतियां भी बहुत हैं जिन पर मिशन मोड में कार्य करके इस दिशा में सुचारू कदम उठाए जा सकते हैं। इस दिशा में यह भी आवश्यक है कि इस बात पर गहनता से विचार किया जाए कि किन नदियों को जोड़ने से प्राकृतिक असंतुलन की स्थिति पैदा नहीं होगी और वह परियोजना दोनों क्षेत्र जहां से नदी को डायवर्ट किया जा रहा है वहां और दूसरा जहां से लिक किया जा रहा है वहां रहने वाले नागरिकों के हितों की रक्षा की जाए। वैज्ञानिकों को यह भी संदेह है कि नदी का मोड़ तलछट भार, नदी आकृतिविज्ञान और नदी बेसिन में बने डेल्टा के आकारकी भौतिक और रासायनिक संरचना में महत्वपूर्ण परिवर्तन ला सकता है। चूंकि यह परियोजना बड़े पैमाने पर अनुमानित लागत वाली है, इसलिए ऐसे प्रस्तावों के लिए उचित परिश्रम के मानक को पूरा करने के लिए दीर्घकालिक योजना और एक मजबूत वित्तीय सिमुलेशन की आवश्यकता होती है। भारी व्यय संभवतः राजकोषीय समस्याएं उत्पन्न कर सकता है जिन्हें संभालना मुश्किल होगा। बांधों, नहरों, सुरंगों और कैप्टिव बिजली उत्पादन की रखरखाव लागत और भौतिक स्थिति में भी भारी वित्तीय बोझ शामिल होगा। नदियों को आपस में जोड़ने की चर्चा में घरेलू और क्षेत्रीय भू-राजनीति महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। कुछ महत्वपूर्ण संस्थागत और कानूनी मुद्दे भी होते है जिन्हें आपसी

बातचीत और सामंजस्य से सुलझाया जाना चाहिए। जल की आपूर्ति के लिए नदियों को जोड़ना निश्चय ही एक अच्छा समाधान है किन्तु यह जुड़ाव टोही सर्वेक्षण एवं विस्तृत अध्यन से होना चाहिए जिससे पर्यावरण या जलीय जीवन को कोई भी क्षति न हो।

संदर्भ –

1. ए.के. सिह (2003), भारत में नदियों का अंतर्योजन: एक प्रारंभिक मूल्यांकन, नई दिल्ली।
2. कोशी और कानेकल, सुप्रीम कोर्ट ने नदियों को आपस में जोड़ने के एनडीए के सपने को पुनर्जीवित किया लाइवमिट और द वॉलस्ट्रीटजर्नल (28 फरवरी 2012)
3. जल संसाधन मंत्रालय। राष्ट्रीय जल नीति-2012. स्रोत:http://mowr.gov. in/policies-guideline/policies/ national-water-policy
4. वैद्यनाथन ए. 2003. नदियों को आपस में जोड़ना-I, द हिंदू न्यूज़।
5. मेहताडी, मेहताएनके। भारत में नदियों को आपस में जोड़ना: मुद्दे और चुनौतियाँ। जियो -इको-मरीना। 2013;19:137-143. आईएसएसएन: 1224-6808
6. प्रेस ट्रस्ट ऑफ इंडिया. बिहार ने महत्वाकांक्षी नदी जोड़ो परियोजनाएँ शुरू कीं। द हिंदू न्यूज़. 2011. स्रोत: https://www.thehindu.com/news/national/other-states/bihar-launchesambitious-river-linking projects/ article2073483.ece
7. शाह टी., सिघेयू.ए., मैकऑर्निकपी.जी., (2007), इंडियाज़रिवर-लिकिगप्रोजेक्ट: द स्टेट ऑफ़ द डिबेट" ड्राफ्ट। भारत की राष्ट्रीय नदी-जोड़ परियोजना, कोलंबो, श्रीलंका के रणनीतिक विश्लेषण पर IWMI-CPWF परियोजना: अंतर्राष्ट्रीय जल प्रबंधन संस्थान
8. वर्गीस बी.जी., (2003), नदियों को जोड़ने पर अतिरंजित भय। सितंबर 2003. स्रोत:http://www.himalmag.com/2003/
9. वर्गीस बी.जी., (1990), वाटर्स ऑफ होप: एक अरब लोगों के लिए हिमालय-गंगा विकास और सहयोग। नई दिल्ली: ऑक्सफोर्ड और आईबीएच पब्लिशिग हाउस।

अरविद कुमार सिह
विज्ञानी 'डी'
बीरबल साहनी पुराविज्ञान संस्थान, लखनऊ

मञ्जुल त्रिवेदी
असिस्टेंट प्रोफेसर
शिक्षाशास्त्र विभाग
बी. एस. एन. वी. पी. जी. कालेज, लखनऊ

आदित्य आभा सिह
असिस्टेंट प्रोफेसर
वनस्पति विज्ञान विभाग
लखनऊ विश्वविद्यालय, लखनऊ

अल-नीनो-दक्षिणी दोलन (ईएनएसओ-ENSO) और हिंद महासागर द्रोणी (आईओबी-IOB) का भारतीय मानसून पर प्रभाव

आम तौर पर, पश्चिमी भूमध्यरेखीय प्रशांत महासागर में गर्म समुद्री सतह का तापमान और अपेक्षाकृत मोटी थर्मोक्लाइन पूर्व से पश्चिम प्रशांत तक क्षेत्रीय परिवहन को प्रेरित करने वाली व्यापारिक हवाओं के का रण होती है। व्यापारिक हवाओं के तेज़ होने पर पश्चिमी भूमध्यरेखीय प्रशांत महासागर में समुद्र की सतह का तापमान बढ़ जाता है और मोटी मिश्रित जलीय परतें बन जाती है, इसके विपरीत पूर्वी भूमध्यरेखीय प्रशांत महासागर में समुद्र की सतह का तापमान कम हो जाता है और पतली मिश्रित जलीय परतें बनती हैं। परिणामस्वरूप, एशियाई भूभाग पर अधिक वर्षा और दक्षिण अमेरिका में सूखे की स्थिति को ला-नीना स्थिति के रूप में जाना जाता है। लगभग 3-5 वर्षों के बाद स्थितियां उलट जाती हैं (पूर्वी भूमध्यरेखीय प्रशांत महासागर और पश्चिमी भूमध्यरेखीय प्रशांत महासागर) जिसे अल-नीनो दक्षिणी दोलन (ईएनएसओ-ENSO) के रूप में जाना जाता है। यह अंतर-वार्षिक समय-सीमाओं में अप्रत्याशित उतार-चढ़ाव के साथ प्राकृतिक जलवायु परिवर्तनशीलता का प्राथमिक तरीका है। ईएनएसओ महासागरीय प्रवेश द्वार और वायुमंडलीय सेतु के माध्यम से हिद महासागर परिसंचरण को प्रभावित करता है। दक्षिण पूर्व हिद महासागर ईएनएसओ और ला-नीना के दौरान एक प्रतिचक्रवात और चक्रवाती स्थितियों का अनुभव करता है। वायुमंडलीय समुद्री जलवायु घटनाएं पश्चिमी हिद महासागर की समुद्री सतह के तापमान परिवर्तनशीलता को प्रभावित करती हैं जिसे हिद महासागर बेसिन मोड (आईओबी-IOB) के रूप में जाना जाता है। उष्णकटिबंधीय हिद महासागर का गर्म होना, ईएनएसओ प्रेरित पश्चिम की ओर फैलने वाली रॉस्बी लहर पर भी निर्भर करता है। ईएनएसओ और आईओबी के बीच दशकों की समय-सीमा और ग्लोबल वार्मिंग परिदृश्यों के तहत अलग-अलग संबंध हैं। ला-नीना घटना के दौरान इंडोनेशियाई प्रवाह (ITF) के माध्यम से मजबूत होता है, जिससे समुद्र के स्तर और गर्मी की मात्रा में विसंगति बढ़ जाती है और लीउविन करंट मजबूत हो जाता है, जिससे ध्रुव की ओर तापीय परिवहन अधिक मजबूत हो जाता है। आईटीएफ और प्रशांत से हिद महासागर में गर्मी का स्थानांतरण ईएनएसओ और हिद महासागर द्विध्रुव (आईओडी) दोनों से प्रभावित होता है। हालाँकि, आईओडी का प्रभाव, समवर्ती ईएनएसओ और आईओडी एपिसोड के दौरान प्रबल होता है। मॉडल सिमुलेशन से पता चलता है कि ईएनएसओ अंतर-वार्षिक समय पैमाने पर आईओडी की परिवर्तनशीलता को बढ़ा सकता है। ईएनएसओ का पश्चिमी ध्रुव की तुलना में पूर्वी ध्रुव में आईओडी की तीव्रता पर अधिक महत्वपूर्ण प्रभाव पड़ता है, और यह सकारात्मक चरण की तुलना में नकारात्मक आईओडी चरण में अधिक स्पष्ट होता है। सकारात्मक/नकारात्मक आईओडी घटनाओं या अल-नीनो/ला-नीना वर्षों में भारतीय ग्रीष्मकालीन मानसून गुण सममित नहीं होते हैं। दरअसल, ला-नीना और नकारात्मक आईओडी वाले वर्षों में, गर्मियों में मानसून विसंगतियां अपेक्षाकृत समान रूप से होती हैं। इसके विपरीत, अल-नीनो और सकारात्मक आईओडी वाले वर्षों में, पूरे मौसम में विसंगतियों में अपेक्षाकृत अधिक होता है। इंडोनेशियाई प्रवाह परिवर्तनशीलता के साम्य में, महासागरीय व वायुमंडलीय युग्मित घटना के संयुक्त बल के परिणामस्वरूप, हिद महासागर में उल्टा मेरिडियनल परिसंचरण और तापीय वितरण बहु -वर्षीय समय पैमाने पर होता है।

ईएनएसओ (E N S O)और आईओडी (IO D)का भारतीय मानसून पर प्रभाव

जब ईएनएसओ सकारात्मक आईओडी के साथ होता है, तो सकारात्मक आईओडी भारतीय मानसून के लिए सकारात्मक होता है, जबकि ईएनएसओ भारतीय मानसून के लिए नकारात्मक होता है। इस तरह दोनों एक दूसरे के प्रभाव को कम कर देते हैं, और भारत में सामान्य वर्षा होती है। यही स्थिति नकारात्मक आईओडी और ला-नीना के साथ भी होती है। दूसरे मामले में, जब सकारात्मक आईओडी ला-नीना के साथ आता है, तो दोनों भारतीय मानसून के लिए सकारात्मक होते हैं। इस स्थिति में भारत में

तीव्र बाढ़ की स्थिति होती है, जबकि जब नकारात्मक आईओडी, ईएनएसओ स्थितियों के साथ आता है, तो दोनों ही भारतीय मानसून के लिए नकारात्मक होते हैं। इस स्थिति में भारत में अत्यधिक सूखे की स्थिति बन जाती है।

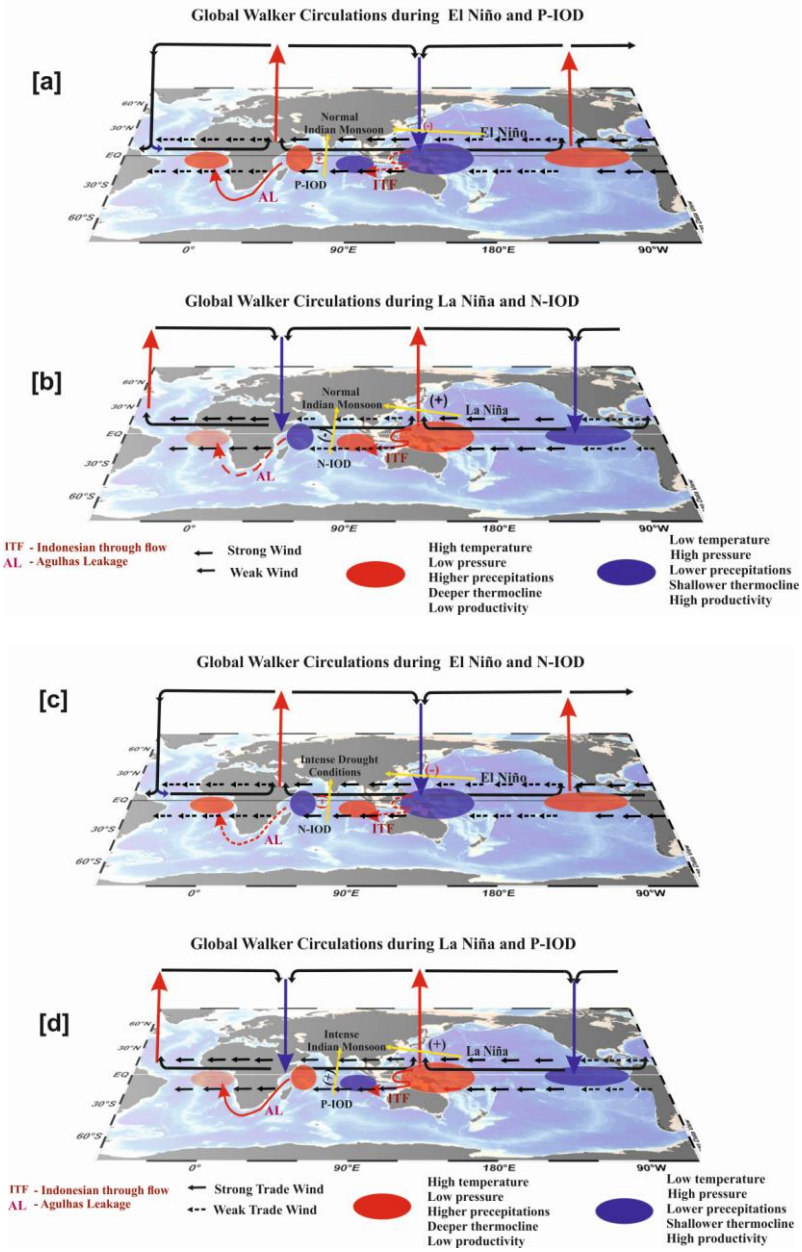

वैश्विक वॉकर परिसंचरण (तीर) और टेलीकनेक्शन घटनाओं के कारण प्रशां त, भारतीय और अटलांटिक महासागर के बीच तापीय वितरण को दर्शाता हुआ आरेख।

बृजेश कुमार
शोध छात्र
पवन गोविल
विज्ञानी 'ई'
बीरबल साहनी पुराविज्ञान संस्थान, लखनऊ

बता पर्सिवीअरेंस मंगल में कितना पानी!

मनुष्य की अपार जिज्ञासा और जीवटता की विजय पताका बन पर्सिवीअरेंस रोवर 18 फरवरी, 2021 को मंगल ग्रह के 45 किलोमीटर चौड़े महाखड्ड (क्रेटर) में उतरा। उतरने के बाद, पर्सिवीअरेंस मंगल में कभी मौजूद रही समृद्ध जलीय और वातावरणीय परिस्थितियों की स्पष्ट जानकारियों से भरी हुई हतप्रभ कर देने वाली तस्वीरें लगातार भेज रहा है । यह आकाशीय पिण्ड भारतीय पुराण साहित्य में भूमि पुत्र या भौम कहकर वर्णित है। ग्रीक पौराणिक साहित्य में यह युद्ध के देवता मार्स के तौर पर मिलता है। इस मंगल ग्रह से जान-पहचान बढ़ाने का सिलसिला तत्कालीन सोवियत संघ ने वर्ष 1960 से 1973 के बीच चले अपने मार्स प्रोग्राम से शुरू किया था। हालाँकि, इससे संतोषजनक परिणाम नहीं मिल पाए थे।

मंगल की ज़मीनी शक्ल-ओ-सूरत तथा तबीयत की जानकारी का किस्सा शुरू हो पाया 14 नवंबर,1971 में जब नासा के रोबोटिक अंतरिक्ष यान मेरिनर-9 ने मंगल ग्रह की कक्षा में पहुँचकर वहाँ अरबों साल पहले पानी रहे होने के संकेत पकड़े। मेरिनर-9 ही था जिसने मंगल ग्रह की ज़मीनी बनावट, (पुरा) ज्वालामुखी और हज़ारों किलोमीटर लंबी घाटियों से पृथ्वीवासियों की पहचान करवाई थी। वर्ष 1975 में भेजे गए वाइकिग-1 और वाइकिग-2 ऑर्बिटरों के लैंडरों ने मंगल की कई विशाल घाटियों, बाढ़, नदी-प्रणाली, विभिन्न प्रकार की स्थलाकृतियों के प्रतिबिम्बों के साथ वहाँ के वातवरण की कार्बन -डाई-ऑक्साइड गैस, वातावरणीय दबाव, धूल के तूफ़ान जैसी जानकारियाँ देकर इस पहचान को प्रगाढ़ बनाया।

अगर कुछ अभियानों की बात करें तो नासा की जेट प्रोपल्शन लैबोरेट्री के रोबो टिक अंतरिक्षयान मार्स ग्लोबल सर्वेयर (प्रक्षेपण वर्ष : 1996) ने पृथ्वी के लाल पड़ोसी में पानी के द्रव अवस्था में होने के प्रमाण देकर वैज्ञानिक समुदाय को बहुत बड़ा उपहार दिया। इसके बाद, संचार क्रांति की दस्तक सुन चुकी दुनिया से उड़ा रोबोटिक अंतरिक्षयान मार्स पाथफाइंडर का रोवर 4 जुलाई, 1997 को ग्रह के उत्तरी गोलार्ध के एक बाढ़ के मैदान पर उतरा। इसी यान में मंगल पर पहुँचने वाला सबसे पहला रोबोटिक रोवर सोजॉर्नर भी गया था। उस समय के अद्यतन यंत्रों से लैस इस रोवर ने मंगल की चट्टानों और मिट्टी की मौलिक संरचना, रासायनिक विश्लेषणों तथा मौसम कारकों पर व्यापक आंकड़े उपलब्ध करवाए हैं । इससे यह पक्का हो गया कि आज का सुस्ताया पड़ा हुआ मंगल कभी गर्म और तरावटी तबीयत वाला था।

मंगल ग्रह पर चल रही जल की खोज-ओडिसी (ओडिसी= महायात्रा या रोमांचक यात्रा) में बहुत महत्वपूर्ण मंज़िल तब हासिल हुई जब अगले उन्नत रोबोटिक अंतरिक्ष यान मार्स ओडिसी या 2001 मार्स ओडिसी ने मंगल के उत्तरी ध्रुव में भारी मात्रा में बर्फ़ और भूमध्य रेखीय क्षेत्र में जल (बर्फ़) के बड़े भंडार की उपस्थिति दर्ज की। यूरोपीय स्पेस एजेंसी के ऑर्बिटल मार्स एक्सप्रेस (प्रक्षेपण वर्ष : 2003) ने मंगल में सतह के नीचे जल और बर्फ़ के भंडार, विभिन्न प्रकार के जलीय जमावों, खाइयों, चस्मों, बर्फ़ से भरे विशाल गड्ढों सहित जलीय वातावरण से जुड़े विभिन्न खनिज -जमावों के प्रमाण भेजे हैं। नासा के ऑपर्च्युनिटी रोवर (अवतरण वर्ष : 2004) का मंगल पर पुरातन काल में रही जलीय परिस्थितियों को जानने के लिए उपयुक्त स्रोत - विभिन्न प्रकार की चट्टानों और रेगोलिथ (मिट्टी और चट्टानी टुकड़ों का कुछ कठोर हो चुका मिश्रण) को चिन्हित करने में बहुत योगदान रहा है ।

मार्स रिकॉनिसेंस ऑर्बिटर वर्ष 2005 में अपने साथ अन्तरिक्ष में आज तक के सबसे बड़े परावर्तित दूरदर्शी युक्त द्वारक (एपर्चर) वाला कैमरा हाईराइज़ (HiRISE) लेकर गया है। वर्ष 2006 से हाईराइज़ लगातार अत्यंत उच्च गुणवत्ता वाली तस्वीरों के जरिए मंगल ग्रह पर पुराकाल में रहे सरोवरों, नदियों, ग्लेशियरों और उनसे बने बर्फ़ भण्डा रों, जलीय जमावों से सम्बद्ध लवणों के पुख्ता प्रमाण दे रहा है। 25 मई, 2008 को मंगल के अंचल में उतरे नासा के मानव रहित अंतरिक्ष यान फिनिक्स लैंडर ने ग्रह के उत्तरी क्षेत्र में बर्फ भण्डार होने की पुष्टि की है। 6 अगस्त, 2012 को गैल क्रेटर के अन्दर उतरे क्यूरिओसिटी रोवर ने

स्थलाकृतियों की उन्नत तस्वीरें, कई प्रकार के कार्बनिक अणुओं और मंगल ग्रह पर मीथेन गैस की मौसम के साथ बदलती हुई मात्रा का पता लगाया। कर्मवीर क्यूरिओसिटी रोवर को मंगल ग्रह पर उतरने के बाद से सॉल-ब-सॉल यानि दिन-ब-दिन (मंगल के दिन/सोलर डे को सॉल कहते हैं) अपना काम करते हुए आज 23 अप्रैल, 2024 तक कुल 4164 सॉल हो चुके हैं। हम धरतीवासियों के कुल 4278 दिन यानि 11 साल, 261 दिन से वह मंगल ग्रह की नित नई जानकारियाँ भेजने में तत्पर है। भारतीय अन्तरिक्ष अनुसन्धान संगठन (इसरो) ने 23 सितम्बर, 2014 को मार्स ऑर्बिटर मिशन (मॉम) अन्तरिक्ष यान को मंगल की कक्षा में पहुँचाकर भारत को मंगल ग्रह की कक्षा में खड़े होने वाला दुनिया का चौथा देश बना दिया। नेशनल स्पेस एडमिनिस्ट्रेशन, चीन के त्यनवन-1 मिशन के तहत ज्युरोंग रोवर ने वर्ष 15 मई, 2021 में लाल ग्रह पर उतरकर वहाँ से ध्रुवीय बर्फ़, द्रव अवस्था में पानी, जलीय गतिविधियों, रेत के टीलों जैसी स्थलाकृतियों की जानकारी से भरे चित्र दिए हैं ।

पर्सिवीअरेंस रोवर मंगल ग्रह के 45 किलोमीटर चौड़े (परिधि) यज़ेरो क्रेटर (Jezero; अंग्रेजी वर्तनी देखने से जेज़ेरो लगता है) पर उतरा है। पर्सिवीअरेंस ने स्थलाकृतियों की तस्वीरें उतारने के साथ ही अब तक कुल 24 सैंपल भी जमा कर लिए हैं । इनमें 21 नमूने चट्टानों को भेदकर निकाले गए क्रोड़, दो नमूने रेगोलिथ और एक वातावरणीय नमूना है । मंगल की इन मिल्कियतों में से 24 वीं को छह पहियों के रथ में सवार नासा के महायोद्धा पर्सिवीअरेंस ने पिछले महीने की 12 तारीख (12 मार्च, 2024) को ही अपने कब्जे में लिया है।

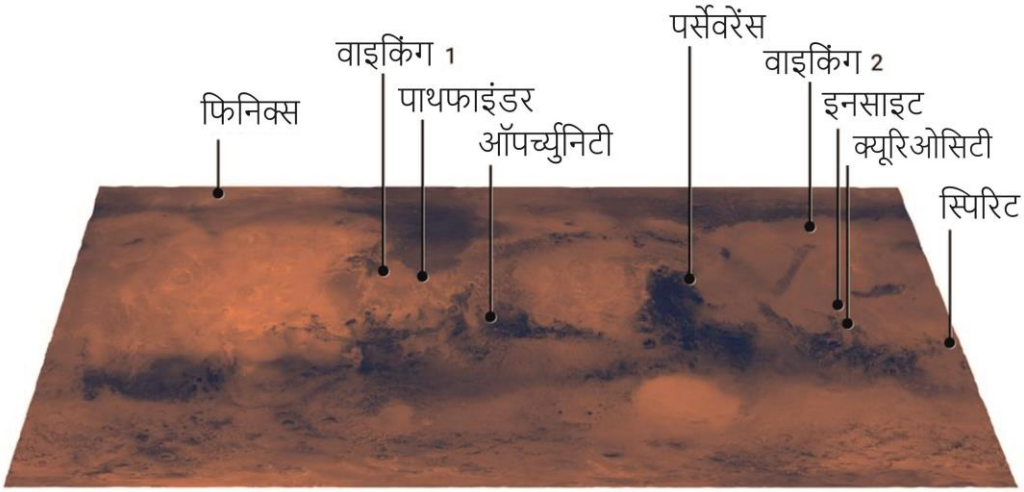

विभिन्न रोवर अभियानों के अवतरण स्थल (स्रोत : फोटोजर्नल , 2020)

यह 24वाँ नमूना लगभग 1.7 मीटर चौड़ी और 1 मीटर ऊँची सीधी खड़ी चट्टान से लिया गया है, जिसका नाम अमेरिका के येलोस्टोन नेशनल पार्क के 'बन्सेन पीक' के नाम पर रखा गया है। मंगल स्थित बन्सेन पीक का 75% संघठन कार्बोनेट कणों का है जो लगभग विशुद्ध सिलिका के सीमेंट में बंधे हैं। कार्बोनेट और सिलिका दोनों ही सूक्ष्मक्रिस्टलीय (बारीक रवेदार) दिखाई देते हैं। ऐसे सूक्ष्मक्रिस्टलीय कार्बोनेट और सिलिका दोनों ही इस पर्यावरण में कभी फूले-फले सूक्ष्मजीवी जीवन के संकेतों को पकड़ने और परिरक्षित करने के लिए बहुत ही उपयुक्त हैं।इसके साथ ही यह नमूना इसलिए भी खास है कि यह एकत्रित किए गए नमूनों में सबसे पुराना है और मंगल ग्रह अपने पुराने समय में ही सबसे अधिक रहने योग्य रहा है। इतनी विशिष्टता और महत्ता रखने के

बावजूद भी इन नमूनों का अध्ययन पृथ्वी की प्रयोगशालाओं में नहीं हो सकेगा क्योंकि 15 अप्रैल , 2024 को नासा द्वारा नमूनों को पृथ्वी में वापस लाने के मिशन को रद्द कर दिया गया है।

पर्सिवीअरेंस रोवर में लगे उपकरणों द्वारा किए गए विश्लेषण य ह इशारा देते हैं कि यह चट्टान कभी पुरातन काल में लम्बे समय के लिए पानी के अंदर रही होगी। इससे इस बात का भी इशारा मिलता है कि यहाँ कोई बड़ी झील रही हो सकती है। इस चट्टान में पाए गए सभी खनिज पानी में जमा होने वाले खनिज हैं। अध्ययनों से सिद्ध है कि पानी में जमा होने वाले खनिज अक्सर प्राचीन कार्बनिक पदार्थ और 'बायोसिग्नेचर्स', कह लीजिए 'जीवन के हस्ताक्षरों' को परिरक्षित करने के लिए सर्वथा सक्षम हैं। बायोसिग्नेचर, ऐसे पदार्थ या संरचना जो पिछले जीवन का प्रमाण हो सकते हैं। चट्टान मंगल ग्रह की उन जलवायवी परिस्थितियों के बारे में भी बता सकती है जो इस चट्टान के गठन या निर्माण के वक्त मौजूद थीं ।

लगभग 4 अरब वर्ष पहले अस्तित्व में आई यज़ेरो क्रेटर का फ़र्श भूमिगत मैग्मा या सतह पर हुई ज्वालामुखीय गतिविधि से बनी आग्नेय चट्टान का बना है। यहाँ मिला बलुआ पत्थर और पंकाश्म (पत्थर बन चुकी चिकनी मिट्टी), बताते हैं कि सैकड़ों-लाखों साल बाद ही सही पर क्रेटर में नदी का आगमन हुआ।

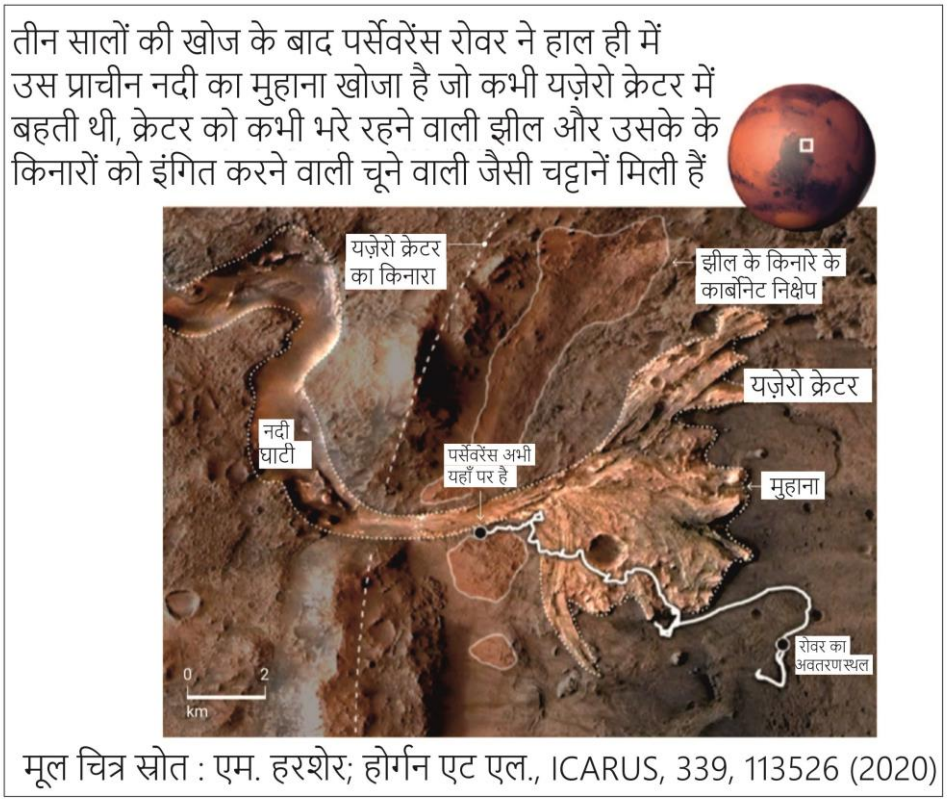

मूल चित्र स्रोत : एम. हरशेर; होर्गन एट एल., ICARUS, 339, 113526 (2020)

रोवर ने हाल ही में प्राचीन नदी मुहाना खोजा है, जो करोड़ों साल पहले यज़ेरो क्रेटर को भरने वाली झील का सबूत है। चिकनी मिट्टी और उसमें पाए जाने वाले खनिजों की उपस्थिति भी दर्ज हुई है। चाहे कोई भी नाम से बुला लीजिए मंगल की यह नदी कभी वहाँ इठलाते, बलखाते, छलछलाते हुए बहा करती थी। मंगल की यह लोहित मोड़ों पर बलखाते हुए अपनी गोद की आड़ में रेत-बजरी-कंकड़-पत्थर की ढेरी अनायास में ही जमा करती रही होगी जैसे कोई बच्ची खेल में रेत-कंकड़-पत्थर की ढेरियाँ बनाती है। धरती की नदियों को पढ़ने वाले भूआकृति विज्ञानी नदी की इन संरचनाओं को विसर्पी रोधिका/पॉइंट बार का नाम देते हैं। पत्थरों से गेंद की तरह खेलती हुई, उनको उछालती हुई यह मांगलिक मंदाकिनी एक सफर तय करते हुए इस मुहाने तक

पहुँचती होगी। यज़ेरो का अर्थ ही कई साल्विक भाषाओं में सरोवर/झील होता है। इसका यह नाम दक्षिण -पूर्व यूरोप के बोस्निआ और होरज़ेगोविना में स्थित एक छोटे से गाँव (नगरपालिका) के नाम पर रखा गया है। पृथ्वी पर अपने मीता (जिनके नाम एक से हों) की तरह मंगल के यज़ेरो में भी कभी नदी से बनने वाली, नदी से पानी लेने वाली, एक झील थी। ज़मीनी शक्ल-ओ-सूरत के सबूत बयाँ करते हैं कि एक नदी थी जिसने अपने मुहाने पर एक झील बनाई थी। धरती का यज़ेरो भी 'प्लिवा नदी' के मुहाने पर बनी 'वेलिक्का प्लिवस्का झील' पर स्थित है। पुरातन काल की इस झील के किनारों को इंगित करने वाली चूने जैसी चट्टाने हैं, जो एक उथली झील और उसमें हुए वाष्पीकरण का संकेत देती हैं। यज़ेरो क्रेटर के मोज़ेक चित्र में खनिज निक्षेप बहुतायत में दिखाई देते हैं। कार्बोनेट्स-खनिज पुरातन सूक्ष्म जीवन को परिरक्षित रखने के लिए अनुकूल भी हैं। विज्ञानियों का मानना है कि इस पुरातन नदी के मुहाने की गाद ने अरबों-करोड़ों साल पहले इस क्रेटर में बहने वाले पानी से कार्बनिक अणु और सूक्ष्मजैविक जीवन के दूसरे संभावित निशान सोखकर अपने में संजोये रखे होंगे। होनहार पर्सिवीअरेंस रोवर इस बूढ़ी भौमावती नदी के प्रणाल और महाखड्ड के किनारे पर भी खोजबीन करेगा।

ऐसे समय में यह बहुत समीचीन रहेगा कि आज तक विभिन्न मंगल अभियानों द्वारा लाल ग्रह में जीवन के आधार - कार्बनिक पदार्थों की प्राप्ति और जीवन की सम्भावनाओं पर की गई खोजों के परिणामों की एक समीक्षा की जाए। इस समीक्षा से मंगल ग्रह में जीवन की सम्भावनाओं को खोजने के कार्य में जो चुनौतियाँ हैं उनको रेखांकित किए जाने के साथ -साथ भविष्य की रणनीति भी निर्धारित की जा सकेगी। हाल में एक महत्वपूर्ण समीक्षात्मक शोधपत्र 'डिटेक्शन ऑफ़ ऑर्गैनिक मैटर ऑन मार्स, रिजल्ट्स फ्रॉम वेरिअस् मार्स मिशन्स, चैलेंजेस, एंड फ्यूचर स्ट्रेटेजी: ए रिव्यू' शीर्षक से प्रकाशित हुआ है। इस पर्चे में उन सभी शोध पत्रों के परिणामों के सारांश प्रस्तुत किए गए हैं, जो विभिन्न मार्स लैंडर/रोवर अभियानों द्वारा कार्बनिक पदार्थ की खोजों के परिणामों को सामने रखते हैं। शोधपत्र के लेखक डॉ. आरिफ़ हुसैन अंसारी, विज्ञानी, बीरबल साहनी पुराविज्ञान संस्थान, लखनऊ इस समीक्षा के माध्यम से अभियानों में एकत्रित हुए मंगल ग्रह के रेगोलिथ और पंकाश्म के नमूनों की विश्लेषण पद्धतियों में जो चुनौतियाँ सामने आती हैं, उनसे निपटने की दिशा में हुई प्रगति को समझने का प्रयास किए हैं। यद्यपि, मंगल अभियान कुछ सरल और जटिल कार्बनिक अणुओं का पता लगाने में सफल रहे हैं लेकिन उनकी उत्पत्ति या उनका स्रोत के बारे में कोई भी जानकारी नहीं जुटा सके हैं। अन्तरिक्ष में कार्बनिक अणुओं की उत्पत्ति कॉस्मिक धूल, उल्का बमबारी, जलतापीय या आग्नेय गतिविधि के दौरान बने अकार्बनिक कार्बन से हो सकती है। इसके अलावा प्राचीन वास योग्य मंगल ग्रह में अवसाद/गाद जमा होने वाले वातावरण में होने वाली जैविक क्रियाएं भी इन कार्बनिक अणुओं की स्रोत हो सकती हैं। मंगल ग्रह के निक्षेपण क्षेत्र में परिरक्षित कार्बनिक पदार्थ प्राप्त होना बहत दुर्लभ है। इन सब तथ्यों को देखते हुए आगामी एक्सोमार्स मिशन को उन उपकरणों से सुसज्जित किया गया है, जो उपकरण कार्बनिक पदार्थ विश्लेषण के लिए सतह से 2 मीटर नीचे भेदकर कोर के नमूने प्राप्त करने में सक्षम होंगे। यह माना जाता गया है कि सतह के नीचे पराबैंगनी विकिरणों, मंदाकिनीय ब्रह्मांड किरणों और सौर्य ऊर्जा कणों के द्वारा तोड़े गए मूल कार्बनिक पदार्थ ज्यादा संरक्षित मिलेंगे। पिछले और आने वाले मंगल अभियानों से तैयार होने वाली समझ भविष्य के अभियानों के लिए रणनीति और उपकरणों को विकसित करने में मदद करेगी। इससे हम निष्कर्षत: यह पता कर सकेंगे कि पृथ्वी के दूर का रिश्तेदार कहलाया जा सकने वाला यह मंगल ग्रह पहले कितना रहने योग्य था।

रणधीर संजीवनी

इंदिरा नगर, लखनऊ

शोध सार

भारत के वर्धा घाटी कोयला क्षेत्र के प्रारंभिक पर्मियन में पुराजगत-जंगल की आग के साक्ष्य

चारकोल कार्बनिक पदार्थ के अपूर्ण दहन का रासायनिक रूप से निष्क्रिय अवशेष है। साहित्य में जीवाश्म चारकोल को फ्यूसेन, या इनर्टिनाइट समूह के कोयला मैसेरल्स, यानी फ्यूसिनाइट, सेमीफ्यूसिनाइट और इनर्टोडेट्रिनाइट के रूप में भी जाना जाता है। तलछट में चारकोल की उपस्थिति अतीत में जंगल की आग की घटना को इंगित करती है चूंकि अग्नि व्यवस्था कुछ जलवायु मापदंडों से जुड़ी होती है, इसलिए यह पिछले पारिस्थितिक तंत्र पर जलवायु परिवर्तन के कुछ प्रभावों को समझने में भी उपयोगी है। चारकोल के जीवाश्म रिकॉर्ड का पता लेट सिलुरियन से लगाया जा सकता है। पुराजगत-जंगल की आग के साक्ष्य, क्लैस्टिक तलछटों में स्थूल और सूक्ष्म चारकोल, कोयले और लिग्नाइट में पाइरोजेनिक इनर्टिनाइट्स, साथ ही पाइरोजेनिक पॉलीआर्मोमैटिक हाइड्रोकार्बन के रूप में जाने जाते हैं, जो कार्बनिक पदार्थों के दहन के दौरान उत्पन्न होते हैं। विशेष रूप से मैक्रो-चारकोल, जो अक्सर उत्कृष्ट रूप से संरक्षित शारीरिक विवरण प्रदर्शित करता है, और पौधे की वनस्पति समानता के बारे में जानकारी प्रदान कर सकता है, जो जंगल की आग से प्रभावित था।

जंगल की आग

सामान्य तौर पर, तलछट में चारकोल की उपस्थिति को व्यापक रूप से पुराजगत-जंगल की आग के प्रत्यक्ष प्रमाण के रूप में और कुछ पर्यावरणीय स्थितियों के संकेतक के रूप में भी स्वीकार किया जाता है। कोयला भंडार से जुड़े पर्मियन तलछट से मैक्रोस्कोपिक चारकोल पर अधिकांश प्रकाशित रिपोर्ट जिम्नोस्पर्म्स मूल की हैं। उत्तरी गोलार्ध की तुलना में दक्षिणी गोलार्ध से, बहुत कम मैक्रोस्कोपिक चारकोल अध्ययन, विशेष रूप से भारतीय उपमहाद्वीप से, ऊपरी पुराजगत चारकोल से संबंधित हैं। भारत में अब तक पुराजगत-जंगल की आग के कुछ ही सत्यापित रिकॉर्ड ज्ञात हैं। पहला रिकॉर्ड लेट पर्मियन रानीगंज कोयला क्षेत्र, दामोदर बेसिन से आया था।

वर्तमान अध्ययन भारत के वर्धा कोयला क्षेत्र से अर्ली पर्मियन, करहरबारी संरचना के उपसतह तलछट से उत्कृष्ट

संरचनात्मक संरक्षण के साथ मैक्रोस्कोपिक जीवाश्म चारकोल टुकड़ों की एक और घटना की रिपोर्ट करता है। वर्तमान जांच का मुख्य उद्देश्य चारकोल की शारीरिक रचना का विश्लेषण करना और तलछट नमूने में एम्बेडेड मैक्रोस्कोपिक जीवाश्म चारकोल की वर्गीकरण संबंधी समानता की व्याख्या करना है। मध्यम आकार वाले बलुआ पत्थर में अच्छी तरह से संरक्षित मैक्रोस्कोपिक चारकोल के टुकड़े जड़े हुए हैं। विशेष रूप से अध्ययन किए गए नमूनों में समरूप कोशिका दीवारों और अच्छी तरह से संरक्षित शारीरिक विवरणों का अस्तित्व इस बात की पुष्टि करता है कि जांच किए गए लकड़ी के टुकड़े जीवाश्म चारकोल हैं और इनका उपयोग पुराजगत काल में जंगल की आग के लिए प्रत्यक्ष संकेतक के रूप में किया जा सकता है। चारकोल के टुकड़ों के अपेक्षाकृत बड़े आकार, तेज किनारों और चारकोल की शारीरिक विशेषताओं के उत्कृष्ट संरक्षण के आधार पर, यह प्रशंसनीय लगता है कि इन नमूनों को जमा होने से पहले लंबी दूरी तक परिवहन का अनुभव नहीं हुआ था। सभी अध्ययन किए गए नमूनों में टूटी हुई ट्रेकीड दीवारें दिखाई देती हैं जो डायजेनेटिक संपीड़न का संकेत है, जिसे कोयला पेट्रोलॉजी में तथाकथित "बोजेनस्ट्रक्चरन" के रूप में भी जाना जाता है। अध्ययन किए गए जीवाश्म चारकोल के टुकड़ों में संरचनात्मक विवरण प्रदर्शित होते हैं जैसे कि ट्रेकीड दीवारों पर असमान रूप से और द्वि-श्रृंखलाबद्ध रूप से व्यवस्थित सीमा वाले गड्ढे संभावित जिम्नोस्पर्म्स लकड़ी के संबंध की ओर इशारा करते हैं। स्केलरिफ़ॉर्म पिटिंग केवल व्यक्तिगत नमूनों के छोटे क्षेत्रों में ही देखी जाती है।

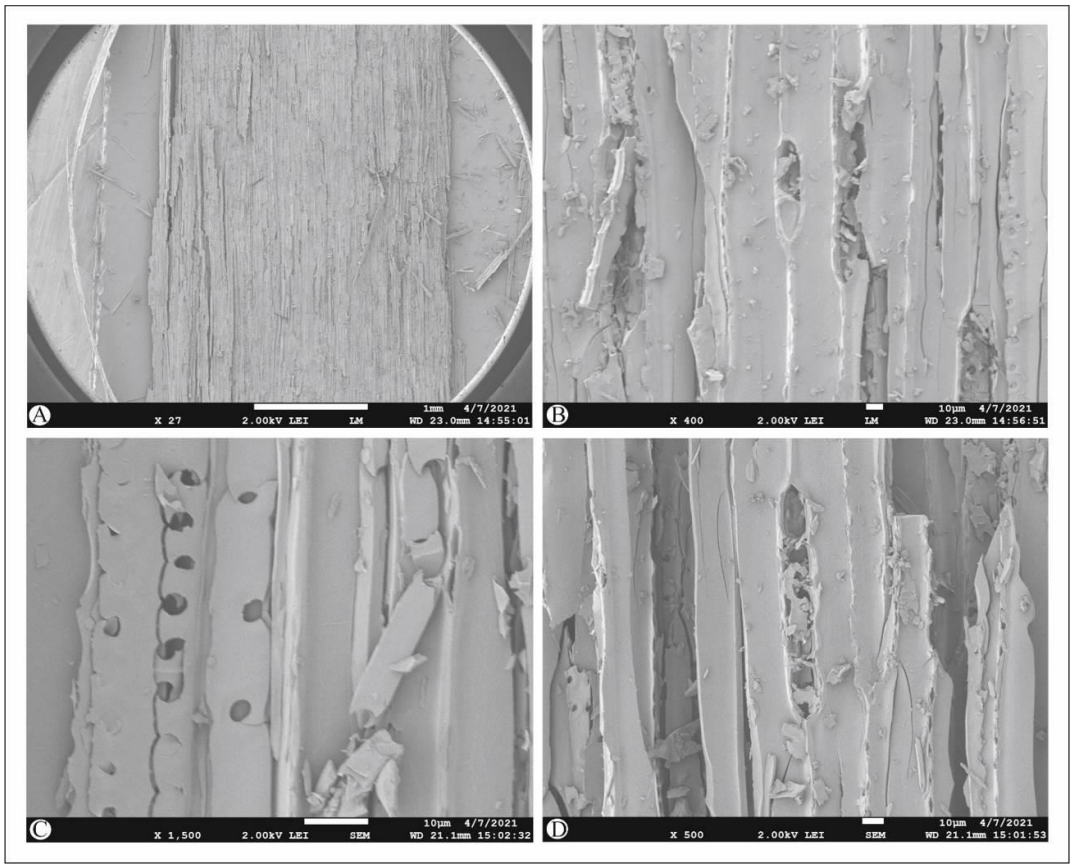

जीवाश्म चारकोल टुकड़ों की स्कैनिंग इलेक्ट्रॉन सूक्ष्मदर्शी द्वारा ली गई तस्वीरें

भारत के वर्धा घाटी कोयला क्षेत्र में एस्टोना-कोथुर्ना कोयला ब्लॉक के मैक्रोस्कोपिक चारकोल की घटना, इस क्षेत्र में प्रारंभिक पर्मियन के जमाव के दौरान पुराजगत-जंगल की आग की घटना के लिए स्पष्ट प्रमाण प्रदान करती है। चारकोल के टुकड़ों की ट्रेकिड दीवारों पर यूनिसेरिअट और बाइसेरिअट पिटिंग पैटर्न एक जिम्नोस्पर्म्स लकड़ी के संबंध की ओर इशारा करते हैं।

बिना घिसे हुए किनारों और अच्छी तरह से संरक्षित शारीरिक विशेषताओं के साथ बड़े आकार से संकेत मिलता है कि इन तलछटों के जमाव से पहले लकड़ी के कोयले के टुकड़ों को संभवतः बहुत कम दूरी तय करनी पड़ी थी। ये निष्कर्ष न केवल भारत में, बल्कि पूरे गोंडवाना महाद्वीप में प्रारंभिक पर्मियन के दौरान जंगल की आग की व्यापक घटना के लिए एक साक्ष्य है।

देवेश्वर प्रकाश मिश्रा एवं श्रीकांत मूर्ति
बीरबल साहनी पुराविज्ञान संस्थान, लखनऊ

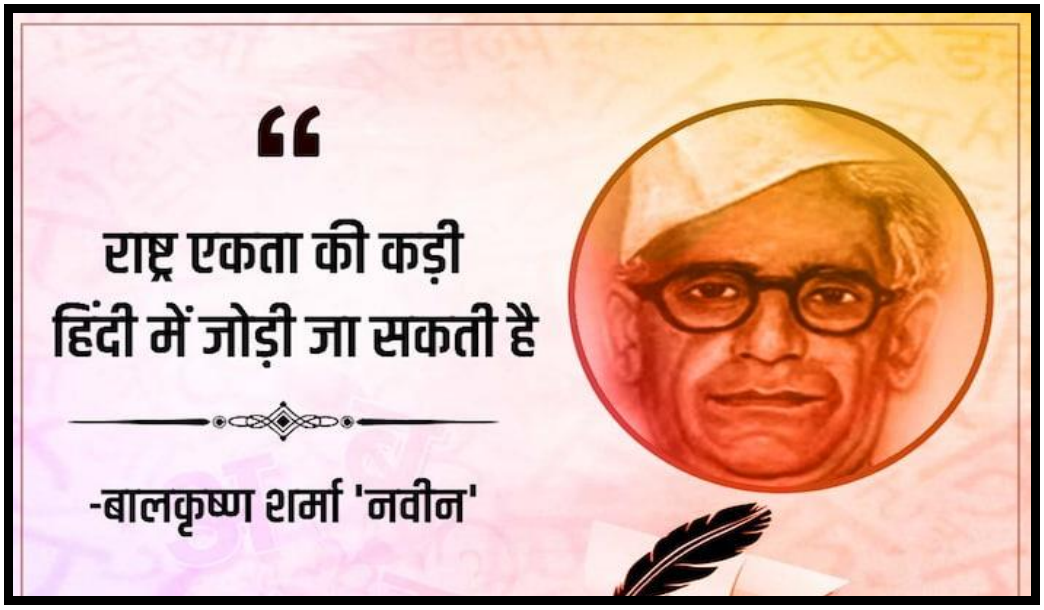

भारत के उष्णकटिबंधीय शुष्क पर्णपाती वनों पर जलवायु परिवर्तन के प्रभाव के लिए पूर्वानुमान मॉडल

जलवायु परिवर्तन वैश्विक परिवर्तनों का एक प्राथमिक घटक है और इससे प्रजातियों के वितरण पर बहुत अधिक प्रभाव पड़ने की उम्मीद है। पारिस्थितिकी तंत्र और प्रजातियों पर जलवायु परिवर्तन के प्रभाव को समझना और भविष्यवाणी करना , संरक्षण और प्रबंधन के लिए स्थायी रणनीति तैयार करने के लिए महत्वपूर्ण है। हालांकि उष्णकटिबंधीय शुष्क पर्णपाती वन लंबे सूखे की अवधि के दौरान शारीरिक तनाव के अनुकूल होते हैं, लेकिन यह स्पष्ट नहीं है कि वे जलवायु व्यवस्था में भविष्य के परिवर्तनों पर कैसे प्रतिक्रिया देंगे। भारत में इस वनस्पति प्रकार पर प्रभुत्व वाली प्रमुख गैर-लकड़ी वन उत्पाद (NTFP) प्रजातियों के अनुमानित सीमा बदलावों पर एक आकलन किया गया था , जिसमें *एगल मार्मेलोस*, *बुकाननिया लैनज़न*, *मधुका लॉन्गिफोलिया*, *फिलांथस एम्बिलिका* और *टर्मिनलिया बेलिरिका* शामिल हैं।

वर्तमान जलवायु परिस्थितियों के तहत उनके आवास की उपयुक्तता का विश्लेषण किया गया और उनके पिछले (मध्य होलोसीन, अनुमानतः आज से 6000 वर्ष पहले) और भविष्य (2050 और 2070 के दशक के लिए) वितरण को मैक्सेंट प्रजाति वितरण मॉडलिग तकनीकों का उपयोग करके जलवायु-मॉडलिग प्रतिनिधि सांद्रता पथ (RCP) 2.6 और 8.5 उत्सर्जन परिदृश्यों के तहत मैप किया गया। परिणामों ने संकेत दिया कि मुख्य जैव -जलवायु कारक, जैसे कि औसत वार्षिक तापमान (बायो_1), वार्षिक वर्षा (बायो_12), समतापीयता (बायो_3) और सबसे ठंडी तिमाही की वर्षा (बायो_19), मुख्य रूप से सभी प्रजातियों के वितरण को संचालित करते हैं। इन कारकों ने मिलकर प्रजातियों के वितरण का लगभग 70% कारक बना। इसके अतिरिक्त, ऊँचाई और ढलान जैसे स्थलाकृतिक कारक ने भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाई, जो वितरण पैटर्न में लगभग 10-20% योगदान देता है। पश्चिमी घाट क्षेत्र अध्ययन की गई अधिकांश (NTFP) प्रजातियों के लिए एक अत्यंत उपयुक्त आवास के रूप में उभरा, जिसमें *बुकाननिया लैनज़न*, *मधुका लॉन्गिफोलिया*, *फिलांथस एम्बिलिका* और *टर्मिनलिया बेलिरिका* शामिल हैं। हालाँकि, *एगल मार्मेलोस* के लिए यह मुख्य रूप से पश्चिमी घाट के केरल क्षेत्र तक ही सीमित था।

इसके अलावा, मध्य प्रदेश और छत्तीसगढ़ जैसे राज्यों को शामिल करते हुए मध्य भारत को *बुकाननिया लैनज़न*, *मधुका लॉन्गिफोलिया* और *टर्मिनलिया बेलिरिका* जैसी प्रजातियों के वितरण के लिए एक अत्यंत उपयुक्त क्षेत्र के रूप में पहचाना गया। इसके अलावा वर्तमान जलवायु परिस्थितियों के तहत, *एगल मार्मेलोस* और *फिलांथस एम्बिलिका* के लिए आवास उपयुक्तता उत्तर-पूर्वी भारत में ब्रह्मपुत्र घाटी और पूर्वोत्तर पहाड़ियों तक फैली हुई है।पिछले अनुमानों द्वारा पहचाने गए आवासों में सभी लक्षित प्रजातियों के जीवाश्म पराग रिकॉर्ड की मौजूदगी ने मॉडल के परिणामों का समर्थन किया , जिससे मध्य-होलोसीन के दौरान प्रजातियों की मौजूदगी की पुष्टि हुई। इन पिछले अनुमानों ने मध्य -होलोसीन के दौरान लक्षित प्रजातियों के व्यापक वितरण का संकेत दिया, जिससे पता चलता है कि वे उस समय भारत में गर्म और आर्द्र जलवायु परिस्थितियों के कारण अपने सबसे व्यापक विस्तार तक पहुँच गए थे। यह संयुक्त दृष्टिकोण एक प्रभावी सत्यापन उपकरण के रूप में कार्य करता है, जो प्रजाति वितरण मॉडल और जीवाश्म पराग डेटा से प्राप्त इन प्रजातियों की पिछली भविष्यवाणियों के बीच एक महत्वपूर्ण सहसंबंध दिखाता है।

अध्ययन से पता चला है कि वर्ष 2070 के लिए अनुमानित उच्चतम ग्रीनहाउस गैस उत्सर्जन परिदृश्य, RCP 8.5 के तहत, *एगल मार्मेलोस* और *टर्मिनलिया बेलिरिका* के लिए उपयुक्त आवासों में विस्तार होने की उम्मीद है। इसके विपरीत, *बुकाननिया लैनज़न*, *मधुका लॉन्गिफोलिया* और *फिलांथस एम्बिलिका* के लिए उपयुक्त आवासों में कमी आने का अनुमान है। *बुकाननिया लैनज़न* के लिए महाराष्ट्र, कर्नाटक और केरल के पश्चिमी घाट क्षेत्रों के साथ-साथ ऊपरी गंगा के मैदानों, मध्य पहाड़ी इलाक़ा, पूर्वी पठार, छोटा नागपुर पठार में इसके अत्यंत उपयुक्त आवास में कमी आने की संभावना है। इसी तरह, *मधुका*

लॉन्गिफ़ोलिया के लिए, मॉडल पश्चिमी घाट क्षेत्रों, मध्य पहाड़ी इलाक़ा और शिवालिक पहाड़ियों में अत्यंत उपयुक्त आवासों में महत्वपूर्ण गिरावट की भविष्यवाणी करता है।

फिलांथस एम्ब्लिका के लिए, शिवालिक पहाड़ियों, पश्चिमी घाट, मध्य पहाड़ी इलाक़ा, असम पहाड़ियों और उत्तर-पूर्वी भारत में ब्रह्मपुत्र घाटी में अत्यंत उपयुक्त आवासों में कमी आने की आशंका है। हा लांकि, *एगल मार्मेलोस* के लिए, मॉडल ने शिवालिक पहाड़ियों, केरल के पश्चिमी घाटों और पूर्वोत्तर भारत में पूर्वोत्तर पहाड़ियों और ब्रह्मपुत्र घाटी में अत्यंत उपयुक्त आवासों में वृद्धि का अनुमान लगाया है। *टर्मिनलिया बेलिरिका* को अत्यंत उपयुक्त आवास विशेष रूप से पश्चिमी घाट, मध्य पहाड़ी इलाक़ा, उत्तर-पूर्वी पहाड़ियों और शिवालिक पहाड़ियों में महत्वपूर्ण विस्तार का अनुभव होने का अनुमान है। *एगल मार्मेलोस* और *टर्मिनलिया बेलिरिका* भविष्य के जलवायु परिवर्तनों के प्रति लचीलापन दिखाने की संभावना रखते हैं , जिसका श्रेय तापमान और वर्षा के विभिन्न सीमाओं को सहन करने की उनकी क्षमता के साथ-साथ सूखे और ठंड के प्रति उल्लेखनीय लचीलापन को दिया जा सकता है।

इसके विपरीत, *बुकाननिया लैनज़न*, *मधुका लॉन्गिफ़ोलिया* और *फिलांथस एम्ब्लिका* भविष्य के जलवायु परिदृश्यों के तहत पूर्वानुमानित तापमान और वर्षा पैटर्न में परिवर्तन के प्रति अत्यधिक संवेदनशील हैं। इसलिए, तेजी से हो रहे जलवायु परिवर्तनों के बीच इन महत्वपूर्ण NTFP प्रजातियों के संभावित वितरण का आकलन करना संरक्षण और प्रबंधन रणनीतियों को तैयार करने के लिए आवश्यक है। यह पूर्वानुमान विधि उन महत्वपूर्ण क्षेत्रों को इंगित करने में सहायता करती है जिन पर ध्यान देने की आवश्यकता है, जिससे जलवायु परिवर्तन की दशा में अधिक प्रभावी योजना और संसाधन आवंटन की सुविधा मिलती है।

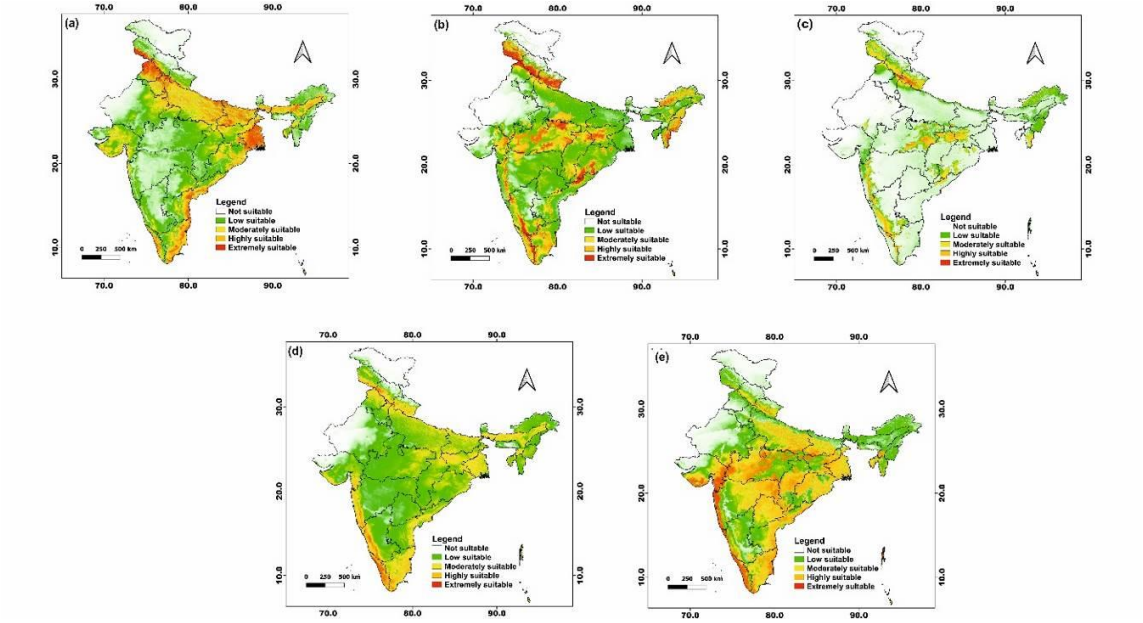

आकृति- लक्ष्य प्रजातियों के आरसीपी 8.5 (2070) के तहत अनुमानित भविष्य का वितरण (ए) एगल मार्मेलोस (बी) बुकनानिया लैनज़न (सी) मधुका लोंगिफोलिया (डी) फिलैन्थस एम्बिलिका (ई) टर्मिनलिया बेलिरिका

पूजा नितिन सराफ एवं ज्योति श्रीवास्तव
बीरबल साहनी पुराविज्ञान संस्थान, लखनऊ

जैव विविधता स्थिरता और पुराशाकाहार विश्लेषण हेतु काजीरंगा राष्ट्रीय उद्यान, असम से स्थापित वर्तमान जैविक एनालॉग

भारत के असम राज्य में स्थित काजीरंगा राष्ट्रीय उद्यान (KNP) को 1985 में यूनेस्को की विश्व विरासत सूची में शामिल किया गया था और यह ग्रेटर एक सींग वाले गैंडे के लिए जाना जाता है। प्रतिष्ठित ग्रेटर एक सींग वाले गैंडे के साथ, यह पार्क हाथियों, जंगली भैंसों और हिरणों का प्रजनन स्थल है, जो मानव उपस्थिति से प्रभावित नहीं होते हैं। यह पार्क इंडो-बर्मा जैव विविधता हॉटस्पॉट क्षेत्र के भीतर है, जो भारतीय उप-क्षेत्र में इंडो-मलायन जीव-जंतुओं के सदस्यों के आव्रजन के लिए एक महत्वपूर्ण गलियारा है। यह उष्णकटिबंधीय प्रजातियों के लिए भी एक महत्वपूर्ण अभ्यारण्य है, जो हिमनद काल के दौरान इन प्रजातियों के लिए जीन भंडार के रूप में कार्य करता है। समय के साथ, काजीरंगा में बाघों की आबादी भी बढ़ी है, और यही कारण है कि 2006 में काजीरंगा को टाइगर रिजर्व घोषित किया गया था। इसके अलावा, पार्क को पक्षी प्रजातियों के संरक्षण के लिए बर्डलाइफ इंटरनेशनल द्वारा एक महत्वपूर्ण पक्षी क्षेत्र के रूप में मान्यता दी गई है।

जलवायु परिवर्तन किसी क्षेत्र में आवधिक वनस्पति परिवर्तन के लिए एक गतिशील प्रक्रिया है। फिर भी, राष्ट्रीय उद्यान जैव विविधता संरक्षण के लिए अत्यधिक संरक्षित है, हाल के वर्षों में देखे गए स्पष्ट परिवर्तन अत्यधिक और अप्रत्याशित ऋतुकीय और प्राकृतिक आपदाओं की आवृत्ति और तीव्रता में वृद्धि के कारण है, जो जैव विविधता के नुकसान के प्रमुख कारकों में से एक हैं। राष्ट्रीय उद्यानों में मौसम का मिजाज लगभग हर साल बदल रहा है और किसानों को भारी नुकसान हो रहा है। इसी प्रकार वार्षिक वर्षा की सीमा का अब निश्चितता के साथ पूर्वानुमान नहीं लगाया जा सकता है। इन परिस्थितियों में, भविष्य के जलवायु मूल्यांकन में सटीकता हेतु एक पुख्ता जलवायु मॉडल की आवश्यकता होती है जो आधुनिक और पुराजलवायु डेटा इनपुट का उपयोग करके बनाए जाते हैं। यह पुराजलवायु डेटा, मात्रात्मक पुरा-पुनर्संरचना आलेखों से बनाए गए है। विभिन्न प्रकार की वनस्पतियों के संबंध में आधुनिक पराग वर्षा का अध्ययन किसी क्षेत्र में पुरावनस्पति और जलवायु की व्याख्या हेतु महत्वपूर्ण हैं। उपोष्णकटिबंधीय और समशीतोष्ण वनस्पति की तुलना में उष्णकटिबंधीय क्षेत्रों में वन के तल और आस-पास के क्षेत्रों में पराग संरक्षण की उच्च विविधता के कारण जीवाश्म पराग संयोजन और पुरावनस्पति का अध्ययन अधिक जटिल और महत्वपूर्ण है। इसलिए, अतीत और भविष्य के जलवायु परिदृश्य को समझने के लिए इस उच्च वर्षा वाले उष्णकटिबंधीय क्षेत्र में आधुनिक पराग अनुरूप का स्पष्ट सूत्रीकरण बेहद आवश्यक है।

सामान्य तौर पर, KNP में चार मुख्य प्रकार की वनस्पतियाँ हैं; उष्णकटिबंधीय सदाबहार वन, अर्ध-सदाबहार वन, पर्णपाती वन, घास का मैदान और दलदल । जलोढ़ घास का मैदान सबसे प्रमुख वनस्पति प्रकार (50.6%) है, इसके बाद जंगल (21.8%), छोटी घास से ढके खुले क्षेत्र और अन्य सहयोगी जड़ी बूटियाँ (7.7%), और राष्ट्रीय उद्यान में क्षरित भूमि (11.7%) भी हैं जोकि उच्च वर्षा के अंतराल के दौरान मिट्टी के कटाव/बहने और भूस्खलन के कारण उत्पन्न हुई हैं। सदाबहार वन आम तौर पर ब्रह्मपुत्र नदी, छोटी नदियों और पार्क की अन्य जलधाराओं के निकटवर्ती क्षेत्रों तक ही सीमित हैं। केएनपी के मुख्य अंतः क्षेत्र में यह वनस्पति वर्ष भर सदाबहार और घनी रहती है, यहाँ पाए जाने वाले मुख्य वन तत्वों में *कास्टानोप्सिस इंडिका, सिनामोमम बेजोलघोटा, डुआबंगा ग्रैंडीफ्लोरा, एलेओकार्पस रोबस्टस, टूना सिलियाटा, मेसुआ फेरिया, सिम्प्लोकोस पैनिकुलाटा, टर्मिनलिया मायरियोकार्पा, स्कीमा वालिची*, और *लित्सिया मोनोपेटाला, विटिस लैटिफोलिया, पेडेरिया फोएटिडा, कार्डियोस्पर्मम हैलिकाकैबम, ट्राइकोसैंथेस डायोका, स्मिलैक्स ओवलिफ़ोलिया, मुकुना प्रुरिएन्स, पाइपर लोंगम,* और *थुनबर्गिया ग्रैंडिफ्लोरा* जैसे कुछ आम पर्वतीय क्लाइमबर्स भी पाए जाते हैं। फ़र्न टैक्सा में स्थलीय फर्न और एपिफाइट्स जैसे *लाइकोपोडियम क्लैवाटम, ड्रायोप्टेरिस फिलिक्स-मास, ग्लीचेनिया डाइचोटोमा, लिगोडियम जैपोनिकम, ड्रायनेरिया रिगिडुला, एंजियोप्टेरिस इवेक्टा, एस्पलेनियम निडस,*

और *पाइरोसिया न्यूमुलारिफोलिया* मौजूद है।

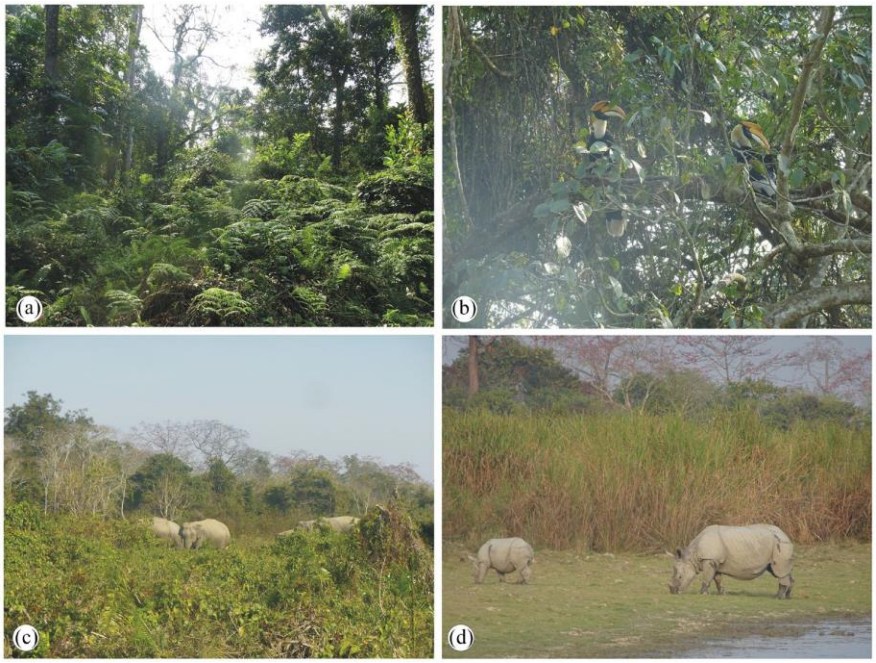

चित्र 1 (ए) काजीरंगा राष्ट्रीय उद्यान के भीतर घना सदाबहार जंगल; (बी) सदाबहार जंगल के भीतर पेड़ पर बैठे ब्यूसेरोस बाइकोर्निस (हॉर्नबिल्स); (सी) काजीरंगा राष्ट्रीय उद्यान में पर्णपाती जंगल में एलिफस मैक्सिमस (एशियाई हाथी) का समूह; और (डी) दलदल के पास की परिधि में राइनो यूनिकॉर्निस चरते हुए।

नम पर्णपाती वन के भीतर अलग-अलग हिस्सों जैसे घास के मैदान, सदाबहार जंगल के आस-पास पाए जाते हैं। इस जंगल में मुख्य रूप से प्रमुख पर्णपाती वृक्ष टैक्सा जैसे *बोम्बैक्स सीइबा, डिलेनिया इंडिका, अल्बिज़िया प्रोसेरा, ए. लेब्बेक, ए. ओडोरैटिसिमा, नियोलामार्किया कैडम्बा, ट्रेविया न्यूडिफ्लोरा, केरिया आर्बोरिया, लेगरस्ट्रोमिया परविफ्लोरा,* और *सेमीकार्पस एनाकार्डियम* पाए जाते है जो शरद ऋतु के दौरान अपनी पत्तियाँ गिरा देते हैं। पोएसी (घास), साइपेरेसी, कन्वोल्वुलेसी, और एकैंथेसी की विभिन्न प्रजातियों द्वारा वन तल ढका रहता है। फर्न सहयोगी जैसे *ड्रायोप्टेरिस फिलिक्समास, एडियंटम कॉडेटम, ब्लेक्रम ऑक्सीडेंटेल, पॉलीपोडियम वल्गारे* और *ड्रायनेरिया रिगिड़ुला* इसके सामान्य सदस्य हैं।

इसके अलावा, मिट्टी के नमूनों से उत्पन्न 'पराग स्पेक्ट्रा' यानि कुल पराग प्रतिशतता के ज्ञान के आधार पर हमारे मन में कई प्रश्न विकसित हुए जैसे- 1) क्या किसी क्षेत्र में परागाणविक अध्यनन उस क्षेत्र की विभिन्न वनस्पति प्रकारों को अलग कर सकता है? और इसके अलावा क्या पराग आलेखों द्वारा आधुनिक और ऐतिहासिक घास के मैदान के उपयोग को अलग करना संभव है? सतह के नमूनों से प्राप्त कोप्रोफिलस कवक बीजाणु काजीरंगा राष्ट्रीय उद्यान (KNP) में शाकाहारी प्रभाव का पता लगाने में मदद कर सकता है। इस संभावना में, असम के काजीरंगा राष्ट्रीय उद्यान में विभिन्न वनस्पति सेटिंग्स से एक आधुनिक पराग और गैर पराग पेलीनोमॉर्फ (NPP) एनालॉग तैयार करने का प्रयास किया गया है ताकि इन जैविक प्रॉक्सी की **सामर्थ्य** और **दुर्बलता** दोनों का मूल्यांकन किया जा सके और यह आकलन किया जा सके कि आधुनिक पराग और NPP डेटासेट कितनी विश्वसनीय रूप से वनस्पति प्रकारों एवं विभिन्न पारिस्थितिक वातावरण की पहचान कर सकते हैं। इस क्षेत्र में लेट-क्वाटरनरी पुरापर्यावरण और पारिस्थितिक परिवर्तनों की अधिक सटीक व्याख्या करने में आधुनिक पराग संयोजन आधार रेखा के रूप में उपयोग किया जा सकता है। नतीजतन, पुरापारिस्थितिक डेटा राष्ट्रीय उद्यान में और उसके आसपास भविष्य के अनुमानों को बेहतर ढंग से समझने में सहायता प्रदान करेगा।

चूंकि कवक बीजाणु और तलछट में परागकण दोनों आमतौर पर एक ही पेलिनोलॉजिकल स्लाइड में पाए जाते हैं, इसलिए परागकणों के साथ-साथ कोप्रोफिलस कवक बीजाणुओं का इस क्षेत्र में दस्तावेजीकरण विभिन्न वनस्पति प्रकारों के संबंध में शाकाहारी जीवों के प्रभाव की व्याख्या करने के लिए उपयोगी हो सकता है। चूंकि कोप्रोफिलस कवक बीजाणु केवल बहुत कम दूरी तक फैले होते हैं, वे मूल रूप से स्थानीय होते हैं और पराग कणों के साथ तलछट में जमा होते हैं और इसलिए मौजूदा वनस्पति के संबंध में शाकाहारी जीवों की स्थानीय उपस्थिति के संकेतक होते हैं। पिछले पेलीनोलॉजिकल अध्ययनों में अक्सर कोप्रोफिलस कवक बीजाणुओं की उपस्थिति दर्ज नहीं की गई है, इसलिए क्षेत्र में शाकाहारी जानवरों की उपस्थिति और बहुतायत को निर्धारित करने के लिए इसका उपयोग नहीं किया जा सकता है। इन शाकाहारी जीवों के कंकाल अवशेषों की अनुपस्थिति में, कोप्रोफिलस कवक बीजाणु जैसे *स्पोरोरमीला*, *सोरडेरिया*, आदि एक महत्वपूर्ण प्रॉक्सी के रूप में काम कर सकते हैं जिसका उपयोग जड़ी-बूटियों की उपस्थिति, प्रकार और बहुतायत और स्थानीय पर्यावरण पर उनके प्रभाव के संबंध में किसी क्षेत्र के पुरातन काल के आंकलन के लिए किया जा सकता है।

आजकल, क्वाटरनरी काल के दौरान पुरापारिस्थितिकी के संबंध में पुराशाकाहार विश्लेषण में वैश्विक रुचि बढ़ रही है, विशेष रूप से संभावित आहार परिवर्तनों के संबंध में, जिन्होंने प्लीस्टोसीन-होलोसीन मेगाहर्बिवोर्स विलुप्त होने (जैसे वूली राइनो और मैमथ) में योगदान दिया हो सकता है, इस प्रकार, यह आधुनिक जैविक एनालॉग (अनुरूप) भी क्वाटरनरी के दौरान निक्षेपित कोप्रोलाइट और तलछटी वर्गों में पुरापारिस्थितिकी विश्लेषण के माध्यम से मेगाफॉनल विलुप्त होने के संभावित कारणों को खोजने में सहायता कर सकता है।

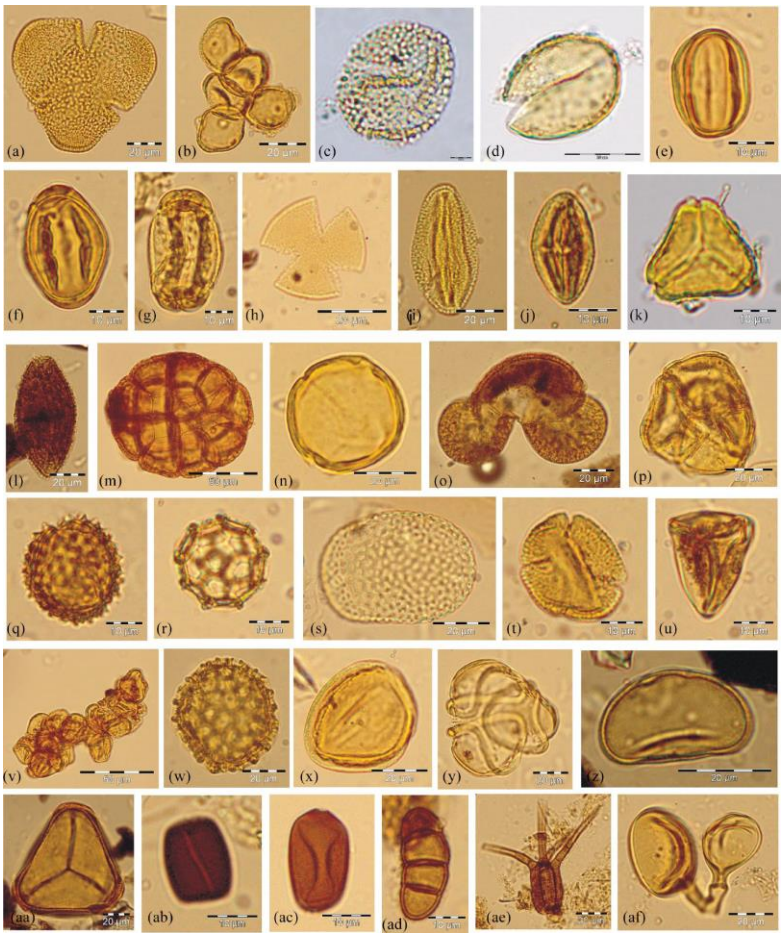

चित्र 2 . काजीरंगा राष्ट्रीय उद्यान की मिट्टी के नमूनों से प्राप्त पराग एवं कवक बीजाणु

जबकि दुनिया के उष्णकटिबंधीय क्षेत्रों में राष्ट्रीय उद्यानों में पुराशाकाहार के संबंध में पुरावनस्पति और जलवायु को समझने हेतु कुछ शोध किए गए हैं, एशिया में राष्ट्रीय उद्यानों और वन्यजीवों में विभिन्न प्रकार की वनस्पतियों के संबंध में पराग निक्षेपण पर बहुत कम शोध किया गया है।

विभिन्न वनस्पति प्रकारों का आधुनिक पराग अध्ययन और KNP में विभिन्न भूमि-उपयोग के क्षेत्रों एवं वनस्पति के साथ एक अच्छा तालमेल देखने को मिलता है। हालाँकि, क्षेत्र दर क्षेत्र कवक बीजाणुओं के संयोजनों में कुछ भिन्नताएँ भी अवश्य दर्ज होती है। एक समग्र पराग आरेख (स्पेक्ट्रा), आधुनिक पराग कण के वितरण एवं ऊपरी सतह (मिट्टी) में जमाव को वर्तमान वनस्पति से उसकी संबंधता को दर्शाता है। KNP सदाबहार वन से स्थापित आधुनिक पराग स्पेक्ट्रम में वृक्षीय, गैर- वृक्षीय पराग टैक्सा, कोप्रोफिलस कवक बीजाणु की उच्च बहुतायत दर्ज की गयी है।

स्वाति त्रिपाठी* एवं साधन कुमार बसुमतारी
क्वाटरनरी प्रयोगशाला,
बीरबल साहनी पुराविज्ञान संस्थान, लखनऊ
*ई-मेल: swati.tripathi@bsip.res.in

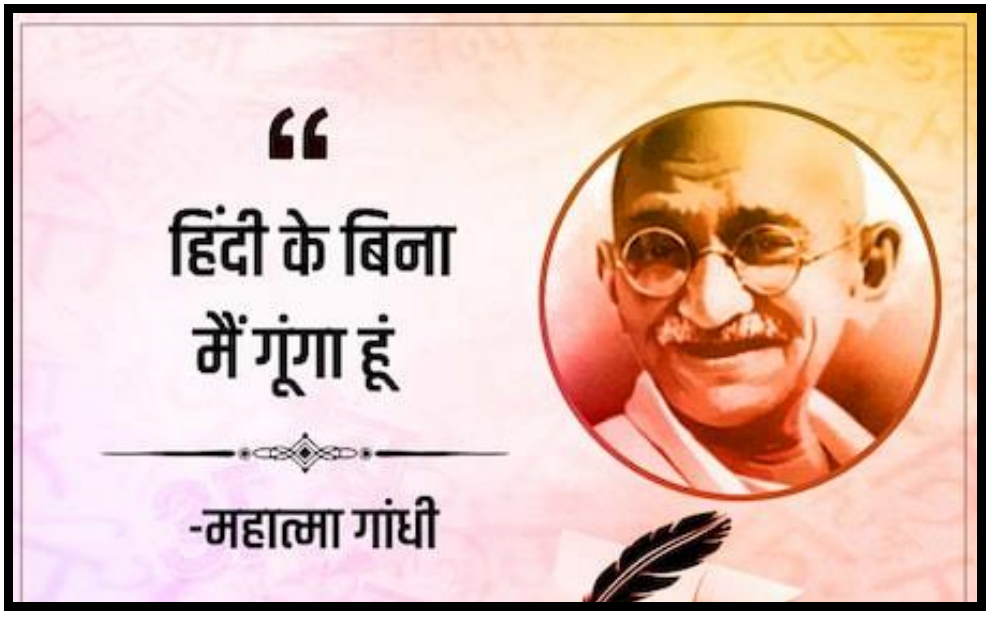

बढ़ते कार्बन उत्सर्जन के कारण सदाबहार जंगलों के अस्तित्व को खतरा: पुरासाक्ष्यों से मिले संकेत

भूमध्यरेखीय वर्षावन, जिन्हें अक्सर पृथ्वी के फेफड़े कहा जाता है, पृथ्वी का यह सबसे समृद्ध जैव विविधता के बिन्दु हैं जो वर्तमान समय में मानव-जनित कार्बन उत्सर्जन में अभूतपूर्व वृद्धि के कारण अनिश्चितता का सामना कर रहे हैं। इस अध्ययन में पृथ्वी पर बढ़े हुए कार्बन उत्सर्जन के गंभीर परिणामों पर प्रकाश डालता है। यह शोध वायुमंडलीय कार्बन डाइऑक्साइड (CO_2) के स्तर और भूमध्यरेखीय क्षेत्रों में जलीय चक्र के बीच संबंधों के बारे में है।

यह शोध गुजरात के कच्छ क्षेत्र के पनान्द्रो लिग्नाइट खदान से प्राप्त लगभग 53.7 मिलियन वर्ष पुराने चट्टानों से प्राप्त जीवाश्म बीजाणु-पराग पर किया गया था। उस समय वायुमंडलीय CO_2 सांद्रता 1000 पीपीएमवी से अधिक थी। स्थलीय तलछटों में जीवाश्म बीजाणु-पराग समकालीन वनस्पतियों का सूचक होते हैं और इन्हीं को वनस्पति पुनर्संरचना और पुराजलवायु विविधताओं में परिवर्तन का आकलन करने के लिए प्रत्यक्ष प्रॉक्सी के रूप में उपयोग इस शोध में भी किया गया है। शोध के परिणाम उस दौरान की वर्षा में उल्लेखनीय कमी दर्शाते हैं। इस गिरावट के कारण उस समय का पारिस्थितिकी प्रणालियों का परिचालन बदल गया और सदाबहार वनों के स्थान पर पर्णपाती वनों का विस्तार हुआ।आज के परिपेक्ष में यह अध्ययन बहुत महत्वपूर्ण है क्योंकि मानवीय गतिविधियों के कारण वायुमंडलीय CO_2 का स्तर लगातार बढ़ रहा है, इसलिए अध्ययन भूमध्यरेखीय वर्षा वनों और उनके द्वारा संरक्षित जैव विविधता वाले 'हॉटस्पॉट' के अस्तित्व के लिए संभावित खतरे के बारे सचेत करता है। उस समय कम वर्षा के कारण शुष्क मौसम की लंबाई में वृद्धि अनुमानित की गई है जोकि सीधे तौर पर उस समय के उष्णकटिबंधीय पारिस्थितिक तंत्र के समुत्थान को चुनौती देती प्रतीत होती है।

इस लेख दिए गए निष्कर्ष कार्बन उत्सर्जन को कम करने और एक संभावित खतरे से भूमध्यरेखीय वर्षावनों की रक्षा करने की तत्काल आवश्यकता को उजागर करते हैं। सरकारों और वैश्विक नीतिनिर्धारकों को भावी पीढ़ियों के लिए इन महत्वपूर्ण पारिस्थितिकी प्रणालियों की सुरक्षा के लिए अब समुचित कदम उठाने चाहिए।

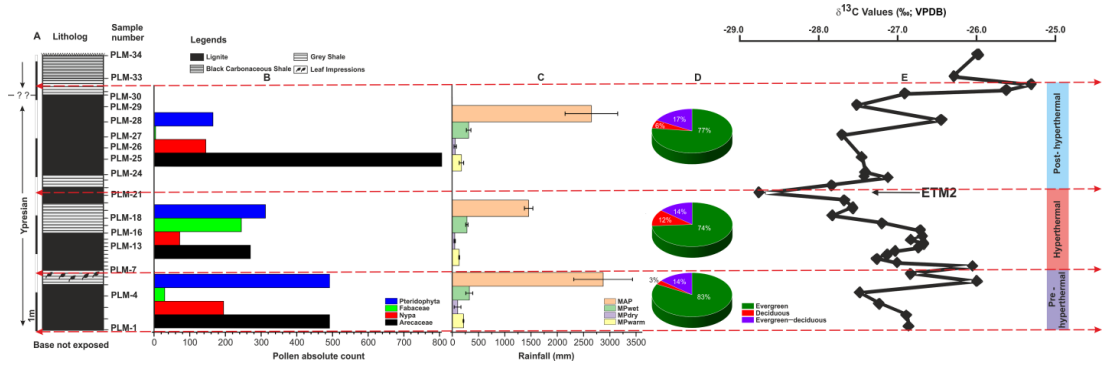

चित्र 1. समेकित चित्र जिसमें लिथोलॉग, पुरावनस्पति संयोजन, पुनर्निर्धारित वर्षा, वन प्रकार और कार्बन-13 समस्थानिक डेटा दिखाया गया है। पनांद्रो लिग्नाइट खदान का ए.लिथोलॉग पीएलएम के रूप में चिह्नित नमूनों की स्थिति दिखा रहा है। बी. ETM-2 के प्री-हाइपरथर्मल, हाइपरथर्मल और पोस्ट-हाइपरथर्मल चरणों के दौरान वनस्पति में भिन्नता को दर्शाने वाला बार आरेख। सी. बार आरेख औसत वार्षिक वर्षा (एमएपी) , सबसे गर्म महीनों के दौरान वर्षा (एमपीवेट), सबसे शुष्क महीनों (एमपीड्राई) के दौरान वर्षा, प्री-हाइपरथर्मल, हाइपरथर्मल और पोस्ट- के दौरान सबसे गर्म महीनों के दौरान वर्षा के ऋतुकीय वर्षा पुनर्निर्धारण को दर्शाता रहा है। ETM-2 के हाइपरथर्मल चरण। डी. पाई आरेख ETM-2 के प्री-हाइपरथर्मल, हाइपरथर्मल और पोस्ट-हाइपरथर्मल चरणों के दौरान वन प्रकारों के बदलते पैटर्न को दर्शाता है। E. δ13Cवक्र का रेखा आरेख ETM-2 के प्री-हाइपरथर्मल, हाइपरथर्मल और पोस्ट-हाइपरथर्मल चरणों को दर्शाता है।

शोध पत्र का उद्धरण व लिंक- *गौरव श्रीवास्तव, हर्षिता भाटिया, पूनम वर्मा, योगेश पी. सिंह, शैलेश अग्रवाल, टॉर्स्टन अशर, आर.सी. मेहरोत्रा इओसीन अतितापीयता-2 के दौरान भूमध्यरेखीय जल विज्ञान और वनस्पति में एक क्षणिक बदलाव जियोसाइंस फ्रंटियर्स 15 (2024) 101838। https://doi.org/10.1016/j.gsf.2024.101838*

गौरव श्रीवास्तव एवं पूनम वर्मा

बीरबल साहनी पुराविज्ञान संस्थान, लखनऊ

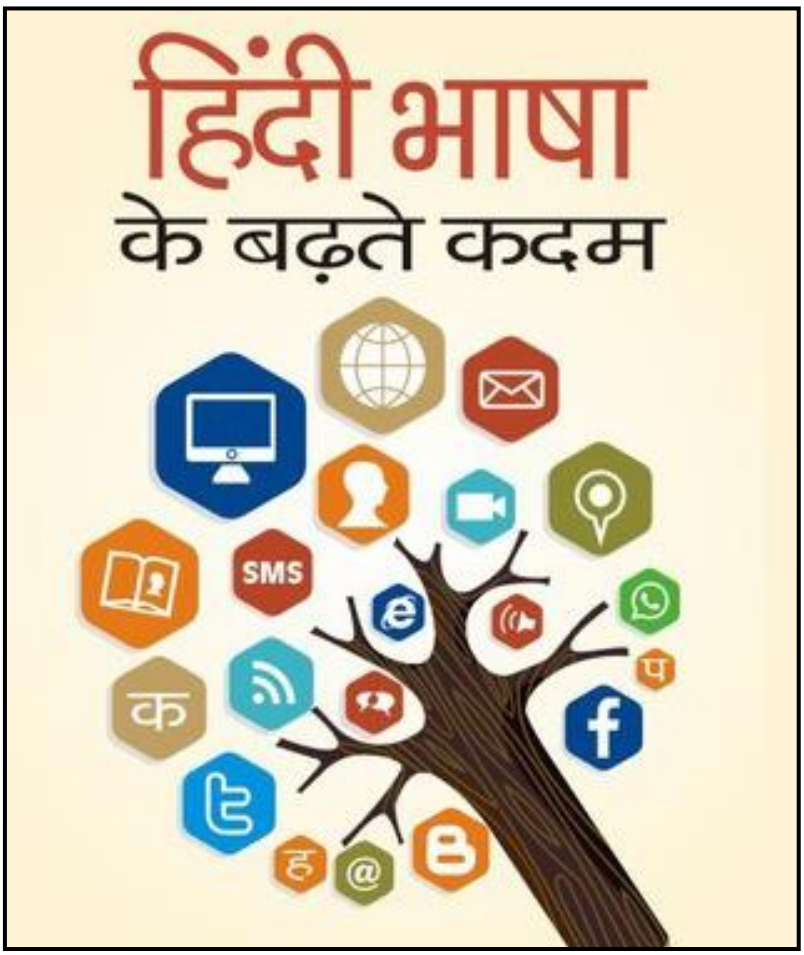

मुख्य मानसून मंडल (C M Z) में भारतीय ग्रीष्मकालीन मानसून (ISM) की तीव्र अवधियों के प्रति अधिक संवेदनशीलता

भारतीय संदर्भ में भारतीय ग्रीष्मकालीन मानसून (ISM) की महत्वपूर्ण भूमिका के कारण, अतीत में इसकी परिवर्तनशीलता और प्रारंभिक सभ्यताओं पर इसके प्रभाव का व्यापक अध्ययन किया गया है। अक्षांश, उन्नतांश तथा समुद्र से दूरी में भिन्नता के कारण भारतीय भूभाग पर ISM वर्षण की तीव्रता भिन्न होती है। सामान्य ISMR में 10% विचलन पूरे क्षेत्र में कृषि उत्पादन और जल उपलब्धता को प्रभावित करता है। लगभग ~20% का बदलाव अत्यधिक बाढ़ या व्यापक सूखे के रूप में विनाशकारी हो सकता है, जो सीधे तौर पर इस घनी आबादी वाले क्षेत्र के कृषि उत्पादन, आर्थिक विकास और समाज कल्याण को सीधे प्रभावित करता है। इस प्रकार, ISM की परिवर्तनशीलता को संबोधित करना वर्तमान जलवायु विचलन को समझने और भविष्य की जलवायु प्रवृतियों का अनुमान लगाने के लिए आवशयक है। इस पृष्ठभूमि में, वर्तमान समीक्षा का उद्देश्य भारत के मुख्य मानसून मंडल (CMZ) से अंतिम अधिकतम हिमनद (LGM; पिछले ~ 20,000 वर्ष) से जलवायु परिवर्तन और मानसूनी परिवर्तनशीलता की समीक्षा करना है। हमने मध्य भारतीय CMZ (कोर और परिधीय CMZ दोनों) से भारतीय ग्रीष्मकालीन मानसून वर्षा (ISMR) परिवर्तनशीलता पर एक व्यापक साहित्य समीक्षा का संचालन किया और ISMR पर वैज्ञानिक अनुसंधान की गहराई और विस्तार को समझने के लिए प्रासंगिक जानकारी का संश्लेषण किया और इसके स्थानिक-अस्थायी परिवर्तनशीलता का भारतीय संदर्भ में विश्लेषण किया।

पैलियोजियोग्राफी पैलियोक्लाइमेटोलॉजी पैलियोइकोलॉजी शोध पत्रिका में प्रकाशित यह लेख एलजीएम (आज से ~ 20,000 वर्ष) काल से ISMR परिवर्तनशीलता पर मध्य भारतीय CMZ से परागाणवीय आंकड़ो को संकलित करता है। परागाणु विज्ञान अतीत की वनस्पति गतिकी और समकालीन जलवायु परिवर्तन के पुनर्निर्माण हेतु विभिन्न स्थलीय पुराजलवायु प्रॉक्सी के मध्य एक मूल्यवान उपकरण है। परागाणु विज्ञान के अलावा अन्य अजैविक प्रॉक्सी जैसे भू-रसायन विज्ञान और समस्थानिक पर उपलब्ध अन्य आंकड़े भी शामिल किए गए। इसके अतिरिक्त, अध्ययन क्षेत्र के आसपास जलवायु परिवर्तन को प्रेरित करने वाले बाध्यकारी कारकों को समझना एक अन्य उद्देश्य है। वैश्विक टेलीकनेक्शन पर विचार करना इस शोध का तीसरा उद्देश्य है।

18°N और 28°N अक्षांशों तथा 65°E और 88°E देशांतरों के मध्य स्थित CMZ ये वह क्षेत्र या जोन है (ज्यादातर मध्य भारत में) जिसमें जुलाई और अगस्त (भारत में सर्वाधिक वर्षा वाले महीने) माह के दौरान वर्षा में होने वाला परिवर्तन वार्षिक ISMR की तीव्रता का अच्छी तरह से प्रतिनिधित्व करता है। CMZ का ISM उतार-चढ़ाव के प्रति संवेदनशील होने के कारण कमजोर या तीव्र मानसून अवधियों की पहचान हेतु प्रमुख क्षेत्र माना जाता है, जिसे क्रमशः 'ब्रेक' या 'सक्रिय' अवधि के रूप में संदर्भित किया जाता है। यह देखा गया कि मध्य CMZ में एलजीएम ठंडा और शुष्क (कम मानसून) था, जबकि परिधीय CMZ में एलजीएम के दौरान पूर्वोत्तर मानसून (NEM: अक्टूबर-दिसंबर) मजबूत हुआ। वैश्विक स्तर पर देखे गए यंगर ड्रायस (YD: ~12.9–11.7 हज़ार वर्ष पूर्व) मध्य CMZ क्षेत्र में ठंडा और शुष्क (कमजोर आईएसएम) था, जबकि परिधीय CMZ आंकड़ों ने मानसूनी प्रभाव का सुझाव दिया। होलोसीन जलवायु अनुकूलतम (HCO; आज से 7000–4000 वर्ष पूर्व) को मध्य भारतीय CMZ में अतुल्यकालिक पाया गया। प्रतिकूल जलवायु घटनाएं, जैसे 8.2 हज़ार वर्ष एवं 4.2 हज़ार वर्ष के मध्य CMZ में असंतोषजनक ढंग से दर्ज की गईं, संभवतः इसलिए कि मध्य CMZ कमजोर मानसून की तुलना में तीव्र मानसून चरणों के प्रति अधिक संवेदनशील है। पिछली दो सहस्राब्दियों को जलवायु की दृष्टि से गतिशील देखा गया है, जिसमें रोमन गर्म अवधि (आरडब्ल्यूपी;आज से 2500-1450 वर्ष पूर्व), मध्ययुगीन जलवायु विसंगति (एमसीए; आज से 1050-650 वर्ष पूर्व)

तथा वर्तमान गर्म अवधि (सीडब्ल्यूपी; आज से 100 वर्ष पूर्व से वर्तमान तक) के दौरान तीव्र ISM चरण व्यक्त हुए; बीच-बीच में कमजोर ISM चरण, जैसे डार्क युग शीत अवधि (डीएसीपी; आज से 1450-1050 वर्ष पूर्व) एवं लघु हिमयुग (एलआईए;आज से 650-100 वर्ष पूर्व) भी देखे गए।

ईएनएसओ (ENSO) को व्यापक रूप से ISM वर्षा के प्रमुख जलवायु कारकों में से एक माना जाता है। ENSO (अल नीनो) घटनाओं का सकारात्मक चरण आम तौर पर कम ISMR के साथ होता है, जबकि ENSO (ला नीना) घटनाओं का नकारात्मक चरण आम तौर पर भारतीय क्षेत्र में अत्यधिक वर्षा की स्थिति से संबंधित होता है। एल नीनो वर्ष में विशिष्ट ब्रेक चरण का प्रभुत्व होता है, जबकि ISMR का सक्रिय चरण ला नीना वर्ष से जुड़ा हुआ है। इसके अलावा, एल नीनो-ब्रेक संबंध ईएनएसओ-मानसून संबंध से स्वतंत्र है और ला नीना-सक्रिय संबंध ईएनएसओ-मानसून संबंध से जुड़ा हुआ है। चूंकि CMZ, ISM उतार-चढ़ाव के प्रति संवेदनशील है, इसलिए इसे कमजोर या तीव्र मानसून अवधि की पहचान के लिए प्रमुख क्षेत्र माना जाता है, जिसे क्रमशः 'ब्रेक' या 'सक्रिय' अवधि कहा जाता है; इसलिए, वर्तमान अध्ययन महत्वपूर्ण हो सकता है।

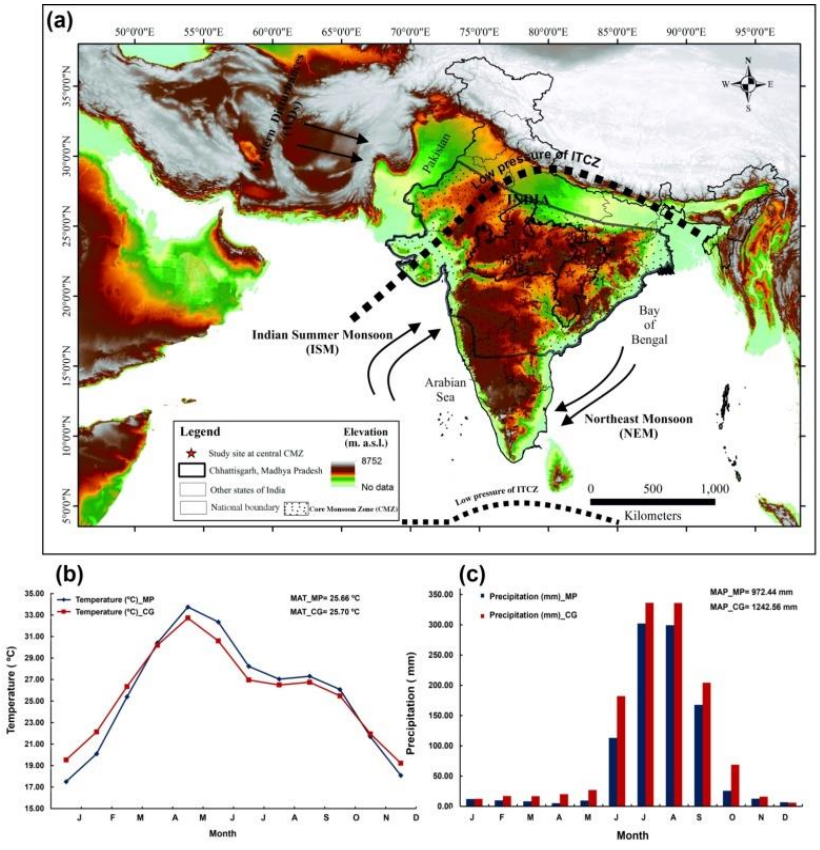

चित्र 1. (ए) भारत का डिजिटल उन्नयन मानचित्र (डीईएम), जो मध्य CMZ (मध्य प्रदेश और छत्तीसगढ़) में अध्ययन क्षेत्रों (लाल सितारे) का स्थान दर्शाता है; बिदीदार रेखा भारत के कोर मानसून मंडल (CMZ) को दर्शाती है; साथ ही, दक्षिण पश्चिम मानसून (एसडब्ल्यूएम)/भारतीय ग्रीष्मकालीन मानसून (आईएसएम), उत्तर पूर्व मानसून (एनईएम), पश्चिमी हवाएं (पश्चिमी विक्षोभ: डब्ल्यूडी), और आईटीसीजेड की स्थिति (ज़ोरज़ी एट अल., 2015; कोटलिया एट अल., 2015) को दर्शाती है।

(बी) जलवायु अनुसंधान इकाई समय श्रृंखला (सीआरयू टीएस) 4.03 जलवायु डेटा बिंदु, 1901-2018, मध्य भारत के मध्य प्रदेश और छत्तीसगढ़ राज्यों के आसपास औसत तापमान दिखा रहा है। ये आंकड़े 1901-2018 की अवधि के लिए 119-वर्षीय जलवायु औसत हैं। एमएटी: औसत वार्षिक तापमान।

(सी) जलवायु अनुसंधान इकाई समय श्रृंखला (सीआरयू टीएस) 4.03 जलवायु डेटा बिदु, 1901-2018, मध्य भारत के मध्य प्रदेश और छत्तीसगढ़ राज्यों के आसपास औसत मासिक वर्षा दर्शाता है। ये आंकड़े 1901-2018 की अवधि के लिए 119-वर्षीय जलवायु औसत हैं। एमएटी: औसत वार्षिक वर्षा।

एलजीएम से जलवायु परिवर्तन और भारतीय ग्रीष्मकालीन मानसून वर्षा (ISMR) कि परिवर्तनशीलता की जानकारी और समझ, वर्तमान आईएसएम-प्रभावित जलवायु परिस्थितियों के साथ-साथ संभावित भविष्य की जलवायु प्रवृत्तियों और अनुमानों की हमारी समझ को मजबूत करने के लिए अत्यधिक महत्वपूर्ण हो सकती है। हम जानते हैं कि ISM भारत की अर्थव्यवस्था में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है, जो कुल वार्षिक वर्षा का लगभग 80% हिस्सा है और कृषि उत्पादकता को प्रभावित करता है, जिससे अंततः देश की सामाजिक-आर्थिक स्थिति पर प्रभाव पड़ता है। विशेष रूप से, आईएसएम, जो जून से सितंबर (जेजेएएस) तक होता है, भारत में खरीफ फसलों (ग्रीष्म ऋतु में उगाई जाने वाली फसलों) के विकास हेतु वर्षा का प्राथमिक स्रोत है। ISM वर्षा के स्वरूप में परिवर्तन ने भारतीय समाज और भूमि उपयोग के पैटर्न पर महत्वपूर्ण प्रभाव डाला है। इसके विपरीत, पूर्वोत्तर मानसून (एनईएम), जो अक्टूबर से दिसंबर (ओएनडी) तक होता है, रबी फसलों (सर्दियों में उगाई जाने वाली फसलें) की वृद्धि के लिए उत्तरदायी है।

इसके अतिरिक्त, ISM की विविधताओं के संभावित प्रभावों में भारत और दक्षिण एशिया के अन्य हिस्सों में सूखा और बाढ़ शामिल हैं, जो इस घनी आबादी वाले क्षेत्र के कृषि उत्पादन, आर्थिक विकास और सामाजिक कल्याण को सीधे प्रभावित करते हैं। इसके अलावा, वर्तमान अध्ययन में उत्पन्न उच्च-विभेदन वाले पुराजलवायु अभिलेख भविष्य के जलवायु पूर्वानुमानों हेतु पुराजलवायवी मॉडल विकसित करने और सामाजिक प्रासंगिकता के प्रमुख पहलू के साथ वैज्ञानिक रूप से सुदृढ़ नीति नियोजन के लिए भी सहायक हो सकते हैं। यह भविष्य में जलवायु परिवर्तन परिदृश्यों को बेहतर ढंग से समझने के लिए मॉडल तैयार करने में सहायक होगा।

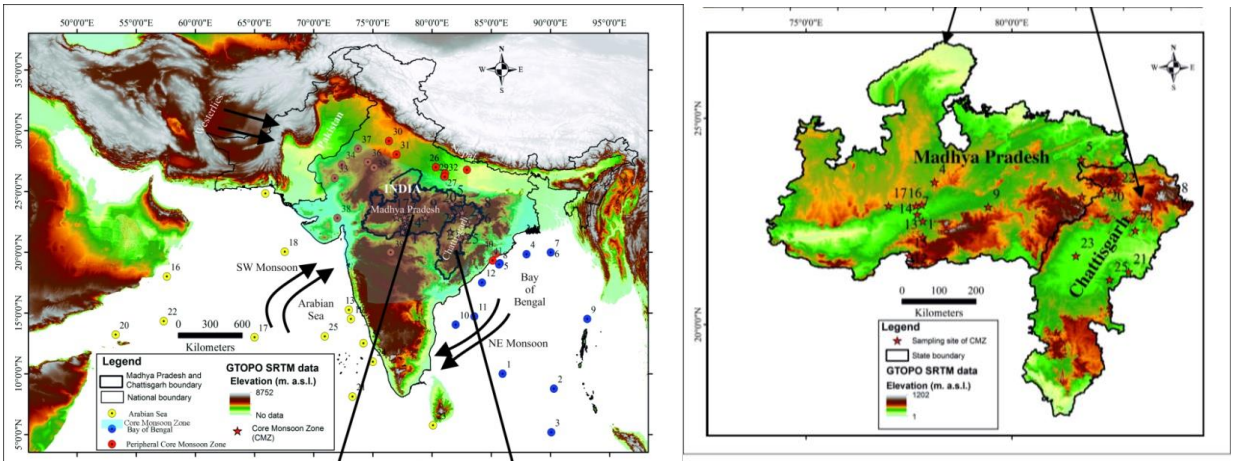

चित्र 2. भारत का डिजिटल उन्नयन मानचित्र (डीईएम) जिसमें परिधीय CMZ. (लाल घेरे), बंगाल की खाड़ी (बैंगनी घेरे) और अरब सागर (पीले घेरे) का स्थान दर्शाया गया है; नीला छायांकित क्षेत्र भारत का मुख्य मानसून क्षेत्र (CMZ) है।

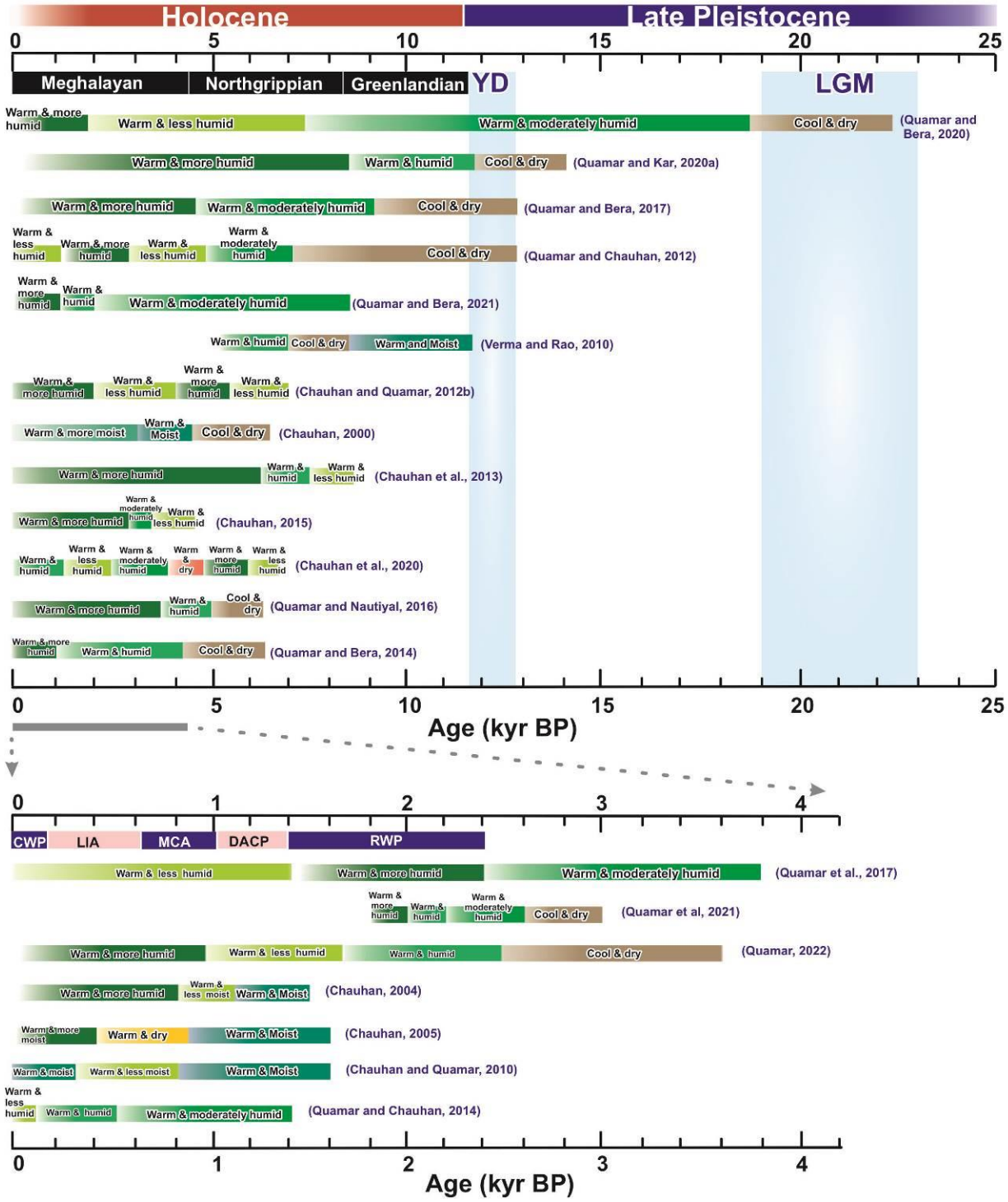

चित्र 3. CMZ (मध्य प्रदेश और छत्तीसगढ़) के मध्य भाग में किए गए अध्ययनों से प्राप्त वैश्विक जलवायु घटनाओं को प्रदर्शित करने वाली जलवायु पुनर्निर्माण को दर्शाया गया है।

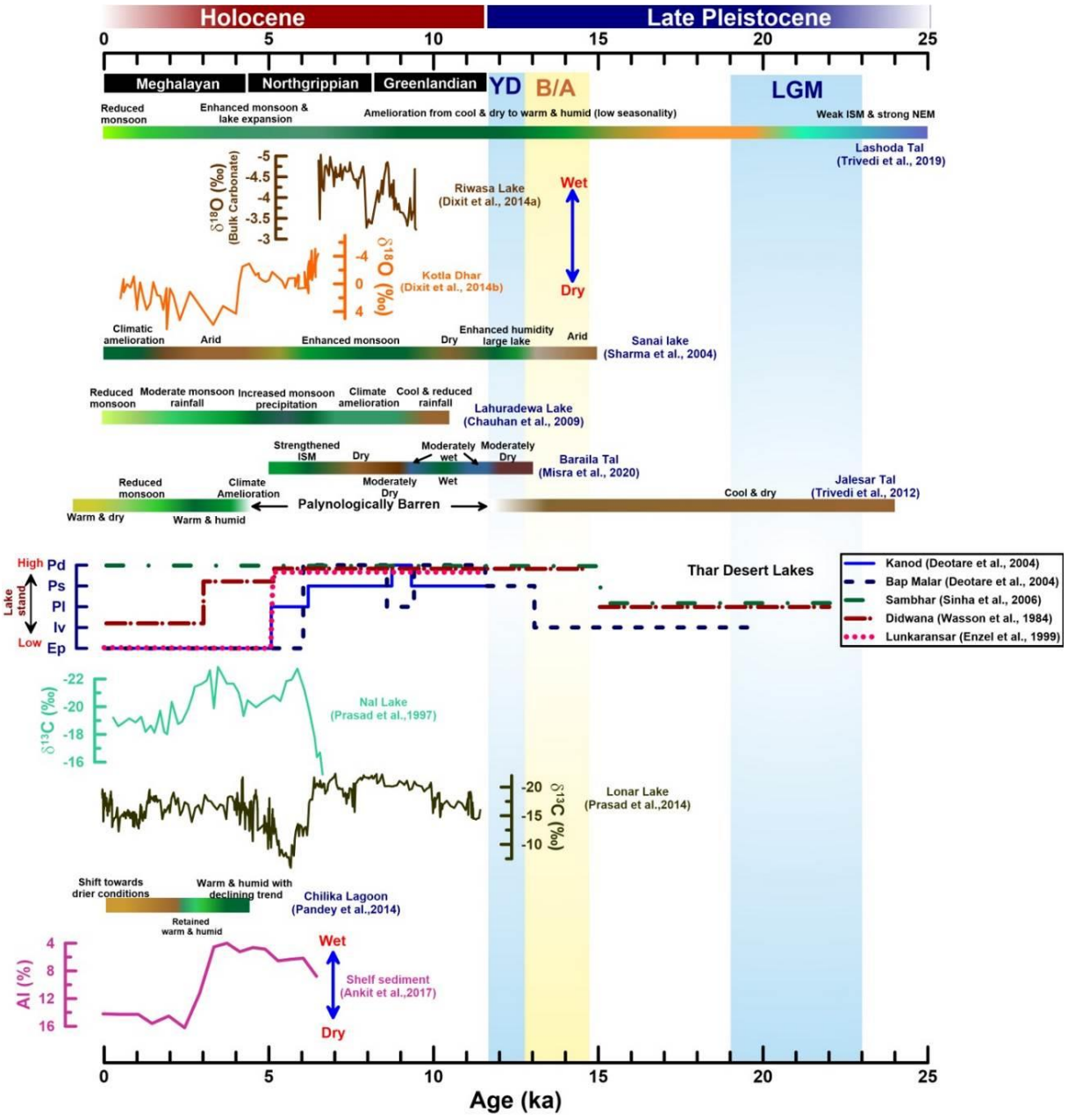

चित्र 4. CMZ (गुजरात, राजस्थान, उत्तरी महाराष्ट्र, उत्तर प्रदेश, हरियाणा, बिहार, झारखंड और ओडिशा) के परिधीय क्षेत्रों में स्थित अध्ययनों से प्राप्त वैश्विक जलवायु घटनाओं को दर्शाने वाली जलवायु पुनर्निर्माण को दर्शाया गया है।

मोहम्मद फ़िरोज़ क़मर, बिस्वजीत ठाकुर, रतन कर

बीरबल साहनी पुराविज्ञान संस्थान, लखनऊ

उपासना स्वरूप बनर्जी

पृथ्वी विज्ञान मंत्रालय, नई दिल्ली, भारत

पश्चिमी घाट, भारत में लघु हिमयुग (LIA) नम तथा आद्र जलवायु सेप्रभावित: परागाणविक साक्ष्य

भारत के पश्चिमी घाट में हाल ही में किए गए एक शोध के अनुसार मध्य (1671-1942 CE) वैश्विक लघु हिमयुग (LIA) के दौरान समान रूप से ठंडी और शुष्क जलवायु (कम मानसूनी वर्षा) की पारंपरिक धारणा को चुनौती मिलती है। इसके अतिरिक्त, अध्ययन ने संकेत दिया है कि लघु हिम युग (LIA) के दौरान गर्म और आद्र जलवायु रही होगी, जो संभवतः बढ़ी हुई उत्तर-पूर्व मानसून (NEM) वर्षा द्वारा प्रेरित थी। साथ ही, आद्र (गीला) लघु हिमयुग, जल-जलवायु विषमता को दर्शाता है।

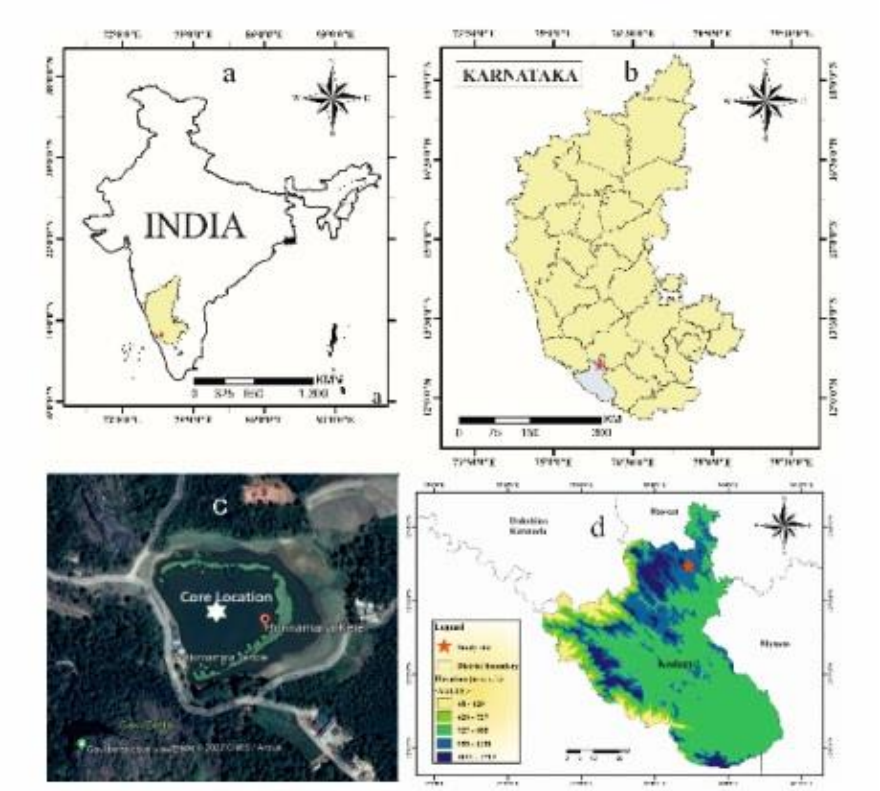

चित्र 1. कोडागु जिला, बैंगलोर (कर्नाटक राज्य), पश्चिमी घाट, भारत का शटल रडार स्थलाकृतिक मिशन (एसआरटीएम) डिजिटल उन्नयन मानचित्र (डीईएम), अध्ययन क्षेत्र का स्थान वर्णित है (लाल सितारा अध्ययन क्षेत्र को दर्शाता है) (डी; निचला पैनल, दाएं वाला), भारत का भौगोलिक मानचित्र जिसमें कर्नाटक राज्य को दर्शाया गया है (ए; ऊपरी पैनल, बाएं ओर वाला); इनसेट, दाएँ: कर्नाटक राज्य का भौगोलिक मानचित्र, जिसमें कोडागु जिला दर्शाया गया है (बी; ऊपरी पैनल, दायीं ओर वाला, लाल सितारा चिह्न के साथ)। यह चित्र आर्कजीआईएस 10.3 का उपयोग करके बनाया गया है। (सी) गूगल अर्थ छवि, जो भारत के पश्चिमी घाट, बेंगलुरू (कर्नाटक राज्य) के कोडागु जिले में एचकेएल नमूना स्थल (लाल घेरे में काला बिंदु) और झील के केंद्र में कोर स्थान (निचला पैनल; बाई ओर, सफेद सितारा चिह्न) को दिखती है।

पश्चिमी घाट जून से सितंबर के दौरान दक्षिण-पश्चिम (ग्रीष्म) मानसून (SWM) तथा अक्टूबर से दिसंबर के दौरान उत्तर-पूर्व शीतकालीन मानसून (NEM) दोनों से प्रभावित है। ऐसे क्षेत्र से वनस्पति की गतिकी और संबंधित जल-जलवायु परिवर्तनशीलता को समझना, जो SWM और NEM दोनों से प्रभावित था, पिछली सहस्राब्दी के दौरान मानसून परिवर्तनशीलता को समझने में महत्वपूर्ण हो सकता है। भारत के पश्चिमी घाटों से मध्य 1219-1942 CE पराग-आधारित वनस्पति गतिकी तथा समकालीन जलवायु परिवर्तन तथा मानसून परिवर्तनशीलता के अध्ययन का पुनर्निर्माण किया गया, जिसके

अनुसार आद्र (नम) LIA के रिकॉर्ड देखने को मिले।

वैज्ञानिकों द्वारा कर्नाटक में होन्नामनाकेरे झील से क्रोड अवसाद के नमूने एकत्र किए गए तथा उनमें जमा पराग का विश्लेषण किया गया, ताकि भारत के पश्चिमी घाटों से 1219-1942 CE के दौरान वनस्पति आधारित जलवायु परिवर्तन और मानसूनी परिवर्तनशीलता का पता लगाया जा सके। अध्ययन क्षेत्र से मुख्य रूप से नम/अर्ध-सदाबहार-शुष्क उष्णकटिबंधीय पर्णपाती वन दर्ज किए गए। *कैटेना* पत्रिका में प्रकाशित इस अध्ययन से पता चला है कि भारत के पश्चिमी घाट से लघु हिमयुग (LIA) के दौरान आद्र स्थितियों के हस्ताक्षर के अभिलेख संभवतः NEM में वृद्धि के कारण है ।

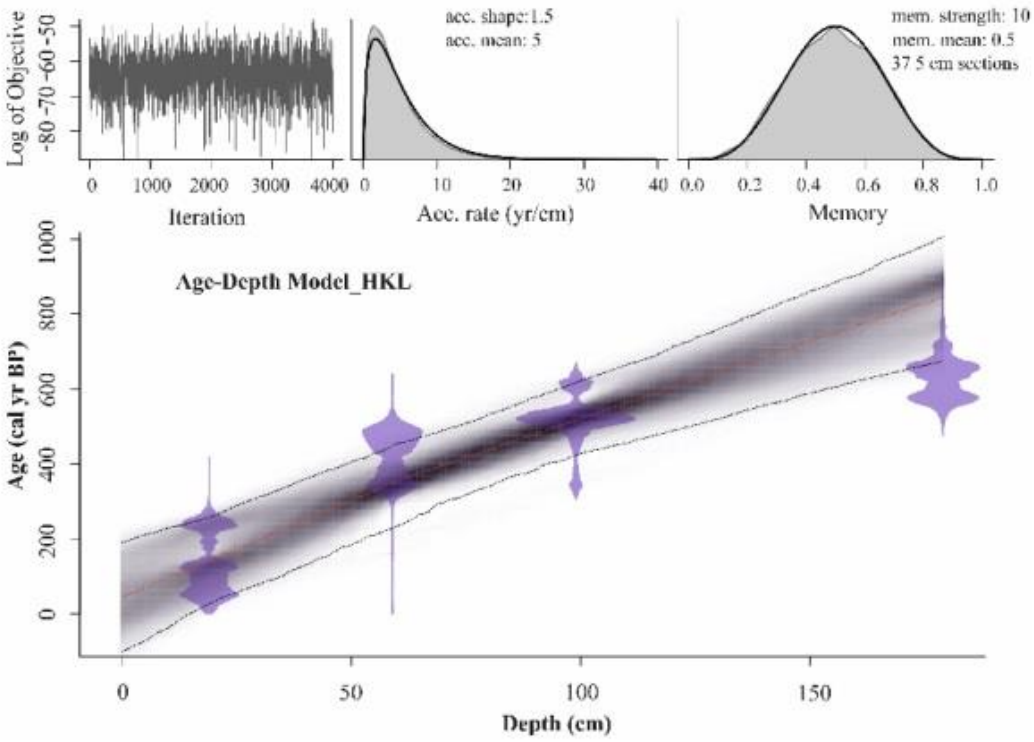

चित्र 2. आर पैकेज आरबेकन (ब्लाउ और क्रिस्टन, 2011) का उपयोग करके निर्मित एचकेएल का बायेसियन आयु-गहन मॉडल। नीली पट्टियाँ AMS 14C आयु वितरण को दर्शाती हैं, जबकि रेखा ग्राफ का ग्रेस्केल संभाव्यता को दर्शाता है; बिंदीदार लाल रेखा औसत आयु का अनुसरण करती है।

अंतर उष्णकटिबंधीय अभिसरण क्षेत्र (ITCZ) का उत्तर की ओर बढ़ना, सकारात्मक तापमान विसंगतियां, सनस्पॉट संख्या में वृद्धि और उच्च सौर गतिविधि जलवायु परिवर्तन तथा एसडब्लूएम में वृद्धि को प्रेरित कर सकता है। LIA के दौरान पूरे भारतीय उपमहाद्वीप में ISM के सबसे कमजोर चरण को सामान्य तौर पर ITCZ के दक्षिण की ओर स्थानांतरण हेतु उत्तरदायी माना गया है, जो उत्तरी गोलार्ध में ठंड के दौरान भूमध्य रेखा के पार उत्तर की ओर ऊर्जा प्रवाह में वृद्धि के परिणामस्वरूप हुआ।

वर्तमान अध्ययन में जनित उच्च-विभेदन वाले पुराजलवायु संबंधी अभिलेख, भविष्य के जलवायु पूर्वानुमानों के लिए पुराजलवायु मॉडल विकसित करने और वैज्ञानिक दृष्टिकोण से मजबूत नीति नियोजन के लिए भी उपयोगी हो सकते हैं। होलोसीन अवधि के दौरान जलवायु परिवर्तन और भारतीय ग्रीष्मकालीन मानसून (ISM) परिवर्तनशीलता का ज्ञान और समझ, वर्तमान

ISM-प्रभावित जलवायु परिस्थितियों की समझ को दृढ़ता देने के साथ-साथ भविष्य की जलवायु प्रवृत्तियों और अनुमानों के लिए अत्यधिक रुचि का विषय हो सकता है।

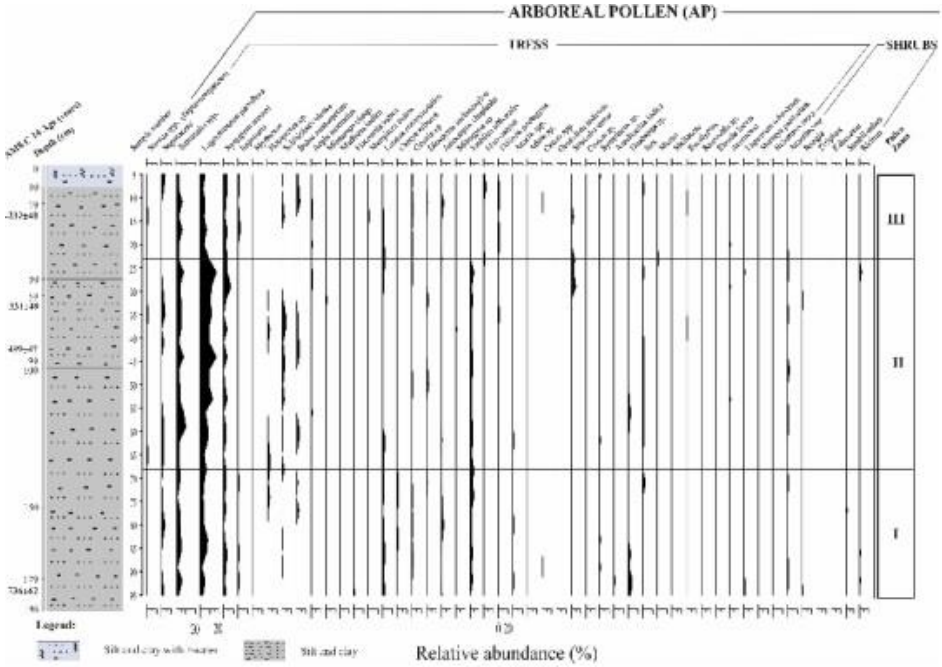

चित्र 3. एच.के.एल. अवसाद कोर, पश्चिमी घाट, भारत से वृक्षीय वर्ग (वृक्ष और झाड़ियाँ) को दर्शाता पराग आरेख।

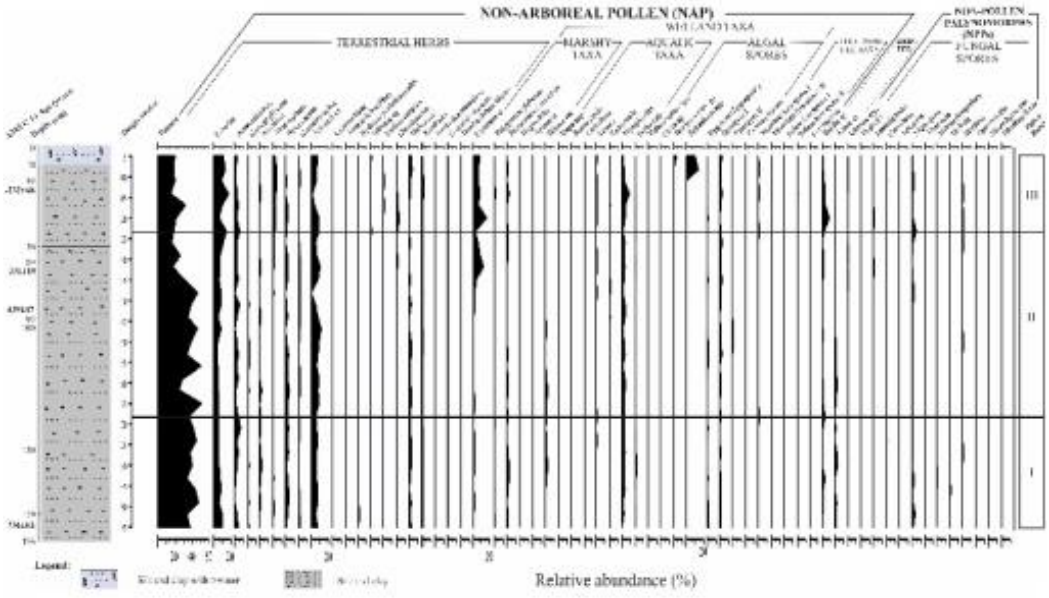

चित्र 4. गैर-वृक्षीय टैक्सा (शकीय टैक्सा जिसमें स्थलीय जड़ी-बूटियां, दलदली टैक्सा, जलीय टैक्सा, साथ ही शैवाल बीजाणु, टेरीडोफाइटिक टैक्सा शामिल हैं), ड्रिफटेड (स्थानांतरित) टैक्सा, कवक बीजाणु और एचकेएल अवसाद कोर, पश्चिमी घाट, भारत से अन्य गैर-पराग पैलिनोमोर्फ (एनपीपी) को दर्शाता पराग आरेख।

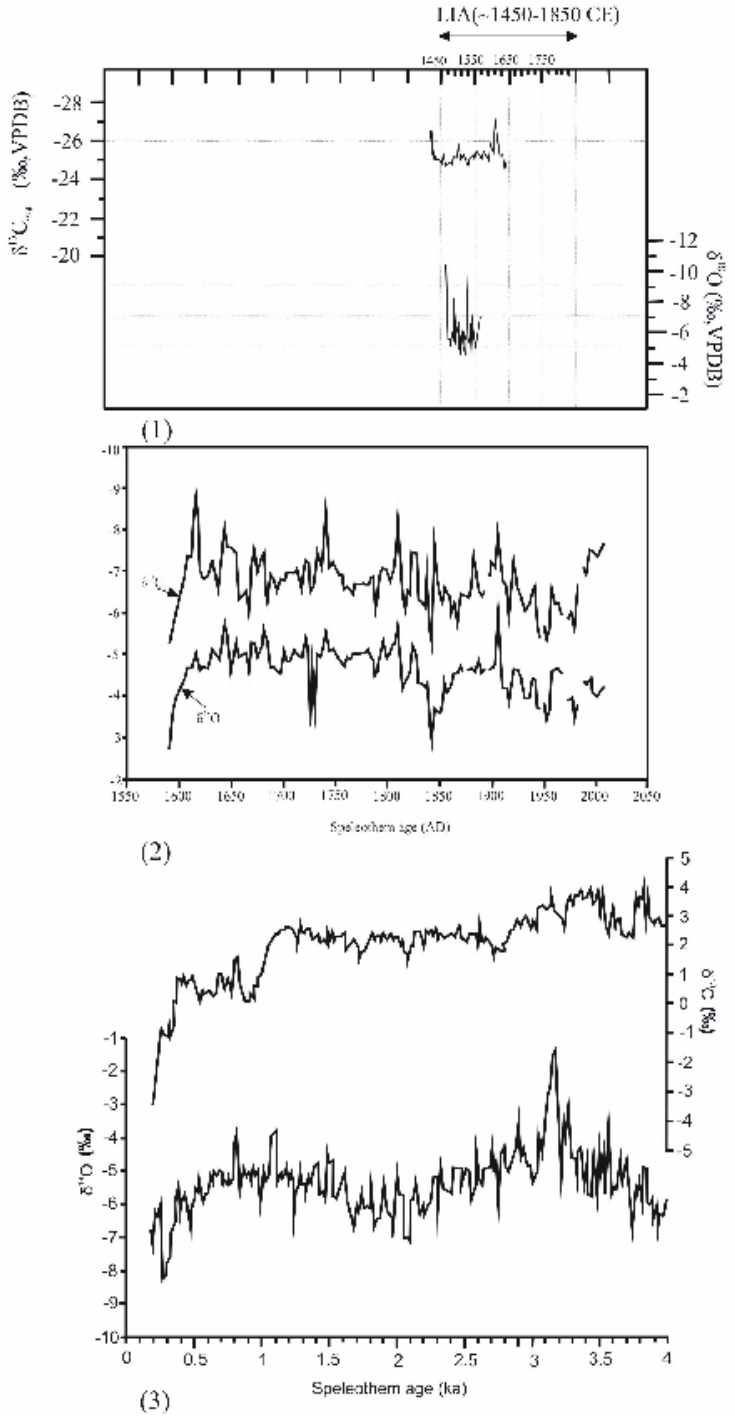

चित्र 5. आर्द्र (नम) LIA, दर्ज किया गया 1). कुमाऊं (उत्तर-पश्चिम हिमालय) से (कौशिक एट अल., 2023), 2). कुमाऊं लघु हिमालय से (कोटलिया एट अल., 2012) और 3). भारतीय मध्य हिमालय से (कोटलिया एट अल., 2015)।

मोहम्मद फिरोज क़मर

बीरबल साहनी पुराविज्ञान संस्थान, लखनऊ

शहरीकरण और वनों की कटाई का मधुमक्खियों के भोजन और पोषण के पैटर्न पर प्रभाव

शहद (मधु) में पराग की उपस्थिति या अनुपस्थिति इसकी प्रमाणिकता, इसकी भौगोलिक उत्पत्ति और परागकण प्रवाह के मौसम प्रमाणन में सहायक है। इसके अलावा, विभिन्न प्रकार के पराग की सापेक्ष प्रचुरता भी पौधों की प्रजातियों, जो शहद के लिए प्रमुख पादप स्रोत के रूप में कार्य करती है, से संबन्धित जांनकारी देने में मदद करती है। साथ ही पादप संसाधनों के संरक्षण के संबंध में स्थानीय लोगों को जागृत करती है।

पिछले दो दशकों के दौरान, भारत के विभिन्न हिस्सों से मेलिसोपेलिनोलॉजिकल अध्ययन (शहद में पराग का अध्यन) ने देश के सबसे बड़े राज्य उत्तर प्रदेश में कृषि विस्तार और शहरी क्षेत्रों में पुष्प विविधता के बारे मे कई खुलासे किये है। नैदानिक परिप्रेक्ष्य में मधुमक्खी पालन उद्योग में मेलिसोपेलिनोलॉजिकल अध्ययन की उपयोगिता पर अभी तक उचित ध्यान नहीं दिया गया है। वर्तमान अध्ययन में हमने उत्तर प्रदेश के अलग-अलग क्षेत्रों से शहद की प्रकृति की जानकारी लेने का प्रयास किया। वर्तमान परिदृश्य में स्थानीय वनस्पतियों में परिवर्तन से प्रेरित मधुमक्खियों की बदलती प्राथमिकताओं को समझने के लिए यह अध्ययन किया गया है। साथ ही यह अध्ययन शहद उपभोक्ताओं को शहद की एलर्जीजन्य संवेदनशीलता से संबंधित उपयोगी जानकारी प्रदान करता है।

पराग के अध्ययन के लिए उत्तर प्रदेश में झांसी, गिरार (दक्षिण-पश्चिमी क्षेत्र) बहराइच, लिलोकपुर (पूर्वी क्षेत्र) मल्लावन, मलिहाबाद, अशाखेड़ा और न्यू हैदराबाद (मध्य क्षेत्र) से आठ शहद के नमूने (चित्र 1) एकत्र किए गए। अध्ययन क्षेत्र आर्द्र उप-उष्णकटिबंधीय है जिसमें दक्षिण-पश्चिम मानसून का वर्चस्व है। औसत न्यूनतम और अधिकतम तापमान क्रमशः 7.6 डिग्री सेल्सियस और 32.5 डिग्री सेल्सियस है और औसत वार्षिक वर्षा 100-60 सेमी है। अधिकांश पौधों की प्रजातियों में फरवरी से अप्रैल के बीच फूल आते हैं।

भारत में, लगभग 0.3 मिलियन मधुमक्खी पालक ~ 60,000 टन (पालतू मधुमक्खी से 55% और जंगली मधुमक्खी से 45%) शहद का उत्पादन करते हैं, जिससे ~ 3000 करोड़ रुपये की कमाई होती है। भारत के विभिन्न हिस्सों में विभिन्न जलवायु परिस्थितियों के कारण भारत की विविध वनस्पति मधुमक्खियों के लिए एक वरदान है, लेकिन वर्तमान समय में जलवायु स्थितियों में अप्रत्याशित बदलाव के कारण प्राकृतिक वनस्पति में बदलाव के साथ-साथ मधुमक्खी पालन में कई बाधाएं आ रही हैं। उत्तर प्रदेश के दक्षिण-पश्चिमी क्षेत्र में शहद के विश्लेषण में स्वदेशी पौधों में, *फेरोनिया लेमोनिया* (कैथ) और *सिज़िजियम क्युमिनी* (जामुन) हैं, लेकिन ग्रामीण व शहरी क्षेत्रों में इनकी अनुपस्थिति में, मधुमक्खियों को अपने आसपास के विभिन्न पौधों पर निर्भर रहना पड़ता है। यहाँ अध्ययन द्वारा पाया गया कि अधिकांश शहद बहु-पुष्पीय प्रकार का होता है।

चिकित्सकीय रूप से, कई लोग *प्रोसोपिस* के पराग के प्रति अति संवेदनशील होते हैं जोकि शहर के शहद में मुख्य अवयव है। यह मधुमक्खियों के आहर के लिए व्यापक रूप से उपलब्ध है क्योंकि इसे रेतीले स्थानों में हरियाली और बंजर भूमि के सुधार के लिए उगाया जाता है। संयुक्त अरब अमीरात में, लगभग 45% रोगियों को *प्रोसोपिस* के पराग में मौजूद प्रोटीन के प्रति संवेदनशीलता का परीक्षण किया गया था। एक सामान्य खरपतवार *एजेरेटम कोनीज़ोइड्स* के पराग को एलर्जीजन्य के रूप में भी जाना जाता है और यह अस्थमा व नासिका शोथ का कारण बन सकता है।

सांख्यिकीय विश्लेषण शहद में इस विदेशी खरपतवार *एजेरेटम कोनीज़ोइड्स* की उच्चतम आवृत्ति को दर्शाता है, जो मधुमक्खियाँ द्वारा इनके अधिक मात्रा में उपयोग को दर्शाता है। लेकिन यह शहद उन लोगों के लिए अनुपयोगी हो सकता है जिन्हें

इसके पराग प्रोटीन से एलर्जी है। मधुमक्खियों द्वारा मधु के उत्पादन के लिए उपयोग किए जाने वाले विदेशी पेड़ *प्रोसोपिस* और *यूकेलिप्टस* की अन्य प्रजातियां भी हैं जिनमें संभावित एलर्जीजन्य गुण भी हैं। इसके अलावा *सिजिजियम क्युमिनी* (जामुन), *फेरोनिया लेमोनिया* (कैथ), *जिजिफस* (बेर) आदि मुख्य स्वदेशी पेड़ के पराग भी मधु में पाए गये हैं।

इस प्रकार, पूर्वी उत्तर प्रदेश में शहद बहु-पुष्पीय प्रकार के है। जिसमें *ब्रासिका कैंपेस्ट्रिस* फसल से संबंधित खरपतवार जैसे *पिम्पिनेला टोमेंटोसा, ज़ैंथियम स्ट्रुमेरियम* आदि शामिल हैं। किसी क्षेत्र में पसंदीदा पौधों की प्रजातियों की संख्या में कमी की दशा मधुमक्खियों को लगभग 49 अन्य पौधों की प्रजातियों को मधु बनाने के लिए मजबूर करती है। नतीजतन, उत्तर प्रदेश में उत्पादित अधिकांश शहद एलर्जिक गुणों वाले विदेशी पौधों की प्रजातियों प्रभुत्व वाले बहु -पुष्पीय प्रकार के हैं।

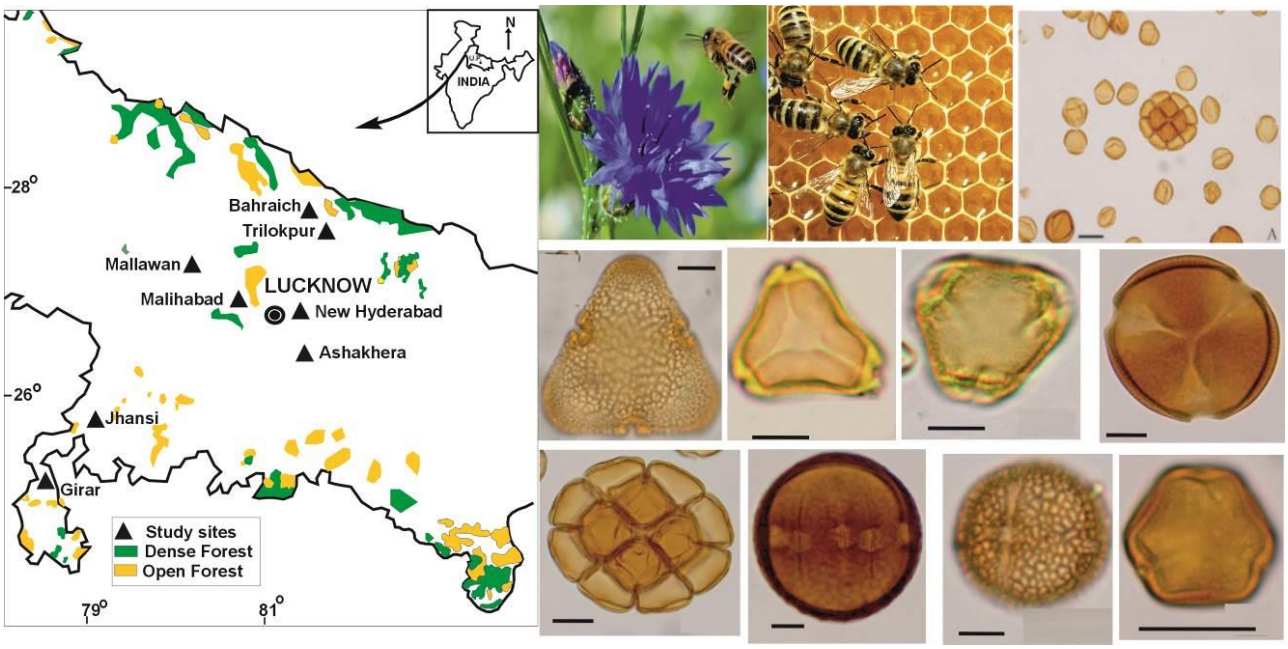

चित्र 1: पराग के अध्ययन के लिए एकत्रित किए गए शहद के नमूने का उत्तर प्रदेश के स्थान (झांसी, गिरार (दक्षिण-पश्चिमी क्षेत्र) बहराइच, तिलोकपुर (पूर्वी क्षेत्र) मल्लावन, मलिहाबाद, आशाखेड़ा और न्यू हैदराबाद (मध्य क्षेत्र) एवं शहद से प्राप्त परागकणों के चित्र।

भारत के विभिन्न हिस्सों के मेलिसोपेलिनोलॉजिकल रिकॉर्ड स्थानीय जलवायु स्थितियों के अनुकूल प्रमुख वनस्पति के पराग को प्रदर्शित करते हैं। इसके अलावा, बेहतर उपयोग के लिए पादप-विशिष्ट शहद का पेटेंट कराने के लिए मेलिसोपेलिनोलॉजिकल अध्ययनों का उपयोग करने की अत्यधिक आवश्यकता है। यह अध्ययन विशेष पौधों की प्रजातियों के बारे में जानकारी देता है जो शहद के लिए सुधा-स्रोत के रूप में काम करते हैं और साथ ही उनके संबंधित प्राकृतिक आवासों में उनके संरक्षण और प्रसार के लिए आवश्यक एहतियाती उपायों के बारे में जागरूकता पैदा करता है।

अंजलि त्रिवेदी

बीरबल साहनी पुराविज्ञान संस्थान, लखनऊ

एशियाई ग्रीष्मकालीन मानसून की अतीत और भविष्य की गतिशीलता का मूल्यांकन: पुरामानसून संश्लेषण और CMIP6 डेटा से निरीक्षण

एशियाई ग्रीष्मकालीन मानसून अनुसंधान का परिचय

एशियाई ग्रीष्मकालीन मानसून दक्षिणपूर्व एशिया और भारतीय उपमहाद्वीप के क्षेत्रों की सामाजिक-आर्थिक संरचना पर महत्वपूर्ण प्रभाव डालता है। इसकी वजह मुख्य रूप से कृषि पर पड़ने वाला प्रभाव है, जो इन क्षेत्रों के लोगों के जीवन और आजीविका का आधार है। पिछले सहस्राब्दी के दौरान एशियाई क्षेत्र में ग्रीष्मकालीन मानसून में गतिशीलता और परिवर्तनों को इंटरैक्टिव रूप से दिखाने के लिए पुरामानसून वर्षा संश्लेषण और युग्मित मॉडल अंतर्तुलनाप्रोजेक्ट चरण 6 (सीएमआईपी 6) डेटा का उपयोग किया।

इस अध्ययन में, हमने वार्षिक रिज़ॉल्यूशन पर पिछली सहस्राब्दी (एल.एम; 850-1849 सीई) में ग्रीष्मकालीन वर्षा भिन्नता की गतिशीलता का सटीक विश्लेषण और मात्रा निर्धारित की, जिसमें प्रमुख जलवायु घटनाएं मध्यकालीन गर्म अवधि (एमडब्ल्यूपी; 900-1300 सीई) और लिटिल आइस एज (एल.आई.ए; 1500-1850 CE) थी। हमने एशिया और भारतीय उपमहाद्वीप के लिए ग्रीष्मकालीन मानसून का अनुमान लगाने के लिए CIMP6 SSP2-4.5 और SSP5-8.5 का उपयोग करके पुराजलवायु (HC; 1850–2014 CE) और भविष्य के मानसून (FM; 2015–2100 CE) का भी विश्लेषण किया।

डेटा स्रोत और विश्लेषण

शोधकर्ताओं ने एशियाई ग्रीष्मकालीन मानसून की गतिशीलता को समझने के लिए विभिन्न प्रकार के डेटा स्रोतों का उपयोग किया। इनमें ऐतिहासिक एवम् मॉडल डेटा स्रोत शामिल हैं जैसे वृक्ष वलय जिसमें पेड़ों के वार्षिक वृद्धि वलयों का विश्लेषण करके वर्षा, तापमान और अन्य जलवायु कारकों में अतीत के परिवर्तनों का अनुमान लगा सकते हैं। उसी तरह हिम कोर से बर्फ की चादरों में गहरे ड्रिल किए गए कोर में ट्रैप हवा और बर्फ में प्राचीन वायुमंडलीय और तापमान डेटा प्राप्त होता है। अवसादन रिकॉर्ड से झीलों, नदियों और महासागरों के तल पर जमा तलछट में जलवायु परिवर्तन के बारे में जानकारी होती है।

आधुनिक डेटा स्रोत के लिए हमने CMIP6 जलवायु मॉडल सिमुलेशन के परिणाम लिए जो विभिन्न भविष्य के जलवायु परिदृश्यों का अनुकरण करते हैं। इन डेटा स्रोतों को एकीकृत करके, मध्यकालीन गर्म अवधि (MWP), छोटी हिम युग (LIA), और वर्तमान जलवायु सहित विभिन्न समय अवधियों के दौरान मानसून पैटर्न का पुनर्निर्माण किया। यह जानकारी भविष्य में मानसून परिवर्तन के बारे में अधिक सटीक पूर्वानुमान करने में मदद कर सकती है।

निष्कर्ष: मध्यकालीन गर्म अवधि से लेकर छोटी हिम युग तक

मध्यकालीन गर्म अवधि (900-1300 CE) के दौरान, मानसून वर्षा में वृद्धि हुई थी। यह गर्म वैश्विक तापमान और उच्च सौर विकिरण के साथ मेल खाता है। इसके विपरीत, छोटी हिम युग (1500-1850 CE) में, ठंडे तापमान और कम सौर गतिविधि के कारण मानसून वर्षा में कमी आई थी। साथ ही विश्लेषण से यह भी पता चला कि इन अवधियों के दौरान मानसून पैटर्न में महत्वपूर्ण क्षेत्रीय भिन्नताएं थीं। यह वैश्विक जलवायु घटनाओं और स्थानीय भौगोलिक विशेषताओं के बीच जटिल परस्पर क्रिया का संकेत देता है। उदाहरण के लिए, कुछ क्षेत्रों ने दूसरों की तुलना में अधिक या कम वर्षा का अनुभव किया हो सकता है। यह अध्ययन एशियाई ग्रीष्मकालीन मानसून की गतिशीलता और भविष्य के परिवर्तनों के बारे में हमारी समझ को बेहतर बनाने में मदद करता है। यह जानकारी कृषि, जल संसाधन प्रबंधन और आपदा प्रबंधन जैसी विभिन्न क्षेत्रों में महत्वपूर्ण है।

आधुनिक युग और भविष्य के पूर्वानुमान

CMIP6 डेटा का उपयोग करते हुए, यह अध्ययन 21वीं सदी के दौरान विभिन्न जलवायु परिदृश्यों (SSP2–4.5 और SSP5–8.5) के तहत मानसून पैटर्न में परिवर्तनों का अनुमान लगाता है। मुख्य निष्कर्ष इस प्रकार हैं:

पूर्वोत्तर एशिया और भारतीय उपमहाद्वीप के कुछ हिस्सों में वर्षा में वृद्धि: यह क्षेत्रों में कृषि उत्पादकता और जल संसाधनों की उपलब्धता के लिए सकारात्मक प्रभाव डाल सकता है।

कुछ क्षेत्रों में मानसून प्रणालियों की संभावित तीव्रता बढ़ना: इससे बाढ़, सूखा और तूफान जैसी एक्सट्रीम घटनाओं की आवृत्ति और तीव्रता में वृद्धि हो सकती है।

अन्य क्षेत्रों में वर्षा में कमी: इससे सूखे और जल संकट की स्थिति पैदा हो सकती है, जिसके कृषि, स्वास्थ्य और आजीविका पर गंभीर परिणाम हो सकते हैं।

कुल मिलाकर, अध्ययन में पाया गया कि मानसून गतिशीलता में बढ़ती असमानता की संभावना है, जिसमें कुछ क्षेत्रों को दूसरों की तुलना में अधिक लाभ या हानि होती है। यह जानकारी नीति निर्माताओं और जल संसाधन प्रबंधकों के लिए महत्वपूर्ण है जो भविष्य के जलवायु परिवर्तन के अनुकूल होने और अतिसंवेदनशील समुदायों की रक्षा के लिए रणनीति विकसित करने के लिए काम कर रहे हैं।

मानसून अस्थिरता के निहितार्थ

अध्ययन के निष्कर्ष बताते हैं कि मानसून अतीत की जलवायु घटनाओं और भविष्य की वैश्विक तापमान वृद्धि के प्रति अत्यधिक संवेदनशील है। यह अस्थिरता कृषि, जल संसाधन और आपदा प्रबंधन सहित कई क्षेत्रों को गंभीर रूप से प्रभावित कर सकती है। अध्ययन के अनुसार, वर्षा पैटर्न में होने वाले बदलाव और अनिश्चितता फसल उत्पादन को नकारात्मक रूप से प्रभावित कर सकती है। सूखे और बाढ़ जैसी चरम ऋतुकीय घटनाएं खाद्य सुरक्षा के लिए खतरा बन सकती हैं। इन चुनौतियों का सामना करने के लिए कृषि प्रणालियों को अधिक लचीला और बदलते परिवेश के अनुकूल बनाने की आवश्यकता है। कम वर्षा जल की कमी और सूखे का कारण बन सकती है। वहीं, दूसरी ओर तीव्र बारिश जल संरचनाओं को नुकसान पहुँचा सकती है और जल गुणवत्ता को खराब कर सकती है। इसलिए, जल संसाधनों का एकीकृत और टिकाऊ प्रबंधन आवश्यक है। मानसून अस्थिरता के कारण चरम ऋतुकीय घटनाओं की आवृत्ति और तीव्रता बढ़ने से आपदा जोखिम भी बढ़ जाएगा। प्रभावी आपदा प्रबंधन योजनाओं और समय पर चेतावनी प्रणालियों को लागू करना आवश्यक है। साथ ही, कमजोर समुदायों को आपदाओं के लिए तैयार करने के लिए प्रयास किए जाने चाहिए।

अध्ययन यह भी दर्शाता है कि मानसून अस्थिरता का विभिन्न क्षेत्रों पर अलग-अलग प्रभाव पड़ेगा। इसलिए, हर क्षेत्र को अपनी विशिष्ट जलवायु परिस्थितियों और सामाजिक-आर्थिक संदर्भों के अनुरूप जलवायु अनुकूलन रणनीतियां विकसित करने की आवश्यकता है। अंतत: यह शोध नीति निर्माताओं, जल संसाधन प्रबंधकों, कृषि विशेषज्ञों और आपदा प्रबंधन अधिकारियों के लिए महत्वपूर्ण है। यह अध्ययन जलवायु परिवर्तन के अनुकूल होने और मानसून अस्थिरता के नकारात्मक प्रभावों को कम करने के लिए रणनीति विकसित करने में उनका मार्गदर्शन कर सकता है।

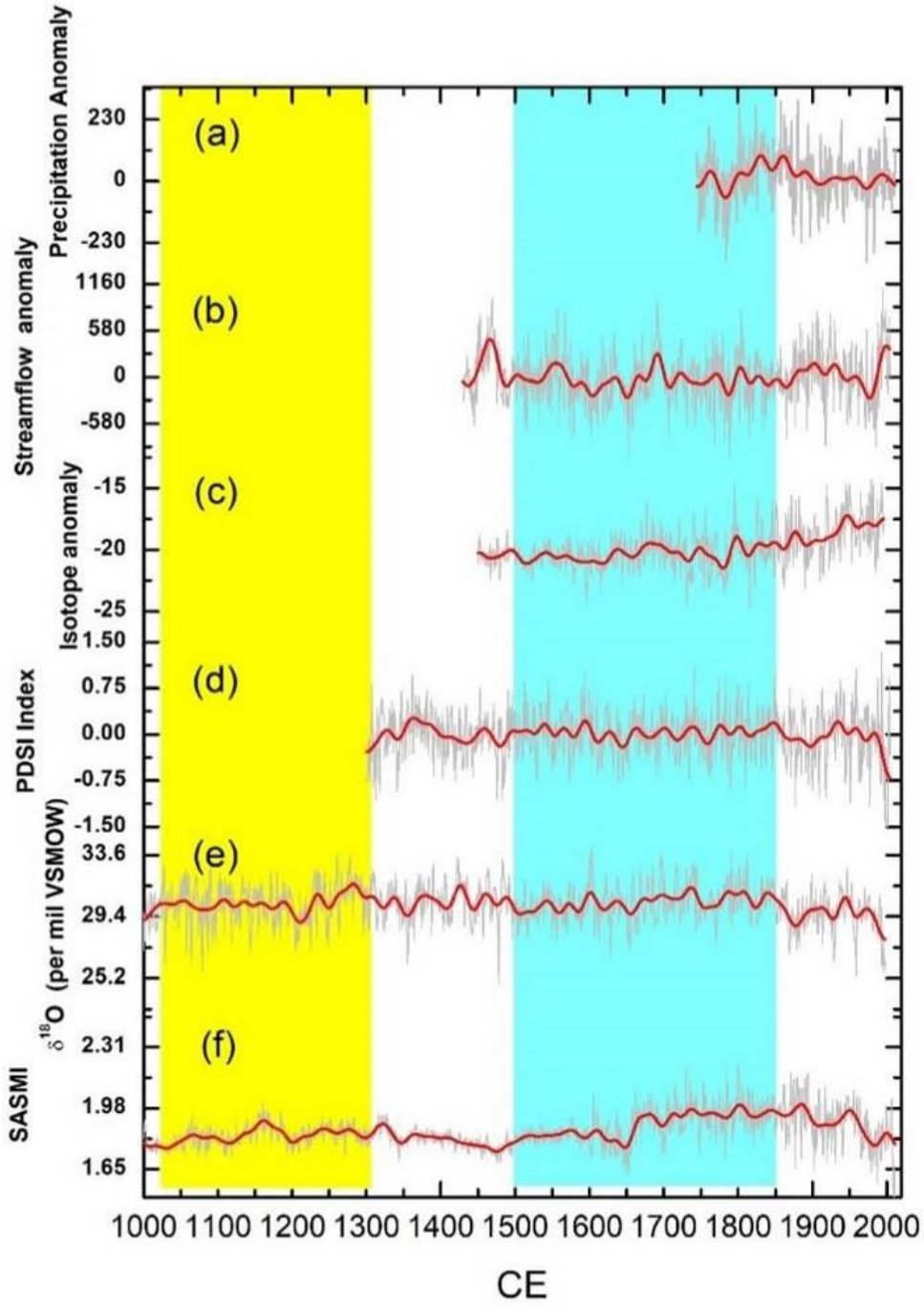

चित्र.1 पुरामानसून संश्लेषण डेटा के लिए समय श्रृंखला प्लॉट (ए) सानो एट अल 2013, (बी) कुक, 2013 (सी) ट्रेयडटे एट अल से विषम संकेत दिखा रहा है। (डी) कुक एट अल 2006। (ई) थॉम्पसन एट अल 2010 । और (एफ) शि एट अल 2000 । 10 प्वाइंट फास्ट फूरियर ट्रांसफॉर्म (एफएफटी) फिल्टर को लाल रेखा द्वारा दर्शाया गया है।

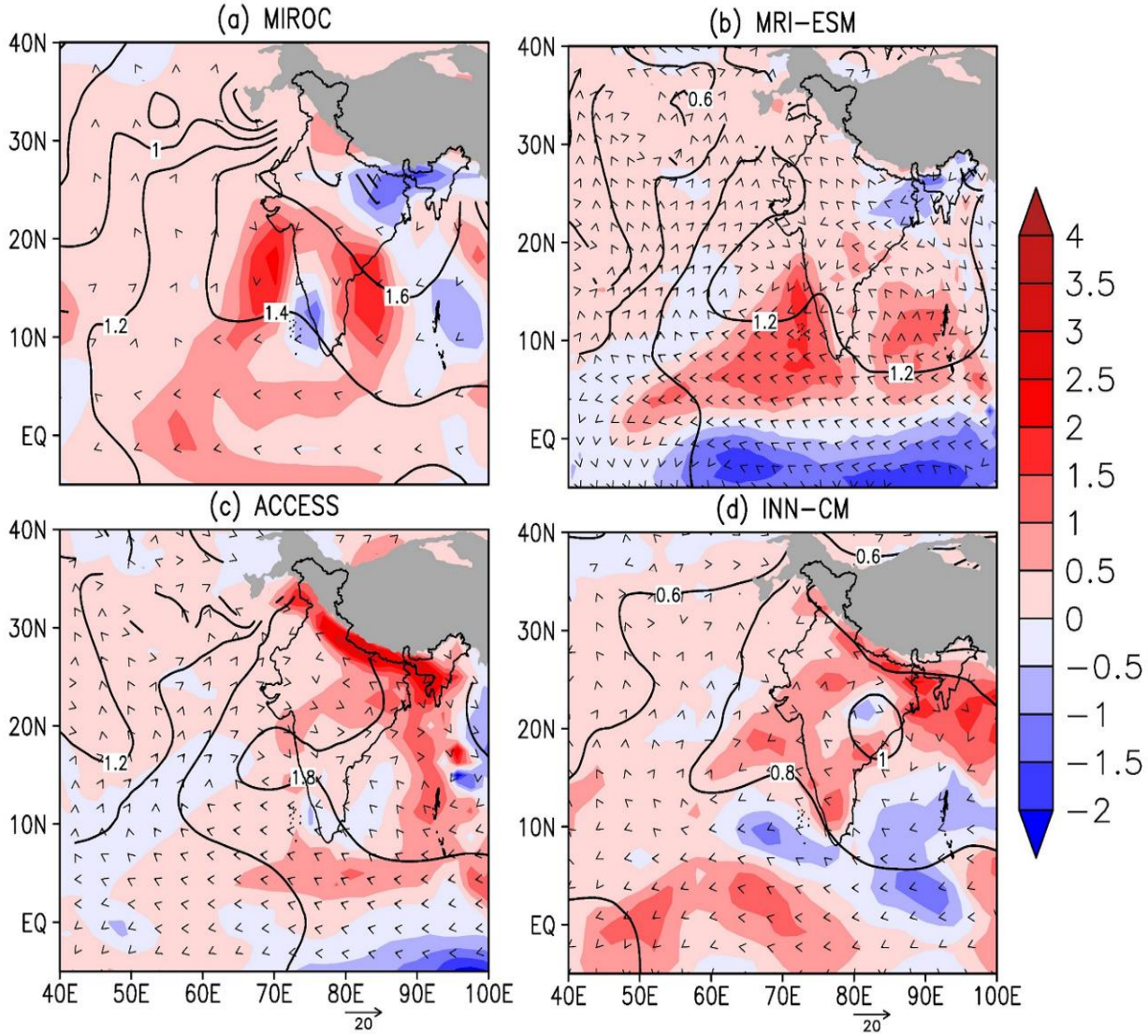

चित्र-2 JJAS वर्षा विसंगति (मिमी/दिन; नीला रंग); 850 hPa पर जिओपोटेंशिअल हाइट (मीटर; काली समरूप रेखाएं), SSP2-4.5 के तहत भविष्य (2015-2100) के दौरान 850h Pa (मीटर/सेकंड; सदिश) पर पवन (ए) MIROC (बी) MRI-ESM (सी) ACCESS (d) INN-CM मॉडल के लिए। छायांकित भाग 3000 मीटर से ऊपर हिमालयी क्षेत्र से संबंधित है।

निष्कर्ष

निष्कर्षों से पता चलता है कि जलवायु परिवर्तन के प्रति स्थानीय और क्षेत्रीय स्तर की संवेदनशीलता का सटीक अनुमान लगाने के लिए अतीत और भविष्य दोनों पर विचार करना आवश्यक है। इसके अलावा, पिछले डेटा का संश्लेषण और मानसून के भविष्य के अनुमानों का विश्लेषण भविष्य के जलवायु मॉडल की अप्रत्याशितता को कम करने के लिए एक आधार प्रदान करेगा।

अध्ययन बताता है कि मानसून अतीत और भविष्य की जलवायु परिवर्तन के प्रति संवेदनशील है। इससे कृषि, जल संसाधन और आपदा प्रबंधन पर गंभीर प्रभाव पड़ सकते हैं। भविष्य में मानसून पैटर्न की बेहतर भविष्यवाणी के लिए उन्नत जलवायु मॉडल और क्षेत्र-विशिष्ट अनुकूलन रणनीतियां आवश्यक हैं। प्रभावी आपदा प्रबंधन और कमजोर समुदायों को सशक्त बनाने से भी काफी फायदा होगा। यह शोध नीति निर्माताओं और वैज्ञानिकों को भविष्य के लिए तैयार रहने और अधिक टिकाऊ

जल प्रबंधन प्रणालियों के निर्माण के लिए सहयोग करने का आह्वान करता है।

संदर्भ: शेखर, एम., शर्मा, ए., पांडे, पी., शर्मा, ए., और डिमरी, ए.पी. (2024)। एशियाई ग्रीष्मकालीन मानसून के अतीत और भविष्य की गतिशीलता का आकलन: पैलेओमानसून संश्लेषण और सीएमआईपी6 डेटा से अंतर्दृष्टि। वैश्विक पर्यावरण परिवर्तन अग्रिम, 2, 100004।

पुष्पेंद्र पाण्डेय, मयंक शेखर, अनुपम शर्मा

बीरबल साहनी पुराविज्ञान संस्थान

अका शर्मा, ए.पी. डिमरी

पर्यावरण विज्ञान स्कूल, जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय, नई दिल्ली, भारत

तकनीकी लेख

पृथ्वी पर जीवन की उत्पत्ति : एक रोचक परन्तु अनसुलझी पहेली

वैज्ञानिक दृष्टांत से पृथ्वी पर जीवन की उत्पत्ति अब तक एक अनसुलझी पहेली है। मनुष्य कि इस विषय पर उत्सुकता शायद तब प्रारम्भ हुई जब उसने एक परिवार में रहना सीखा होगा। जब एक माँ अपने बच्चे को जन्म दे रही होगी तो परिवार का ही कोई सदस्य सोच रहा होगा कि यह नया जीवन इस धरती पर कैसे आया। पारम्परिक धार्मिक सिद्धांतो के अनुसार पृथ्वी पर जीवन देवताओं द्वारा गढ़ा गया है और मनुष्य, मनुष्य कि ही आकृति में इस धरती पर अवतरित हुआ, न कि किसी और जीवन आकृति से विकसित हुआ।

पर जब हम वैज्ञानिक विचारों की बात करते हैं तो इस विषय में सबसे पहला सन्दर्भ अरस्तु और ग्रीक दर्शनशास्त्र का आता है, जिन्होंने इस विषय पर पहला प्राकृतवादी सिद्धांत दिया। इस सिद्धांत के अनुसार, पृथ्वी या इस ब्रह्माण्ड में जीवन की उत्पत्ति अजैविक पदार्थों से हुई है। यह सिद्धांत पश्चिम के विद्वानों के बीच समय के साथ परिष्कृत और अधिक मान्य हुआ। प्रसिद्ध वैज्ञानिक चार्ल्स डार्विन के अनुसार इस धरती पर प्रथम जीवन (एक कोशिका) किसी अनजानी प्रक्रिया से बनी और समय के साथ इस एक कोशिका से अन्य जीवन आकृतियों का उद्विकास हुआ।

यद्यपि आज भी जीवन कि उत्पत्ति के विषय मे कोई भी सिद्धांत सर्वमान्य नहीं है। अधिकांश वैज्ञानिक जो इस विषय पर शोधकार्य कर रहे हैं, उनकी परिकल्पनाएं कहीं न कहीं अलेक्जेंडर ओपैरिन और जॉन हॉल्डेन के इस विषय पर दी हुई रुपरेखा से प्रभावित है। जिसके अनुसार "प्रारंभिक कोशिका बनाने वाले पहले रासायनिक अणु का संश्लेषण धीमी प्रक्रिया द्वारा प्राक्रितिक परिस्थितियों में हुआ। जो बाद में जैविक गुणों वाले क्रम में संगठित हुए"। डार्विन ने अपनी किताब "द ओरिजिन ऑफ़ लाइफ" में लिखा है कि ऐसी परिस्थितियां जिसमें रासायनिक प्रक्रियाओं द्वारा प्रथम जीवन कि उत्पत्ति हुई जो प्रारंभिक पृथ्वी (Hadean or Archean) पर ही संभव थी क्योंकि उसके बाद पृथ्वी के वातावरण में हुए बदलावों के कारण ऐसे रासायनिक प्रक्रियाओं के होने की सम्भावनाये न के बराबर हो गयी।

सन 1952 में स्टैनले मिलर और हैरोल्ड यूरे के प्रसिद्ध रासायनिक प्रयोग ने दर्शाया कि प्रारंभिक पृथ्वी के समान वातावरण में मेथेन, अमोनिया, हाइड्रोजन और पानी का वाष्प आपस में प्रतिक्रिया करके अमीनो एसिड बना सकते हैं जो सामान्यतः जीवों द्वारा बनाये जाते हैं। इस प्रयोग द्वारा ओपेरिन और हॉल्डेन कि परिकल्पना को बल मिला। परन्तु अभी हाल के अनुसंधानों से पता चलता है कि प्रारंभिक पृथ्वी का वातावरण स्टैनले मिलर और हैरोल्ड यूरे कि परिकल्पना से भिन्न था। हालाँकि कई प्रकार के वातावरण प्रारंभिक पृथ्वी कि सतह पर रहे होंगे। जैसे कि झील, नदियां, नदियों के मुहाने (estuaries) टाइड्स से प्रभावित समुद्रीय किनारे (tidal flats), समुद्र, समुद्र कि गहराई में स्थित महासागरीय पर्वतमाला (mid-oceanic ridges), गरम पानी के झरने (hydrothermal vents), इत्यादि। पर इनमें से किस स्थान पर प्रथम जीवन की उत्पत्ति से सम्बंधित रासायनिक प्रक्रियाएं हुई, यह अभी निश्चित नहीं हो सका है। इस सम्बन्ध में किये जा रहे अधिकांश शोध रासायनिक प्रक्रियाओं द्वारा सबसे पहले बने जैविक कार्बनिक अणुओं के विभिन्न श्रेणियों पर केंद्रित हैं। यह पता लगाना अभी महत्वपूर्ण माना जा रहा है कि कौन-कौन सी भूरासायनिक परिस्थितियां एक विशेष पूर्व-जैविक सूप (prebiotic soup) से प्रथम जीवन तक कि सारी अवस्थाओं को आत्मनिर्भरता के साथ पोषित कर सकती थी।

विभिन्न अध्ययनों से पता चला है कि इन सारी रासायनिक प्रक्रियाओं के पूरे होने क लिए आठ महत्वपूर्ण वातावरणीय अवस्थाएं आवश्यक हो सकती हैं। 1) रिडक्टिव गैस फेज, 2) एल्कलाइन पीएच (pH), 3) जमाने वाला तापमान (freezing temperature), 4) शुष्क और नम अवस्थाओं का चक्र, 5) उच्च ऊर्जा वाली रासायनिक प्रतिक्रियाएं, 6) मीठा जल (Fresh water), 7) जल के ठन्डे और गर्म होने की चक्रीय प्रक्रिआ (heating and cooling cycle), 8) पोषक तत्व।

इन पारस्परिक रूप से भिन्न वातावरण की आवश्यकता ये दर्शाती है कि जीवन की उत्पत्ति से सम्बंधित श्रंखलाबद्ध रासायनिक प्रक्रिया एक विशेष वातावरण में न होकर कई भिन्न वातावरण में, जिनके बीच पदार्थ/ अणुओं/ अभिकारकों/ रासायनिक उत्पादों का आदान-प्रदान, जल बहाव के द्वारा बना रहा होगा, क्रमबद्ध रूप से हुआ होगा।

शोध कार्यों से पता चलता है कि पृथ्वी आज से लगभग 4.53 अरब (बिलियन) साल पहले लगभग १० कि.मी. आकार के कई पिंडों के आपस में जुड़ने से बनी। जिसके बाद एक उल्का पिंड के टकराने से पृथ्वी का एक भाग अलग होकर चन्द्रमा बन गया। इस घटना के बाद पृथ्वी की सतह का तापमान 2000° केल्विन से, 1.10 लाख वर्षों में, गिरकर 400-500° केल्विन पहुंच गया। जिसके बाद पृथ्वी और ठंडी हो गयी और कई जल स्रोतों जैसे सागर, नदिया, और झीलों का निर्माण हुआ एवं पहले क्रस्ट की संरचना हुई। तत्पश्चात, उल्का पिंडों के बौछार की एक घटना ("लेट हैवी बॉम्बार्डमेंट"), जो पृथ्वी के पहले 100 मिलियन वर्षों के दौरान घटी, ने जलाशयों को कई बार वाष्प बना के उड़ाया।

ग्रीनलैंड के 3.8 अरब साल पुराने अवसादी चट्टानों में ग्रेफाइट की उस्पस्थिति को जीवन के सबसे पुराने संभावित अवशेषों में माना गया है। अगर इस सम्भावना को सही माना जाये तो, पृथ्वी पर जीवन कि उत्पत्ति 3.8 अरब साल से भी पहले हुई होगी। आर्किया और बैक्टीरिया के जीन में विभिन्न समयान्तरालो पर होने वाले म्युटेशन के अध्ययन से पता चलता है कि आर्किया आज से 4.11 अरब साल पहले इस पृथ्वी पर आये या उनकी उत्पत्ति हुई या ये भी कह सकते है कि पृथ्वी पर जीवन कि उत्पत्ति 4.1 से 4.2 अरब वर्ष पूर्व हुई।

जीवन प्रायः तीन प्रमुख विशेषताएं प्रस्तुत करती है।

1. **विखंडीकरण (Compartmentalization): जिसमें एक भित्ति (cell membrane/wall) के माध्यम से वह स्वयं को बाह्य वातावरण से अलग कर पाता है।**
2. **प्रतिकृति बनाने की क्षमता (Replication): जिसके माध्यम से यह आनुवांशिक पदार्थ अगली पीढ़ी में हस्तांतरित करता है।**
3. **उपापचय कि क्षमता (Metabolism): जिसके माध्यम से यह ऊर्जा और पोषक पदार्थों का संचय और उपयोग कर पाता है।**

यह सभी प्रक्रियाएं कुछ विशेष प्रकार के कार्बनिक यौगिकों (ऑर्गनिक पॉलीमर्स) के द्वारा संचालित होती है। जैसे कि - डी.एन.ए (DNA), आर.एन.ए. (RNA), प्रोटीन और फोस्फोलिपिड्स। इस सम्बन्ध में चित्र में प्रदर्शित प्रक्रिया देखने में आसान लगती है। परन्तु यह अत्याधिक जटिल है और इसका अधिकांश हिस्सा अभी हमारे ज्ञान से परे है।

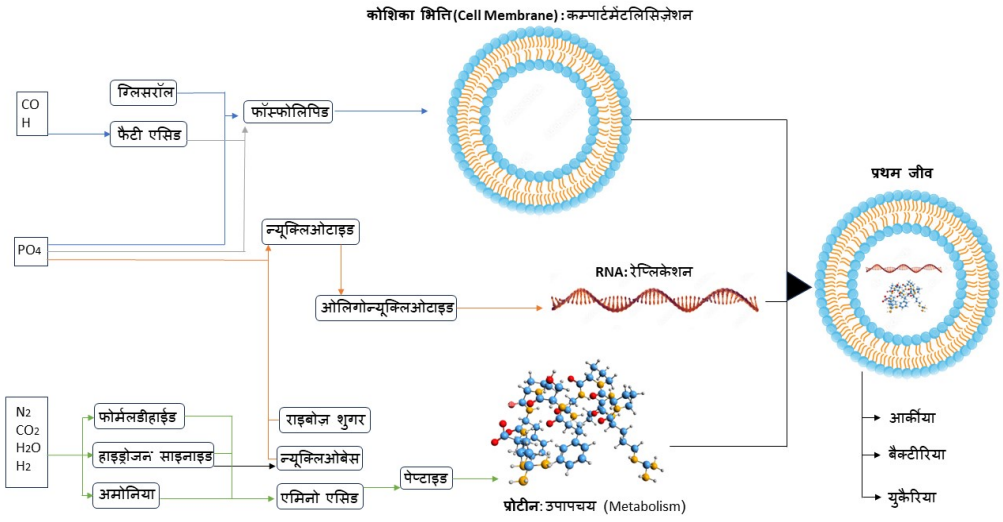

चित्र 1 रासायनिक तत्वो से प्रथम जीव बनने की परिकल्पनिक प्रक्रिया के प्रमुख अवस्थाओं को इस चित्र में प्रदर्शित किआ गया है।

यह माना जाता है की खनिजों की सतह कार्बनिक यौगिकरण में उपयोगी रहे होंगे। उदहारण के तौर पर राइबोज़ शुगर का ग्लिसराल्डेहाइड के यौगिकीकरण से बनने में बोरेट मिनरल की भूमिका बहुचर्चित है। बोरोन मुख्यतः ग्रेनिटिक पत्थरों में मिलता है और गर्म पानी के स्रोतों (Hotsprings) में इनकी अधिकता पायी गयी है। सामान्यतः कार्बनिक अणु या यौगिक जो अकार्बनिक प्रक्रियांओं से बनते है वो रैसेमिक मिक्सचर होते है। अर्थात वे 50% लीवो (L) और 50% डेक्सट्रो (D) रोटेटरी यौगिक बनाते है। जिससे मिक्सचर की ऑप्टिकल एक्टिविटी शून्य के बराबर होती है, परन्तु जैविक व्यवस्था में यह देखा गया है यौगिक या तो लीवो रोटेटरी होते है या तो डेक्सट्रो रोटेटरी होते है जो इन्हे अजैविक प्रक्रियाओं से भिन्न करता है और एक चलायमान व्यवस्था का रूप देता है। हालाँकि प्रयोगशाला में बनाये गए और उल्का पिंडो में पाए गए अमीनो एसिड्स में भी एक-दिशात्मक ऑप्टिकल रोटेशन का गुण पाया गया है। इस पर कुछ वैज्ञानिकों का मानना है कि अन्य आवश्यक यौगिक जैसे राइबोज़ शुगर में एक-दिशात्मक ऑप्टिकल रोटेशन के गुण, अजैविक प्रक्रियाओं के माध्यम से बने ऐसे ही एमिनो एसिड्स के उत्प्रेरण (catalysis) से आया होगा। इसके अलावा हाल में ही किये गए एक महत्वपूर्ण प्रयोग ने यह सिध्द किया है कि प्रारंभिक पृथ्वी पर यौगिकों में एक-दिशात्मक ऑप्टिकल रोटेशन का गुण चुंबकीय खनिजों जैसे मैग्नेटाइट इत्यादि से भी उत्प्रेरित हो सकता था। अकार्बनिक प्रक्रियाओं द्वारा जैव-उपयोगी कार्बोनिक पदार्थो के निर्माण में, हाइड्रोजन साइनाइड (HCN) के यौगिकीकरण से पहले एमिनो एसिड बने होंगे। प्रयोगों से सिद्ध हुआ है कि कम सांद्रता पर HCN से अमीनो एसिड बहुत कम बन पाता है। परन्तु यही प्रक्रिया अगर 0° सेल्सियस से नीचे कराई जाये तो अमीनो एसिड पर्याप्त मात्रा में यौगिकीकरण प्रक्रिया द्वारा बन जाता है। इससे ये बोध होता है की प्रारंभिक पृथ्वी पर विभिन्न सायनाइड अणुओं से विभिन्न वातावरणीय अवस्थाओं में कई प्रकार के अमीनो एसिड्स बने होंगे। जैसा कि चित्र 1 में दर्शाया गया है। इन यौगिकों से प्राम्भिक प्रोटीन और आर.एन.ए. (RNA) बने होंगे। इन जैव-उपयोगी यौगिकों के स्थायी होने और आनुवांशिक क्रम में आगे की पीढ़ियों में जाने के लिए इन्हें विकृत और नष्ट करने वाले बाह्य वातावरण से बचाव की आवश्यकता को एक भित्ति या सेल वाल, जो फैटी एसिड्स से बना होता है, ने प्रदान किया होगा। यह बाह्य वातावरण से आवश्यक पदार्थों को सेल के अंदर जाने देता है। इस तरह सेल बाह्य वातावरण से आवश्यकतानुसार सुव्यवस्थित तरीके से संपर्क करता है।

फैटी एसिड का रासायनिक उत्पादन मुख्य रूप से फिशर एंड ट्रोपश्च (Fisher and Tropsch) मेथड से होता है।

1920 में फिशर और ट्रोपश्च ने इस संश्लेषण की प्रक्रिया को प्रतिपादित किया जिसमें कार्बन मोनो ऑक्साइड (CO) और हाइड्रोजन (H) सतही उत्प्रेरण (surface catalysis) के द्वारा लीनियर सैचुरेटेड कार्बनिक यौगिक बनाता है। जिसमे कार्बन संख्या के बढ़ने पर उनकी प्रचुरता में कमी आने लगती है । इस प्रक्रिया में फैटी एसिड कुछ ही मात्रा में बनते है। अधिक तापमान और दाब पर भी इनका संश्लेषण देखा गया है, परन्तु फैटी एसिड बहुत अस्थायी होते हैं और शीघ्र ही कार्बन डाई-ऑक्साइड (CO_2) और हाइड्रोजन (H) में बंट जाते हैं। यह देखा गया है की एम्फीफिलिक फैटी एसिड स्वयं एक-दूसरे से जुड़ कर एक वेसीकल बना सकते है। जो एक झिल्ली की तरह काम करता है। फैटी एसिड से प्रारंभिक कोशिका भित्ति या झिल्ली के निर्माण की समझ अभी भी अधूरी है। रासायनिक प्रक्रियाओं द्वारा न्यूक्लिओटाइड बनाने क लिए न्यूक्लिओ बेस, शुगर, और फॉस्फेट का रिएक्शन प्रायः सूखी अवस्था में देखा गया है। गर्म-ठंडा, जमना-पिघलना, शुष्क-नम आदि अवस्थाओं का चक्र इस प्रकार की यौगिकीकरण प्रक्रिया को बढ़ावा देता है। पराबैगनी किरणो (Ultraviolet Rays) की भूमिका एक नुक्लेओटाइड से दूसर नुक्लेओटाइड के परिवर्तन में महत्वूर्ण पायी गयी है। नुक्लेओटाइड से RNA बनने की अजैविक प्रक्रिया का ज्ञान अभी विकसित होना बाकि है।

उपरोक्त लिखित जानकारी से पता चलता है की जीवन की उत्पत्ति के सम्बंधित सभी प्रक्रियायें किसी एक विशेष वातावरण में न होकर कई भिन्न प्रकार के वातावरण में अलग-अलग हुईं होगी। जिनके मिलाप से ही प्रारंभिक जीवन की उत्पत्ति संभव हुई। हालाँकि अभी भी जो ज्ञान/ जानकारी इस विषय में उपलब्ध है। वो इस पूरी प्रक्रिया की कुछ विशेष अवस्थाओं के बारे में है। अर्थात अभी भी हम जीवन की उत्पत्ति से सम्बंधित ज्ञान से बहुत दूर हैं और इस विषय में निर्णायक खोज होना बाकि है।

आरिफ हुसैन अंसारी
विज्ञानी 'डी',
प्रेकैंब्रियन पैलियोबायोलॉजी लैब
बीरबल साहनी पुराविज्ञान संस्थान, लखनऊ

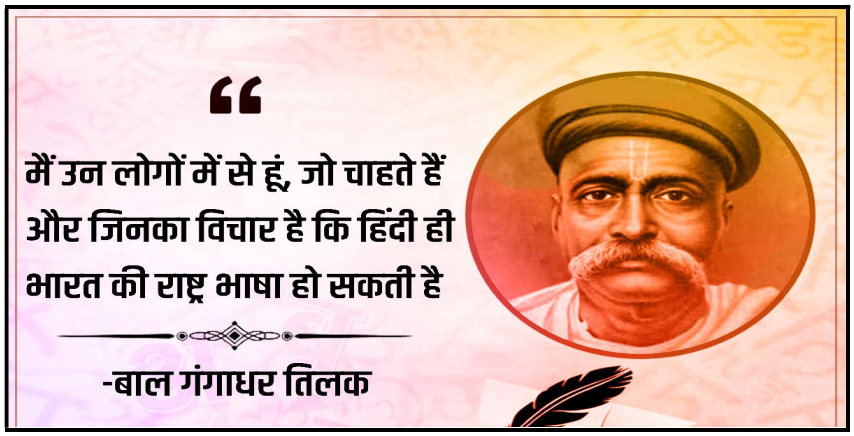

भारत से चूनामय परासूक्ष्म जीवाश्मों का अध्ययन

चूनामय परासूक्ष्मजीवाश्म विशिष्ट रूप से समुद्री, एककोशिकीय, कशाभिकीय पादप प्लवक हैं, जो सुनहरे-भूरे रंग के शैवाल कोकोलिथोफोरिड से संबंधित हैं, जो फाइलम-हैप्टोफाइटा और डिवीजन-प्राइमनेसियोफाइसी के अंतर्गत आते हैं। ये समुद्री प्रणाली में प्राथमिक उत्पादक के रूप में काम करते हैं तथा इनका आकार 1 माइक्रान से 30 माइक्रान तक होता है। इनके भूगर्भीय उल्लेख अंतिम ट्राइसिक से लेकर आज तक मिलते हैं। ये पृथ्वी पर सबसे अधिक चूना उत्पादक जीव हैं और महासागरों में कार्बोनेट उत्पादन में सबसे महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। विश्व मे चूनामय परासूक्ष्म जीवाश्मों का अध्ययन 1836 मे आरंभ हुआ, जब क्रिश्चियन गॉटफ्रीड एहरनबर्ने बाल्टिक सागर मेंरुगेन द्वीप से चॉक के नमूनों की जांच के दौरान पहली बार कोकोलिथ रिकार्ड किया और इन्हें उन्होंने अकार्बनिक मूल का माना। उन्होंने अपने हाथ से बनाए कोकोलिथ के चित्रों को माइक्रोजिओलोजी पुस्तक मे प्रकाशित किया। 1858 में तप्रख्या विक्टोरियन जीवविज्ञानी थॉमस हेनरी हक्सले ने समुद्र तल से प्राप्त नमूनों की जांच की और बताया कि गोल पिंड कई संकेंद्रित परतों से बने थे और कुछ हद तक प्रोटोकोकस पौधे की एकल कोशिकाओं की तरह दिखते थे। उन्होंने इन गोल पिंडों को कोकोलिथस नाम दिया और अकार्बनिक उत्पत्ति का बताया। अध्ययन किए गए नमूनों में उन्हें कोकोस्फीयर (कोकोलिथस का समूह) नहीं मिला। 1861 में सी. जी. वालिच ने न केवल मुक्त अवस्था में कोकोलिथ की सूचना दी, बल्कि एचएमएस बुलडॉग महासागर अभियान के दौरान प्राप्त अवसादी नमूनों में सूक्ष्म गोले बनाने के लिए एक साथ चिपकने वाले कोकोलिथ भी पाए। उन्होंने गेंद के आकार के इन पिंडों को कोकोस्फीयर नाम दिया। 1891 में जॉन मरे और उनके सहकर्मी ने दृढ़ता से स्थापित किया कि कोकोस्फीयर सूक्ष्म चूनामय शैवाल के कंकाल थे। उन्होंने कोकोस्फीयर के आंतरिक भाग को एल्बुमिनॉइड पदार्थ से भरा हुआ बताया जिसमें नाभिक का पता लगाया जा सकता था।

बीसवीं सदी की शुरुआत में, चूनामय परासूक्ष्म जीवाश्मों पर गहन व्यवस्थित अध्ययन शुरू किया गया। एच. लोहमैन (1902), सी. एच. ओस्टेनफेल्ड (1899), ए. डी. आर्कान्जेल्स्की (1912) और जोसेफ शिलर (1913) ने ज्यादातर जीवित और साथ ही साथ कुछ जीवाश्म चूनामय परासुक्ष्मों का वर्णन किया है। 1920 दशक के अंत और 1930 दशक में परासूक्ष्म प्रजातियों की सूची बनाई और उनकी संरचना की जांच शुरू हुई और सबसे अधिक काम ऑस्ट्रिया में इरविन कैम्पटनर, फ्रांस में जॉर्ज डेफलैंड्रे और नॉर्वे में टी. ब्रारुड और उनके सहयोगियों द्वारा किया गया था। 1954 में प्रोफेसर एम.एन. ब्रैम्लेट और डब्ल्यू.आर. रीडेल ने पहली बार काल निर्धारण में चूनामय परासूक्ष्म जीवाश्मों की उपयोगिता का उल्लेख किया। 1970 और 1980 के दशक के दौरान परासूक्ष्म जीवाश्म अनुसंधान परिपक्व चरण में पहुंच गया था और जुरासिक, क्रिटेशियस और सेनोज़ोइक समय अवधि के लिए अत्यधिक परिष्कृत वैश्विक काल निर्धारण चार्ट उपलब्ध थे। यही वह समय था जब भारत में परासूक्ष्म जीवाश्मों का अध्ययन शुरू किया गया था। 1963 में नरसिम्हन ने पूर्वोत्तर भारत के खासी हिल्स के मास्ट्रिच्टियन और डेनियन अवसादों पर परासूक्ष्म जीवाश्मों का अध्ययन शुरू किया। उन्होंने पहली बार भारत में क्रिटेशियस-पेलिओसीन अनुक्रमों से जीवाश्म कोकोलिथोफोरस और संबंधित परासूक्ष्म जीवाश्म की उपस्थिति की सूचना दी। यह अध्ययन यह देखने के लिए किया गया था कि क्या सूक्ष्म जीवाश्मों के इस समूह के आधार पर क्रिटेशियस-पेलिओसीन सीमा स्थापित की जा सकती है, और इसे काल निर्धारण के क्षेत्रों के परिसीमन के लिए सफलतापूर्वक लागू किया जा सकता है या नहीं। इन्होंने अपने अध्ययन मे परासूक्ष्म जीवाश्म की एक नई प्रजाति *कोकोलिथस रेटिकुलैटस* का उल्लेख किया है। 1964 में राजगोपालन ने पांडिचेरी के मास्ट्रिच्टियन और डेनियन अवसाद से परासूक्ष्म जीवाश्मों के उपस्थिति की सूचना दी। उसके बाद 1969 में एस.सी. पंत और वी.डी. मैमगैन ने भारत के उत्तर, पश्चिमी और दक्षिणी भाग से परासूक्ष्म जीवाश्म प्रकाशित किए हैं, जो हजारा के जुरासिक, तिरुचिरापल्ली के क्रिटेशियस और इओसीन से लेकर कच्छ के मायोसीन युग के अवसाद हैं और उन्होंने तीनों क्षेत्रों से अभिलेखित किए गए परासूक्ष्म जीवाश्मों की सूची भी प्रदान की।1970 से 1990 के दशक तक परासूक्ष्म जीवाश्म का अध्ययन भारत में आम हो गया था और ये

अध्ययन जुरासिक, क्रिटेशियस, पेलियोजीन, निओजीन और चतुर्धातुक युग के तलछटों पर टेथिस हिमालय, कच्छ, कैम्बे, राजस्थान, नर्मदा घाटी, कावेरी, कृष्णा-गोदावरी द्रोणियों, पांडिचेरी, तमिलनाडु, बॉम्बे ऑफशोर, बंगाल द्रोणी और अंडमान-निकोबार द्वीप समूह से किए गए। भारत में, मुख्य रूप से परासूक्ष्म जीवाश्म का अध्ययन राष्ट्रीय समुद्र विज्ञान संस्थान (एनआईओ), राष्ट्रीय ध्रुवीय और महासागर अनुसंधान केंद्र (एनसीपीओआर), केशव देव मालवीय इंस्टीट्यूट ऑफ पेट्रोलियम एक्सप्लोरेशन (केडीएमआईपीई)- तेल और प्राकृतिक गैस निगम (ओएनजीसी), भूविज्ञान विभाग, पुणे विश्वविद्यालय और बीरबल साहनी पुराविज्ञान संस्थान (बीएसआईपी) जैसे कुछ प्रतिष्ठित संगठनों के 2-3 शोधकर्ताओं के छोटे समूहों द्वारा किए गए थे।

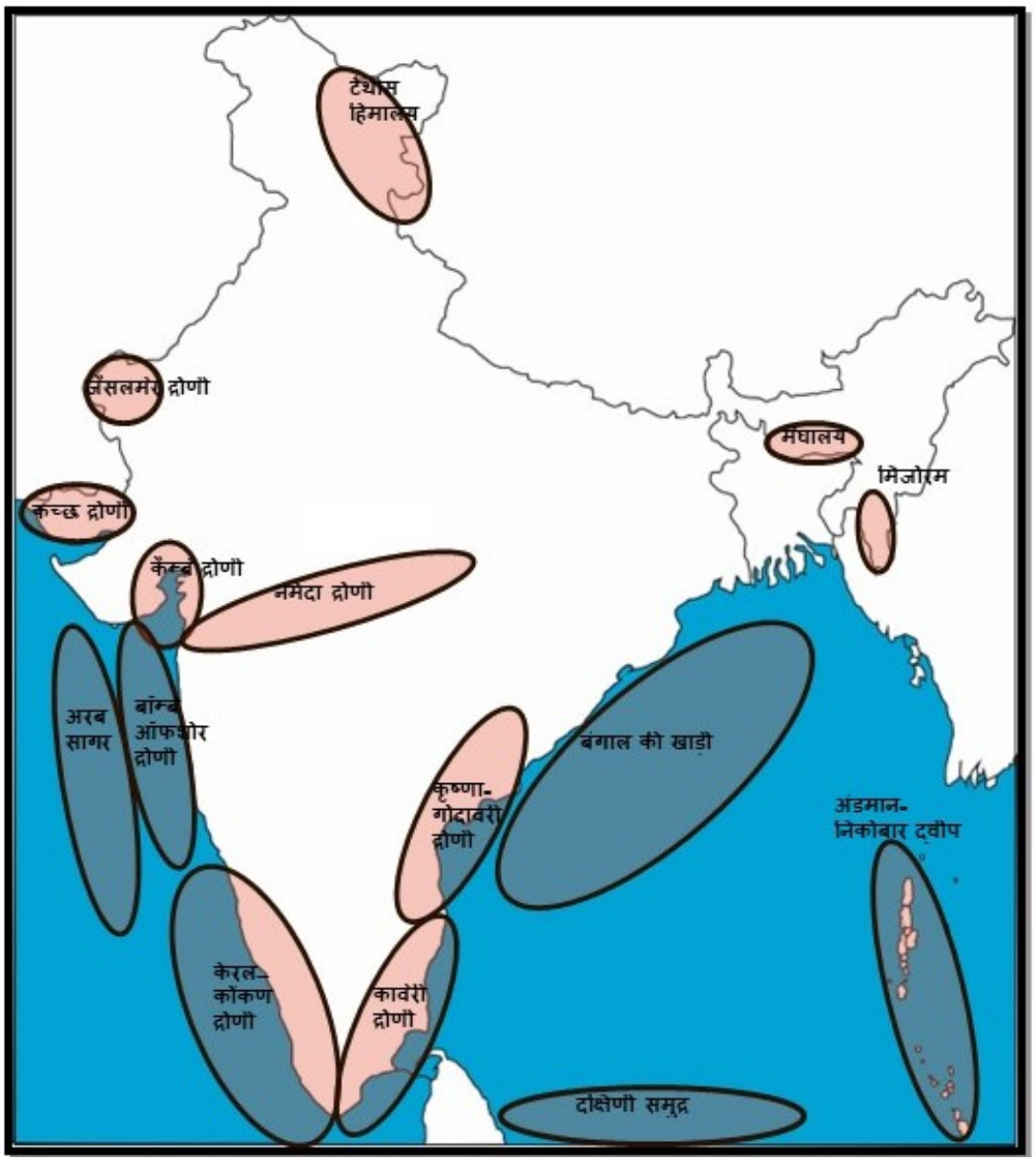

चित्र १: भारत से उन क्षेत्रों को दर्शाता है जहां से वर्तमान और विलुप्त परासूक्ष्म जीवाश्मों का अध्ययन किया गया है।

राष्ट्रीय समुद्र विज्ञान संस्थान से डॉ. एम.वी.एस. गुप्ता ने 1973 से 1994 तक विलंबित मायोसीन से आरंभिक प्लियोसीन, विलंबित प्लीस्टोसीन और कच्छ, अंडमान और निकोबार द्वीप और अरब सागर के महाद्वीपीय शेल्फ से हाल के युग के परासूक्ष्म जीवाश्मों पर पत्रों का एक क्रम प्रकाशित किया है। 2003 में उन्होंने अरब सागर और बंगाल की खाड़ी से कुछ और कोकोलिथोफोरस की सूचना दी है। यह अध्ययन मध्य अरब सागर में अवसाद जाल के नमूनों से कोकोलिथोफोर फ्लक्स पर था और उन्होंने दक्षिण-पश्चिमी मानसून की तुलना में पूर्वोत्तर मानसून के दौरान बढ़े हुए प्रवाह को दिखाया।

हाल के वर्षों में नेशनल सेंटर फॉर पोलर एंड ओशन रिसर्च के डॉ. श्रमिक पाटिल ने दक्षिणी हिंद महासागर के कोकोलिथोफोर्स पर कुछ शोधपत्र प्रकाशित किए हैं और एनर्जी डिस्पर्सिव स्पेक्ट्रोमेट्री के आधार पर एक नई प्रजाति *कैल्सियोसोलेनिया सबट्रोपिकस* को अभिलेखित किया है। इस नई प्रजाति मे कोकोलिथ के मध्य भाग में सिलिका की उच्च सांद्रता का खुलासा किया जो गहरे रंग का दिखाई देता है जबकि कोकोलिथ के अंतिम छोरों में नगण्य सिलिका है जो पार-ध्रुवीकृत प्रकाश के तहत उज्ज्वल दिखाई देता है। कोकोलिथ्स में सिलिकॉन औरकैल्शियम का ऐसा संयोजन दुर्लभ है।

केशव देव मालवीय इंस्टीट्यूट ऑफ पेट्रोलियम एक्सप्लोरेशन से, काजी असद अली ने 1996 में कावेरी द्रोणी की उप-सतह अवसाद से आरंभिक क्रिटेशियस हाउटेरिवियन युग के परासूक्ष्म जीवाश्म प्रकाशित किए। यह अध्ययन दर्शाता है कि कावेरी द्रोणी में समुद्री प्रवेश एप्टियन/अल्बियन के बजाय शुरुआती हाउटेरिवियन में हुआ था, जैसा कि द्रोणी में क्रिटेशियस के उजागर अनुक्रमों से फोरामिनिफेरा पर आधारित पहले के अध्ययनों से पता चलता है और उसी संगठन से, राजेश कुमार सक्सेना ने कैथरीना वॉन सलिस के साथ दक्षिणी भारत के कृष्णा-गोदावरी द्रोणी से क्रिटेशियस/पेलिओसीन सीमा के पार के चूनामय परासूक्ष्म जीवाश्म प्रकाशित किए। अध्ययन में डेक्कन ट्रैप के ऊपर और नीचे के अंतराल शामिल हैं। उन्होंने ट्रैप के नीचे ऊपरी मास्ट्रिचियन की उपस्थिति, ट्रैप के भीतर क्रिटेशियस/पेलिओसीन सीमा की उपस्थिति और ट्रैप के ऊपर डेनियन अवसाद की उपस्थिति दिखाई। यहां, परासूक्ष्म जीवाश्म अध्ययन के आधार पर उन्होंने यह भी बताया है कि कृष्णा-गोदावरी द्रोणी में ज्वालामुखी की अवधि संभवतः 4 मिलियन साल से अधिक नहीं रही है।

भारत में जीवाश्म कोकोलिथोफोरस पर प्रमुख शोध कार्य बीरबल साहनी पुराविज्ञान संस्थान के शोधकर्ताओं डॉ. सैयद अब्बास जाफर, डॉ. राहुल गर्ग, डॉ. ज्योत्सना राय, डॉ. आभा सिंह, डॉ. अरिंदम चक्रवर्ती और डॉ. प्रेम राज उद्दंडम द्वारा किया गया है। डॉ. सैयद अब्बास जाफर, डॉ. ज्योत्सना राय और मैंने व्यक्तिगत रूप से और एक साथ मिलकर लगभग सभी भारतीय समुद्री घाटियों और ट्राइसिक से लेकर क्वाटरनरी तक के चूनामए परासूक्ष्म जीवाश्मों पर कई शोधपत्र प्रकाशित किए। बीरबल साहनी पुराविज्ञान संस्थान से चूनामय परासूक्ष्म जीवाश्मों के काल निर्धारण पहलू पर और कुछ अन्य पहलुओं पर अंतिम ट्राइसिक से लेकर क्वाटरनरी तक प्रमुख शोधपत्र प्रकाशित हुए हैं।

डॉ. ज्योत्सना राय ने 2004 में लद्दाख हिमालय के सिंधु-त्संगपो सिवनी क्षेत्र के नियो-टेथियन अवसाद से लेट ट्राइसिक (नोरियन से रेटियन युग) के परासूक्ष्म जीवाश्मों के अभिलेख प्रकाशित किए। 2021 में मेरे द्वारा प्रकाशित एक अध्ययन मे काल निर्धारण के लिए परासूक्ष्म जीवाश्मों की उपयोगिता को दर्शाया गया है। इस अध्ययन में स्पीति फॉर्मेशन के निचले हिस्से से जिसमे अम्मोनोइड्स बहुत कम मात्र मे मिलते है, को परासूक्ष्म जीवाश्मों के आधार पर सटीक रूप से कैलोवियन युग का बताया गया है। इससे पहले स्पीति गठन के पूरे अनुक्रम को अम्मोनोइड्स और डाइनोफ्लाजिलेट सिस्ट अध्ययन के आधार पर ऑक्सफ़ोर्डियन से टिथोनियन के रूप में अंकित किया गया था।

डॉ. सैयद अब्बास जाफर ने 1996 मे एक शोधपत्र प्रकाशित किया जिसका उद्देश्य भारत के विभिन्न समुद्री घाटियों से

विभिन्न क्रिटेशियस अनुक्रमों के अंशांकन और समय के साथ उनके विकास में विशेष संदर्भ के साथ चूनामय परासूक्ष्म जीवाश्मों की उपयोगिता प्रस्तुत करना है। डॉ. राहुल गर्ग और के. पी. जैन द्वारा 1995 मे एक शोधपत्र प्रकाशित किया गया है, जो इरिडियम-समृद्ध मिट्टी की परत के नीचे रिपोर्ट किए गए *मिकुला प्रिंसी* ज़ोन से संबंधित नवीनतम मास्ट्रिचिय चूनामय परासूक्ष्म जीवाश्मों के संयोजन का अभिलेख दिखाता है। यह अध्ययन न केवल इस खंड में सबसे कम उम्र के मास्ट्रिचियन के अस्तित्व की पुष्टि करता है बल्कि इरिडियम परत के नीचे क्रिटेशियस/पेलिओसीन सीमा के सीमांकन का भी सुझाव देता है।2018 मे डॉ. ज्योत्सना राय द्वारा प्रकाशित समीक्षा कार्य मे भारत के कई अवसादीय घाटियों से पेलियोजीन अनुक्रमों में परासूक्ष्म जीवाश्मों की उपस्थिति को दर्शाया गया है। उपलब्ध आँकड़े दर्शाते है कि परासूक्ष्म जीवाश्मों के आधार पर मास्ट्रिच्टियन-डैनियन, डैनियन-सेलैंडियन,थानेटियन-वाईप्रेसियन, वाईप्रेसियन-लुटेसियन, लुटेसियन-बार्टोनियन और बार्टोनियन-प्राइबोनियन जैसी समय सीमाओं के सटीक सीमांकन के लिए परासूक्ष्म जीवाश्मों के साक्ष्य महत्वपूर्ण साबित हुए हैं। डॉ. अरिंदम चक्रवर्ती द्वारा उत्तरी हिंद महासागर के अंडमान एवं निकोबार द्वीप समूहों से परासूक्ष्म जीवाश्मों का अध्ययन किया गया है। इन अध्ययनों मे मायोसीन एवं आरंभिक प्लीओसिन के परासूक्ष्म जीवाश्मों की उपस्थिति के आधार पर विभिन तलछटी अनुक्रमों का काल निर्धारण किया गया है।2015 मे डॉ. प्रेम राज उद्दंडम द्वारा उत्तरी और पश्चिमी बंगाल की खाड़ी के सतही अवसाद के नमूनों से होलोसीन चूनामय परासूक्ष्म प्लवकों को अभिलेखित किया गया है। परासूक्ष्मप्लवकों के समुच्चय में क्षेत्रीय अंतर दर्ज किए गए। उत्तरी बंगाल की खाड़ी से अवसाद के नमूनों में *एमिलियानिया हक्सलेई* और *गेफिरोकैप्सा ओशनिका* की बहुत कम प्रचुरता दिखाई दी जो बहुत कम उत्पादकता का संकेत देती है। जबकि बंगाल की पश्चिमी खाड़ी से अवसाद के नमूनों में *गेफिरोकैप्सा ओशनिका* के प्रभुत्व और *एमिलियानिया हक्सलेई* के उप प्रभुत्व के साथ उच्च प्रजाति विविधता दिखाई गई, जो उच्च उत्पादकता का संकेत देती है।

चित्र २: बीरबल साहनी पुराविज्ञान संस्थान से परासूक्ष्म जीवाश्मों पर अध्ययन करने वाले प्रमुख शोधकर्मी।

परासूक्ष्म जीवाश्मों के आधार पर समुद्री अनुक्रमों के काल निर्धारण का अध्ययन करना और उन पर शोधपत्र प्रकाशित करना बीरबल साहनी पुराविज्ञान मे कार्यरत वैज्ञानिकों और शोध छात्रों की विशेषता है। 2022 में डॉ. स्तुति सक्सेना ने अरिंदम

चक्रवर्ती और अन्य शोध कर्मियों के साथ एक अध्ययन में *निकलिथस एम्प्लिफिकस* की संस्तरीय विस्तार के संशोधन पर कार्य किया गया है। इस अध्ययन में, हिंद महासागर, पैराटेथिस और एड्रियाटिक सागर में *निकलिथस एम्प्लिफिकस* की उत्पत्ति को पहली बार प्रलेखित किया गया है। छोटे *निकलिथस एम्प्लिफिकस* के संस्तरीय विस्तार को हिंद महासागर में अंतिम मायोसीन(मेसिनियन) से प्रारंभिक मध्य मायोसीन तक और आगे एड्रियाटिक सागर में विलंबित इओसीन तक बढ़ाया गया है।

भारत से परासूक्ष्म जीवाश्मों पर आधारित शोधपत्रों की लंबी श्रंखला है। उसमे से सभी का उल्लेख इस लेख में करना संभव नहीं है। अतः उसमें से कुछ प्रमुख शोधपत्रों का वर्णन इस लेख मे किया गया है।

आभा सिंह
विज्ञानी 'डी',
बीरबल साहनी पुराविज्ञान संस्थान, लखनऊ

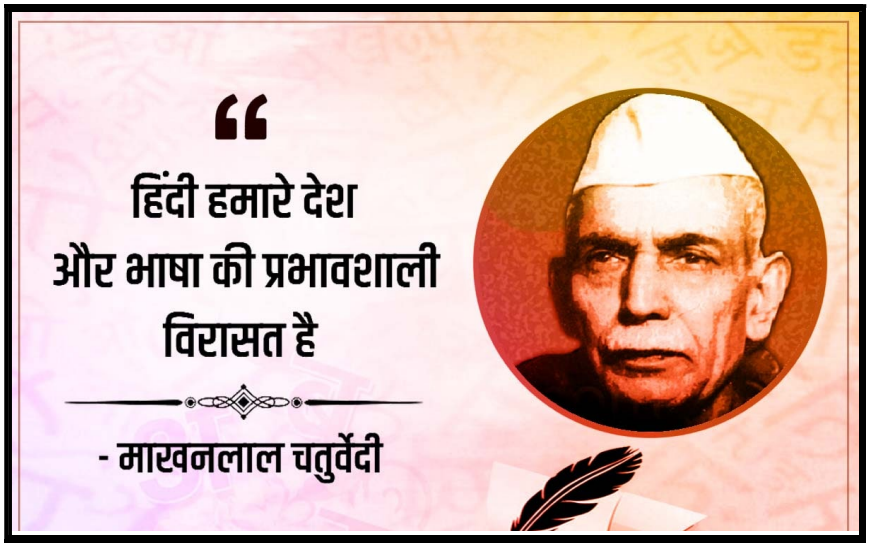

गोंडवाना अनुक्रम में परागाणुविज्ञान (पेलिनोलॉजी) का अनुप्रयोग

विभिन्न प्रकार के बीजाणु और पराग कणों (मोनोसैकेट्स, नॉन-स्ट्रिएट डिसैकेट्स, स्ट्रिएट डिसैकेट्स) के प्रभुत्व और उप-प्रभुत्व के आधार पर, गोदावरी घाटी कोयला क्षेत्र के निचले गोंडवाना में कुल 12 समूहों की पहचान की गई है। तालचिर पराग वनस्पति को मुख्य रूप से रेडियल मोनोसैकेट की प्रमुख उपस्थिति के रूप में वर्णित किया गया है। गोदावरी घाटी कोयला क्षेत्र में केवल दो जोनों, *प्लीकटिपॉलेनाइट्स गोंडवानेन्सिस* और पैरासैकेट्स *कोरबाएन्सिस* की पहचान की गई है। निचला हिस्सा *प्लीकटिपॉलेनाइट्स* की प्रमुख उपस्थिति और *परासैकेट्स* की उप-प्रमुख उपस्थिति द्वारा पहचाना गया है। तलचिर अवसादों को विलंबित अस्सेलियन-सकमेरियन युग (~ 295-290 मिलियन वर्ष पहले) का माना गया है। हालांकि भूवैज्ञानिक रूप से करहरबारी संरचना को गोदावरी घाटी कोयला क्षेत्र में दर्ज नहीं किया गया है, परागाणुविज्ञान के आधार पर करहरबारी अवसादों की पहचान की गई है।

करहरबारी पराग वनस्पति समूहों की विभिन्न गोंडवाना द्रोणियों में कई शोधकर्ताओं द्वारा पहचान की गई है। इसे भी दो भागों में विभाजित किया गया है। निचले भाग में केवल एक पराग समूह है, जिसे *कैलूमिसपोरा + परासैकेट्स* पराग समूह कहा जाता है, जबकि ऊपरी भाग में *पैरासैकेट्स + शेयूरिंगिपॉलेनाइट्स* पराग समूह होता है। करहरबारी अवसादों के लिए विलंबित सकमेरियन-प्रारंभिक आर्टिन्स्कियन (~ 290-286 मिलियन वर्ष पहले) युग माना गया है।

भारतीय निचली गोंडवाना संस्तरों की अगली संरचना बाराकर संरचना है, जिसे भी दो भागों में विभाजित किया गया है: निचली बाराकर और ऊपरी बाराकर संरचना। बाराकर संरचना देश के सभी द्रोणियों में कोयले का प्रमुख भंडार है, जिसमें कुल संसाधनों का 90% से अधिक है। निचली बाराकर पराग वनस्पति को भारतीय गोंडवाना द्रोणियों में केवल एक पराग जोन, *शेयूरिंगिपॉलेनाइट्स बाराकरेंसिस* द्वारा पहचाना गया है, जिसे आर्टिन्स्कियन (~ 283 मिलियन वर्ष पहले) युग का माना गया है।

ऊपरी बाराकर पराग वनस्पति को *फौनीपॉलेनाइट्स वेरियस* जोन द्वारा पहचाना गया है, जिसे कुंगुरियन (~ 283-273 मिलियन वर्ष पहले) युग का माना गया है। इसके बाद की संरचना बेरन मेजर्स संरचना है, जिसे *डेंसिपॉलेनाइट्स डेंसस* जोन द्वारा पहचाना गया है और रोडियन (~ 273-266 मिलियन वर्ष पहले) युग का माना गया है। भारतीय निचली गोंडवाना संस्तरों का सबसे नया हिस्सा रणिगंज (निचली काम्थी) संरचना है, जिसे वर्डियन-चांगशिंगियन (~ 266-251 मिलियन वर्ष पहले) युग का माना गया है। इस पराग वनस्पति को मुख्य रूप से *स्ट्रिएट बाईसैकेट्स* की उपस्थिति द्वारा पहचाना गया है और इसमें कुछ महत्वपूर्ण प्रकार भी होते हैं।

इसके अलावा, कुछ ट्रायसिक प्रकार जैसे *प्लेफोर्डियास्पोरा, डेंसोइस्पोराइट्स, लुंडब्लाडिस्पोरा*, और *लुनाटिस्पोरा* भी दिखने लगते हैं। इन पराग समूहों के आधार पर, क्रोनोस्ट्रैटिग्राफी के साथ-साथ किसी भी संस्तर के निरंतर और बाधित अनुक्रम को आसानी से पहचाना जा सकता है। ये पराग समूह निचली गोंडवाना अवसादों के पूरे संस्तरों को सटीक रूप से परिभाषित करते हैं। इसलिए, पराग कणों की उपस्थिति के आधार पर पराग जोन को आसानी से पहचाना जा सकता है।

परागाणुविज्ञान के आधार पर पल्यनो-ब्लॉक्स की अवधारणा प्रस्तुत की जा सकती है, जो टेक्टोनिक ब्लॉक्स की पहचान में मदद करती है। परिणामस्वरूप, परागाणुविज्ञान एक अवधारणा है जो किसी भी संस्तरों के टेक्टोनिक और क्रोनोस्ट्रैटिग्राफिक विशेषताओं के निहित है और टेक्टोनिक ब्लॉक्स के सापेक्ष सम्बन्धों की व्याख्या भी कर सकती है। परागाणुविज्ञान को अन्य विज्ञानों जैसे भू-रसायन, भू-भौतिकी, अवसाद विज्ञान, और पेट्रोफिजिक्स के साथ एकीकृत दृष्टिकोण की आवश्यकता है, जो भौमिकीय मॉडलिंग और कोयला प्रणाली अध्ययनों के लिए आवश्यक है तथा किसी भी द्रोणी के टेक्टोनिक विकास का अनुमान

लगाने में भी सहायक हो सकती है। संक्षेप में, यहाँ परागाणुविज्ञान को कोयला अन्वेषण और उत्पादन उपलब्धियों को सुधारने के लिए एक प्रभावी उपकरण के रूप में प्रदर्शित किया गया है।

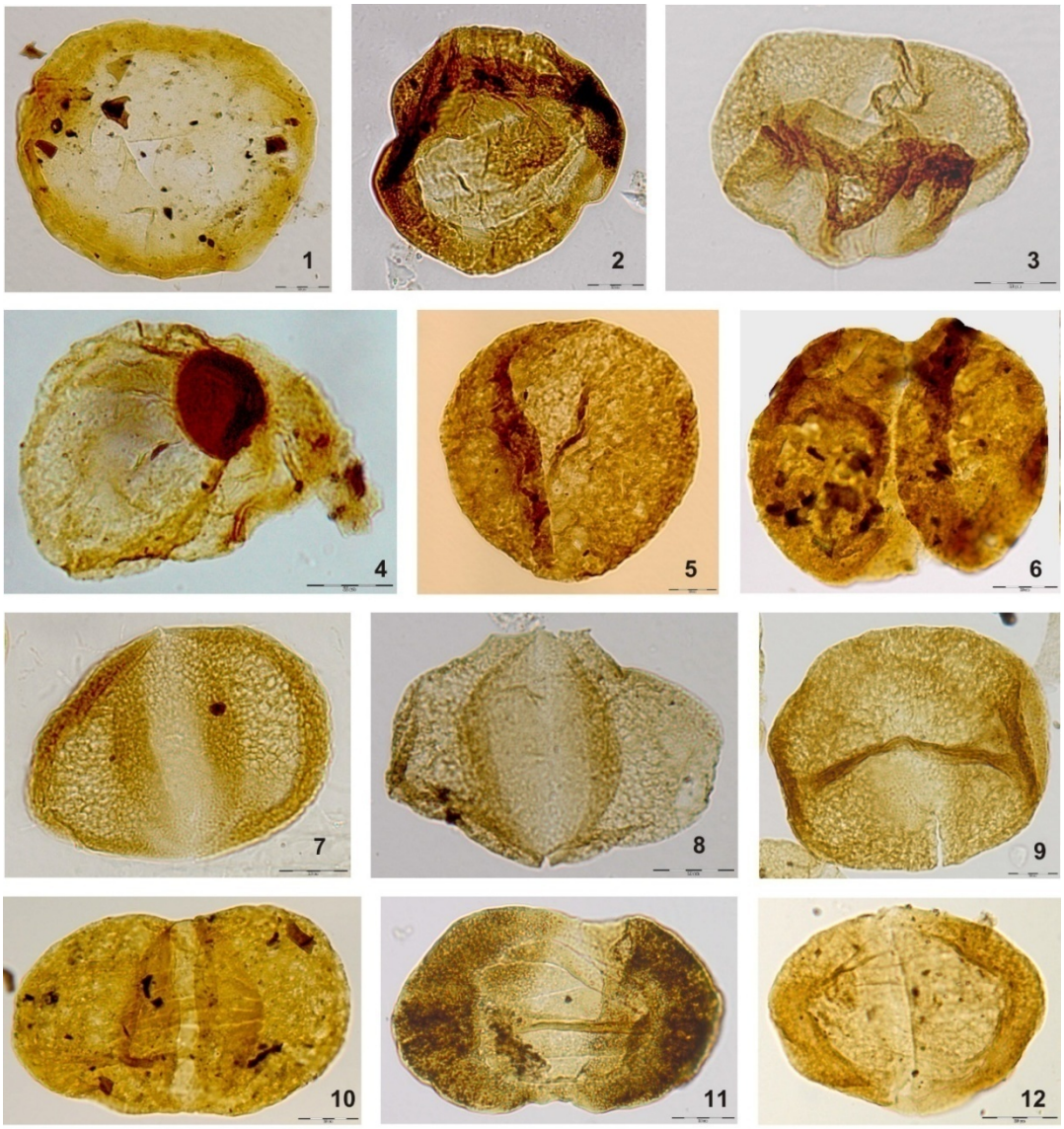

1. Parasaccites, 2. Striomonosaccites, 3. Densipollenites, 4. Densipollenites, 5. Scheuringipollenites, 6. Ibisporites, 7. Falcisporites, 8. Klausipollenites, 9. Chordasporites, 10. Crescentipollenites, 11. Strotersporites, 12. Faunipollenites.

नेहा अग्रवाल

विज्ञानी 'डी',

बीरबल साहनी पुराविज्ञान संस्थान, लखनऊ

उच्च आर्कटिक पारिस्थितिकी तंत्र और पुराजलवायु परिवर्तन

पर्यावरण में वर्तमान तापमान वृद्धि के कारण उच्च आर्कटिक स्थलीय जलीय पारिस्थितिकी तंत्र कुछ तीव्र बदलावों का अनुभव कर रहे हैं। आर्कटिक परिदृश्य में असंख्य उथले जल निकाय एक आम विशेषता हैं और ये उथले जल निकाय जैव विविधता से समृद्ध हैं।

आर्कटिक के छोटे जल निकाय तापमान, प्रकाश जैसी पर्यावरणीय स्थितियों में बदलाव के प्रति अतिसंवेदनशील हैं। इन जल निकायों में रहने वाले जीव समूह पर्यावरणीय परिवर्तनों पर निर्भर हैं तथा जीवित रहने के लिए पर्यावरणीय परिवर्तनों के अनुरूप प्रतिक्रिया करते हैं। उच्च आर्कटिक क्षेत्र में ठंड, शुष्कता, गर्मियों के दौरान 24 घंटे के दिन के उजाले से उच्च पराबैंगनी विकिरण और सर्दियों के दौरान सूर्य के प्रकाश का आभाव जैसे परिस्थितियों का अनुभव होता है तथा स्थलीय जैवसमूह इन पर्यावरणीय चरम परिस्थितियों का अनुभव करता है। उच्च आर्कटिक ध्रुवीय क्षेत्र में जलवायु वार्मिंग के साक्ष्य प्रत्यक्ष दिखाई देते हैं, परन्तु उष्णकटिबंधीय क्षेत्र में ऐसे परिवर्तन सूक्ष्म होते हैं और उन्हें रिकॉर्ड करना कठिन होता है।

न्यू-एलेसुंड, स्वालबार्ड, नॉर्वे उच्च आर्कटिक ध्रुवीय क्षेत्र में आता है। वहाँ स्थित छोटे जल निकाय के सतही अवसादों से परागाणविक अवशेष, विशेष रूप से डेस्मिड्स, क्लैडोसेरा, थेकेमोएबियन, चिरोनोमिड्स और कवक, प्राप्त किये गए हैं। पेलिनोलॉजी जीवित और जीवाश्म दोनों रूपों में वनस्पतियों के पराग, बीजाणुओं और कुछ सूक्ष्म प्लवक जीवों का अध्ययन है, जिन्हें सामूहिक रूप से पेलिनोमोर्फ कहा जाता है। भौमिकीय अतीत की पारिस्थितिक और पर्यावरणीय स्तिथियों को समझने और अध्ययन करने के लिए परागाणविक सूक्ष्म अवशेष एक महत्वपूर्ण उपकरण के रूप में काम करते हैं।

सूक्ष्म हरे शैवाल प्राथमिक उत्पादक हैं और स्थलीय आर्कटिक टुंड्रा पारिस्थितिकी तंत्र का एक महत्वपूर्ण हिस्सा हैं। प्राथमिक उत्पादक सीधे तौर पर प्रकाश, तापमान आदि जैसे भौतिक पर्यावरणीय कारकों में परिवर्तन से प्रभावित होते हैं। इसलिए, हाल ही तापमान में हुई वृद्धि को समझने के लिए इन तालाबों के जैवसमूह का अध्ययन महत्वपूर्ण है।

समशीतोष्ण और उष्णकटिबंधीय क्षेत्रों में परागाणविक अध्ययन द्वारा इस प्रॉक्सी पर आधारित पुराजलवायु की महत्वपूर्ण जानकारी प्रदान की है। असल में, उत्तरी उच्च अक्षांश से केवल सीमित परागाणविक प्रॉक्सी डेटा ही उपलब्ध है। पराग, डायटम, चिरोनोमिड पर आधारित परागाणविक डेटा भी अल्पमात्र में ही है। जहां उच्च आर्कटिक, स्वालबार्ड पर टुंड्रा वनस्पति आवरण की उपस्थिति के कारण पराग डेटा कम विविध पौधों के आवरण को दर्शाता है, वहां माइक्रोएल्गी, साइनोबैक्टीरिया, लाइकेन आदि द्वारा उच्च विविधता प्रदर्शित की जाती है। अतः तलछटों के पराग रिकॉर्ड का उपयोग करके आधुनिक तथा पुराजलवायु उतार-चढ़ाव को समझना मुश्किल है। समग्र परागाणविक अवशेषों का अध्ययन आर्कटिक क्षेत्र में तेजी से हो रहे जलवायु के उतार-चढ़ाव को रिकॉर्ड करने में उपयोगी होता है।

सतही अवसाद में पाए जाने वाले पैलिनोमोर्फ्स पुरापर्यावरण, पुरापारिस्थितिकीय और पुराजलवायु अध्ययन के लिए एक आधुनिक एनालॉग के समान हैँ। चूंकि पारिस्थितिकी तंत्र जैविक (उत्पादक, उपभोक्ता, अपघटक) तथा अजैविक (हवा, पानी, मिट्टी, खनिज, सूरज की रोशनी, तापमान, पोषक तत्व आदि) घटकों का संयोजन होता है, इसलिए अवसाद में पाए जाने वाले सभी संरक्षित पैलिनोमोर्फ्स का अध्ययन, पृथक-पृथक किये जाने वाले अध्ययन की तुलना में अधिक महत्वपूर्ण जानकारी प्रदान करता है।

न्यू-एलेसुंड, स्वालबार्ड में स्थित जल निकाय के सतही अवसादों से प्राप्त पैलिनोमोर्फस में प्राथमिक उत्पादकों (हरित शैवाल), उपभोक्ताओं (प्रोटिस्ट और अन्य ज़ूप्लांकटन), और अपघटक (कवक) के जैविक अवशेषों का सम्पूर्ण संयोजन शामिल है। हरे शैवाल कोस्मेरियम के रूप में पारिस्थितिकी तंत्र के प्राथमिक उत्पादक, उपभोक्ता के रूप में क्लैडोसेरन्स, थेकेमोएबियन और चिरोनोमिड डीकंपोजर का प्रतिनिधित्व करने वाले कवक हैं। सतह के अवसादों से प्राप्त सभी पैलिनोमोर्फ की सापेक्ष बहुलता का उपयोग पुराजलवायु पुनर्निर्माण में किया जाता है। विभिन्न पारिस्थितिक घटकों से जुड़ा अध्ययन जलीय पारिस्थितिकी तंत्र के भीतर जैविक अंतःक्रियाओं की महत्वपूर्ण जानकारी प्रदान करता है। इस पद्धति का उपयोग उच्च आर्कटिक क्षेत्रों में पुरापर्यावरणीय पुनर्निर्माण अध्ययन के लिए प्रभावी ढंग से किया जा सकता है।

वर्तिका सिंह
विज्ञानी 'ई',
बीरबल साहनी पुराविज्ञान संस्थान, लखनऊ

गुजरात के इओसीन लिग्नाइट निक्षेप: पश्चिमी भारत में जैविक जीवाश्मों का केंद्र

दो दशकों से, गुजरात की लिग्नाइट खदानें पेलिओजीन काल के साक्ष्यों के लिए संभावित संसाधन रही हैं, जो कि जीवाश्मविज्ञान, स्थूल वानस्पतिक डेटा, कशेरुकी जीवों पर शोध से संबंधित हैं जो गोंडवाना और लौरेशिया के साथ भारत के बीच प्रवास मार्गों का संकलन करते हैं। कच्छ और कैम्बे द्रोणी की खुली-कास्ट लिग्नाइट खदानें डिप्टरोकार्पेसी पेड़ों के प्रभुत्व वाले इओसीन एंजियोस्पर्म वर्षावन के अस्तित्व के लिए महत्वपूर्ण केंद्र हैं। भारतीय प्लेट के भूमध्य रेखा के निकट होने के समय, लिग्नाइट निक्षेपव के साथ संकलित डेटा, भारत के उत्तर कीओर प्रवाह और जलवायु के बारे में कई दिलचस्प तथ्य सामने लाता है।लिग्नाइट निक्षेप बड़े पैमाने पर ईओसीन युग के हैं जब आवृतबीजी-वर्चस्व वाले वनों का प्रादुर्यभाव हो रहा था। परागाणविक साक्ष्य भारतीय लिग्नाइट्स को पैलियोसीन से इओसीन युग के ही बताते है, लेकिन अन्य प्रॉक्सी का उपयोग करके बेहतर रिज़ॉल्यूशन से पता चलता है कि सबसे पुरानी राजस्थान की अकली (गिरल) खदान है, इसके बाद वाईप्रेसियन कैम्बे लिग्नाइट्स हैं और सबसे कम उम्र के लुटेटियन कच्छ लिग्नाइट्स है। भारत में लिग्नाइट के अधिकांश भंडार टेक्टोनिक बेसिनों से जुड़े हैं जो भारतीय भूभाग के घूर्णन और उत्तर की ओर प्रवास के दौरान विकसित हुए थे जब यह भूमध्य रेखा के पास स्थित था।

कैम्बे द्रोणी में कई खुली लिग्नाइट खदानों में से, वस्तान लिग्नाइट खदान जोकि सूरत जिले से 30 किमी उत्तर पूर्व, सूरत-भरूच क्षेत्र में है तथा तारकेश्वर लिग्नाइट खदान जोकि सूरत से 40 किमी उत्तर पूर्व और किम शहर के तारकेश्वर से 23 किमी पूर्व में है और मंडावी गांव और वालिया-मंगरोल लिग्नाइट खदान, वस्तान खदान के उत्तर में और सूरत से 30 किमी उत्तर पूर्व में है सभी एम्बर संग्रह के लिए महत्वपूर्ण स्थल हैं। हाइपरथर्मल घटनाओं का सबसे अच्छा प्रमाणन वस्तान और तारकेश्वर के लिग्नाइट खदान खंडों में होता है। दूसरी ओर, भारतीय उपमहाद्वीप पर कच्छ द्रोणी में लिग्नाइट खदानों में अच्छी तरह से संरक्षित संभावित खंड हैं जो मध्य इओसीन जलवायु की उपस्थिति को प्रदर्शित करते हैं। मातनोमाध, पनांध्रो और उमरसर कई खुली लिग्नाइट खदानें मध्य इओसीन हरुडी फार्मेशन से संबद्ध हैं और एम्बर-युक्त लिग्नाइट सीम और जीवाश्म निष्कर्षों से समृद्ध अवसादी वर्गों के लिए उत्कृष्ट स्रोत हैं। भारत में नए एम्बर युक्त लिग्नाइट इलाकों के संदर्भ में तेजी से प्रगति हुई है, जो पेलिओसीन युग से मध्य इयोसीन तक भारत के प्रवाह के दौरान टेक्टोनिक पैटर्न को समझने के संभावित स्रोत भी हैं। गुजरात (कैंबे और कच्छ द्रोणी) और राजस्थान (बाड़मेर द्रोणी) के ओपन-कास्ट लिग्नाइट भंडार के लिग्नाइट अनुक्रम निकट-तटीय कोयला संस्तर और जैविक समावेशन के साथ एम्बर नोड्यूल का अध्ययन करने के लिए महत्वपूर्ण स्त्रोत हैं।

एम्बर समावेशन का अध्ययन करने के लिए, बीएसआईपी, लखनऊ में एम्बर विश्लेषण और पुराकीटविज्ञान प्रयोगशाला ने एम्बर और इसके विविध जीवाश्मों के व्यापक विस्तार का पता लगाने और एक इओसीन युग के उष्णकटिबंधीय आवृतबीजी वन की पुर्नसंरचना में योगदान करने के लिए शोधकर्ताओं को आमंत्रित करने में अपनी रुचि दिखाई है। 14 नवंबर, 2023 को, देश की पहली एम्बर प्रयोगशाला का आधिकारिक उद्घाटन चंडीगढ़ में पंजाब विश्वविद्यालय के एमेरिटस प्रोफेसर अशोक साहनी व बीरबल साहनी पुराविज्ञान संस्थान के निदेशक प्रोफेसर एमजी ठक्कर और प्रयोगशाला प्रमुख डॉ. हुकम सिंह की उपस्थिति में किया। प्रयोगशाला कैम्बे और कच्छ के लिग्नाइट से एम्बर के टुकड़ों के प्रसंस्करण का काम करती है और एम्बर में संरक्षित बायोटा की संभावित वर्गीकरण, भौगोलिक समानता और विस्तार संबंधी विषयों पर प्रकाश डालती है। बुनियादी ढांचे की सुविधा का उपयोग जीवाश्मविज्ञान अध्ययन के माध्यम से नए एम्बर अनुसंधान मुद्दों का पता लगाने के लिए किया जा सकता है।

एम्बर का अध्ययन करना महत्वपूर्ण है क्योंकि यह उत्कृष्ट और विविध जैविक संयोजनों को संरक्षित करता है जो अवसाद में नहीं देखे जाते हैं और शोधकर्ताओं को विशेष जीवाश्म वंश के लिए आणविक स्तर के परीक्षण करने का मौका देता है।

(क-झ): बीरबल साहनी पुराविज्ञान संस्थान, लखनऊ में एम्बर विश्लेषण और पुराकीटविज्ञान प्रयोगशाला का औपचारिक उद्घाटन

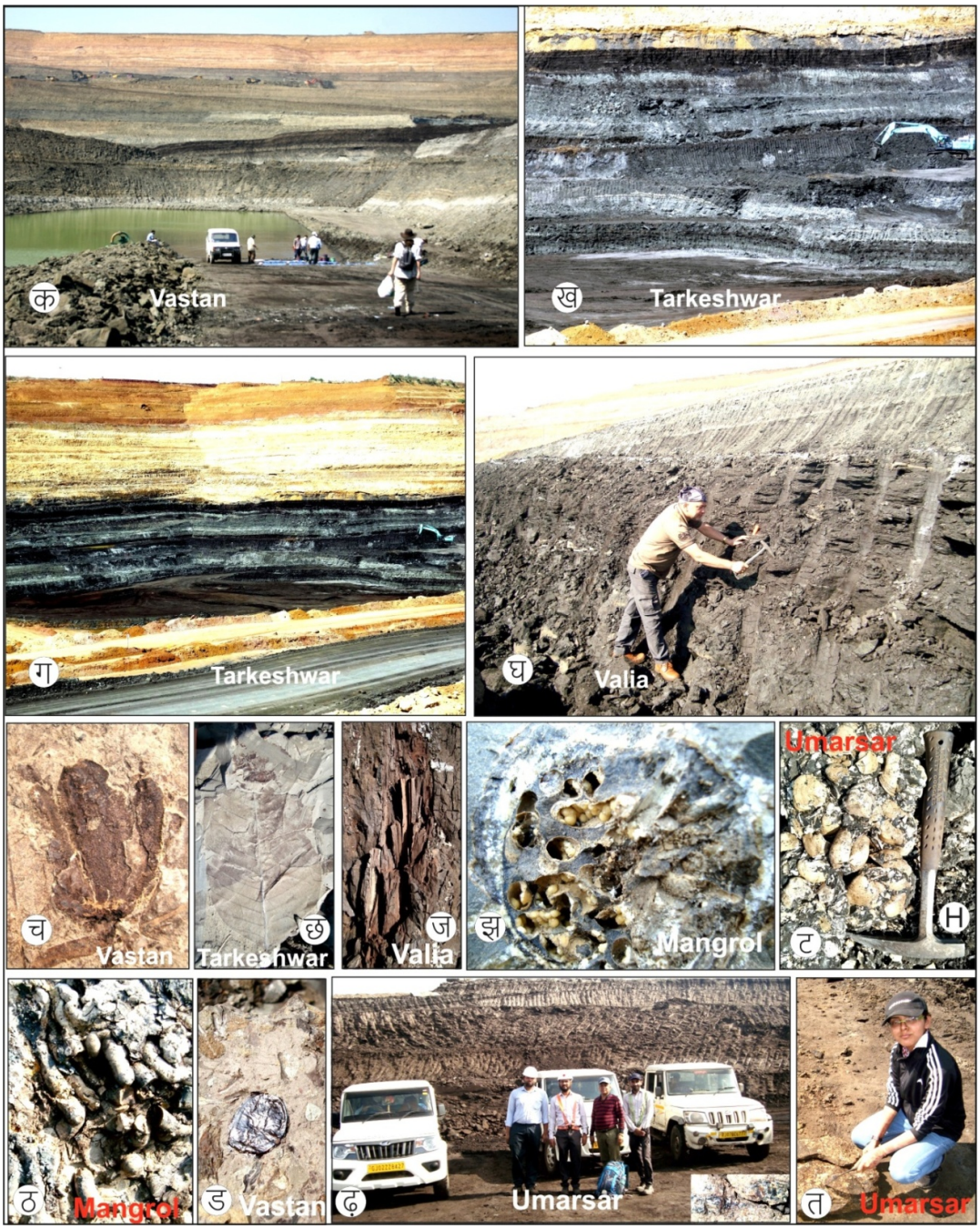

(क-घ): वस्तान, तारकेश्वर और वालिया की ओपन-कास्ट लिग्नाइट खदान का दृश्य; (च-ड) वस्तान, तारकेश्वर, वालिया और मंगरोल से प्राप्त तलछटी जीवाश्म; (ढ़): उमरसर लिग्नाइट खदान के श्रमिकों के साथ डॉ. हुकम सिंह; (त) छात्र द्वारा लिग्नाइट से एम्बर नोड्यूल्स का निष्कर्षण

हुकम सिंह
विज्ञानी 'ई'
बीरबल साहनी पुराविज्ञान संस्थान, लखनऊ

क्वाटरनरी लेक ड्रिलिंग प्रोजेक्ट (BSIP-QLDP)

बीरबल साहनी पुराविज्ञान संस्थान (BSIP), लखनऊ ने क्वाटरनरी लेक ड्रिलिंग प्रोजेक्ट (BSIP-QLDP) नामक एक प्रमुख संस्थागत परियोजना शुरू की, जिसका उद्देश्य भारतीय उपमहाद्वीप के विभिन्न स्थलाकृतिक और भौगोलिक क्षेत्रों में स्थलीय पर्यावरण के मानसून-संचालित जलवायु इतिहास का पुनर्निर्माण करना है।

चित्र- सुरहा ताल, बलिया जिला, उत्तर प्रदेश में तलछटी कोर की ड्रिलिंग

इस प्रमुख परियोजना के लिए देश के विभिन्न राज्यों से गहरे झील अवसाद के नमूनों की आवश्यकता है। BSIP ने चयनित झील स्थलों से कोर ड्रिलिंग के लिए भारतीय भू-चुंबकत्व संस्थान (IIG), मुंबई के साथ सहयोग किया। संभावित ड्रिल स्थलों की पहचान के लिए ड्रिलिंग शुरू होने से पहले सीएसआईआर-राष्ट्रीय भूभौतिकीय अनुसंधान संस्थान (NGRI), हैदराबाद के विशेषज्ञों की टीम द्वारा भूभौतिकीय सर्वेक्षण का कार्य भी पूर्ण किया गया।

हाल के दशकों में भारतीय ग्रीष्मकालीन मानसून (ISM) घटनाओं की आवृत्ति में वृद्धि हुई है, और त्वरित घटनाओं (rapid events) में महत्वपूर्ण स्थानिक विविधता है। इसके अलावा, पिछले कुछ वर्षों के दौरान ISM की अवधि और तीव्रता में बदलाव आया है और यह अप्रत्याशित है, जिससे अत्यधिक कृषि और आर्थिक नुकसान हुआ है। भविष्य के जलवायु मॉडलिंग के लिए सटीक पुराजलवायु डेटा की आवश्यकता होती है, जो गंगा के मैदान (GP) और कोर मानसून जोन (SMZ) से उत्पन्न किया जाएगा, जिसमें पहले चरण में मुख्य रूप से उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश, महाराष्ट्र और छत्तीसगढ़ राज्य शामिल होंगे। ऐसे जलवायु अध्ययन के लिए, झीलें स्थलीय पारिस्थितिक तंत्र पर जलवायु परिवर्तन के अध्ययन के लिए सबसे अच्छा संग्रह हैं। आसपास के वातावरण से एकत्रित अवसाद में विभिन्न जैविक और अजैविक प्रॉक्सी का अध्ययन स्थानीय पर्यावरणीय स्थितियों, झील के पानी के रसायन विज्ञान, तापमान और झील की उत्पादकता का उच्च-विभेदन इतिहास प्रदान करता है।

बीरबल साहनी पुराविज्ञान संस्थान के निदेशक प्रोफेसर महेश जी. ठक्कर के नेतृत्व में क्वाटरनरी विभाग से 23 वैज्ञानिकों की टीम उच्च-विभेदन वाले पुरा-जलवायु डेटा के लिए विभिन्न भौतिक, रासायनिक और जैविक प्रॉक्सी हेतु अवसाद कोर के ड्रिलिंग एवं अध्ययन कार्य में लगे हुए हैं। प्रोफेसर महेश जी. ठक्कर एवं संयोजक, डॉ. अनुपम शर्मा के नेतृत्व में संस्थान के

क्वाटरनरी विज्ञानियों एवं शोध छात्रों की टीम ने उत्तर प्रदेश के बलिया जिले में स्थित सुरहा ताल से कोर ड्रिलिंग कर अब तक 10-मीटर गहरा अवसादी कोर प्राप्त कर लिया है और अधिक गहराई तक ड्रिल करने की योजना बनाई जा रही है। इस महत्वपूर्ण कोर ड्रिलिंग कार्य में IIG के निदेशक प्रोफेसर ऐ पी डिमरी के नेतृत्व में डॉ. बीवी लक्ष्मी, एवं डॉ. के. दीना दयालन भी शामिल थे। यह पहली बार है कि BSIP, IIG और NGRI के सहयोग से ऐसे गहरे तलछटीय कोर की ड्रिलिंग इस क्षेत्र से संभव हो पाई है जो पिछले ~50,000 वर्षों से मध्य गंगा मैदान पर मानसूनी बदलावों को समझने में मदद करेगा।

QLDP के दूसरे चरण के दौरान, BSIP ड्रिलिंग कोर के लिए इस अध्ययन को हिमालय, राजस्थान और भारतीय उपमहाद्वीप के तटीय हिस्से तक विस्तारित करेगा। जलवायु-संस्कृति संपर्क का अध्ययन करने और सामाजिक प्रतिक्रिया को देखने और भारतीय उपमहाद्वीप के पुराजलवायु मॉडलिंग हेतु विशाल डेटा का उत्पादन करने में भी हम सक्षम होंगे, जो वैश्विक महत्ता प्रदान करेगा। इस परियोजना के तहत युवा शोधकर्ताओं (पीएचडी और पोस्ट-डॉक्स) को भी प्रशिक्षित किया जा रहा है जो इस तरह के अत्याधुनिक वैज्ञानिक अध्ययनों को अगले स्तर तक ले जाएंगे।

अनुपम शर्मा (विज्ञानी 'जी'), **बिनीता फर्तियाल** (विज्ञानी 'एफ') एवं **स्वाति त्रिपाठी** (विज्ञानी 'ई')
क्वाटरनरी प्रयोगशाला,
बीरबल साहनी पुराविज्ञान संस्थान, लखनऊ

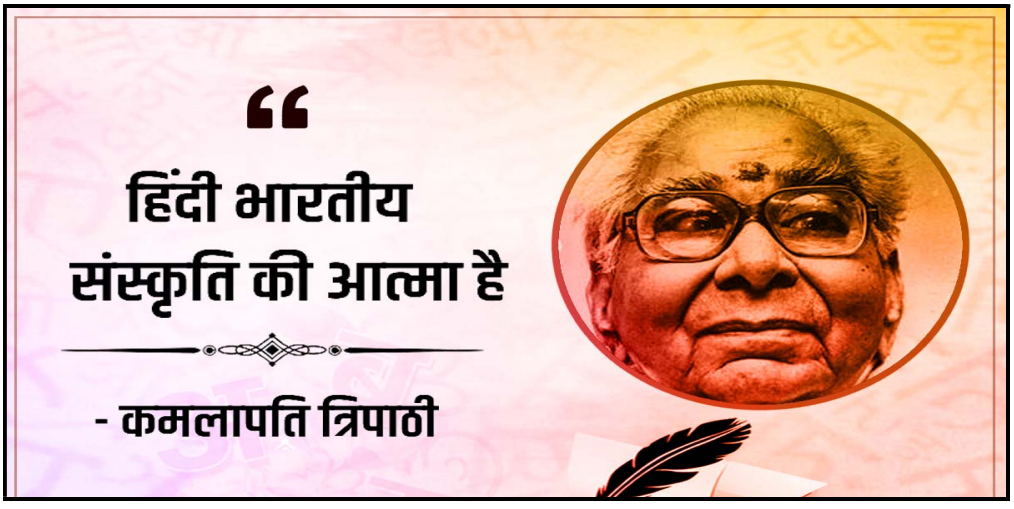

कविताएँ

लद्दाख

भ्रमण के लिए लद्दाख की मेरी दसियों यात्राओं ने मुझे यह कविता लिखने के लिए प्रेरित किया। पहली बार मैं हमारे देश के उस जादुई क्षेत्र में वर्ष 2000 में गयी थी, तब मैंने स्वयं के संसाधन और स्वयं के जुनून से, एक पुराझील खंड से नमूने अकेले ही एकत्र किए थे। फिर जब मैं 2001 में बीएसआईपी में शामिल हुई, तो मैं लाहौल-स्पीति, लद्दाख और पूर्वी काराकोरम क्षेत्रों में एक्रीशनरी इवोल्यूशन, टेक्टोनिक्स और पेलियोक्लाइमेट पर लद्दाख परियोजना में शामिल हो गयी। भूवैज्ञानिक अनुसंधान के लिए इस रहस्यमय स्थान में मेरी खोज इसी के साथ शुरू हुई। इस जगह की विशालता के दर्शन और सार्थक क्षेत्रीय चित्रण के लिए मैंने तब से लगभग हर साल लद्दाख का दौरा किया और पाया कि लद्दाख एक खुली पुस्तक है जिसे मुझे लगता है सभी भूविज्ञान के छात्रों को देखना चाहिए। यह भूविज्ञानी के लिए 'जन्नत" की तरह है। इसने न केवल मुझे इसके क्वाटरनरी पुराविज्ञान को जानने में मदद की बल्कि मुझे इसके नैसर्गिक आकर्षण ने भी लुभाया है। यह स्थान बार-बार अपने पास वापस बुलाता है और यह कविता इस स्थान उस सम्मोहन के कारण ही लिखी गयी है।

गर इक बार विशाल नीले आकाश के नीचे बंजर पहाड़ को महसूस किया हो,
तेज़ धारें, टिम-टिमाते तारे, और उज्जवल चंद्रमा की चाँदनी को अनुभूत किया हो,

बलखती नदियों के शोर, बर्फ और बादलों की लुका-छिपी का आनंद लिया हो,
धूल की सुगंध, तेज़ हवाओं ने सूखे गालों को अनबूझ छुआ हो,

तेज़ धूप में, खुली हवा में भर-भर लम्बी सांस लिया हो,
चौड़ी घाटी, जटिल चोटियों को गर कदमों से पार किया हो,
तब धन्य हुए है आप!

अनुभव इतने होंगे तुमको, बरबस ही तुम खोजोगे,
फिर निश्चय ही तुम लौटोगे!
दुर्गमता को ढाल बनाकर, प्रकृति का सुख पाने को,
तब निश्चय ही तुम लौटोगे!
तब निश्चय ही तुम लौटोगे!

बिनीता फर्तियाल

कहानी शिकस्त की

सांसें तेज़, सूखा गला, धड़कनों की रफ़्तार,
लांघे नहीं लकीर फिर कैसे पांव थम गए?
सूंघी न पसीने में लत मिट्टी और जम गए?
खोई कहाँ सब तड़प, खो कहाँ सारे गम गए?

आओ सुनाऊँ तुम्हें कहानी मैं शिकस्त की,
जिसमें सारे जन गए,
जिसमें सारे बल गए,
जिसमें सब सपने गए,
जिसमें सब अपने गए।

खोल दूँ ये ज़ख्म तो लहू में सिफ़र जायेगा,
ये अटल जो दिख रहा "शजर" बिखर जायेगा,
पतवार की तरह उड़ा आँधियों में,
टूटा किस शाख से, बह के किधर जायेगा?

ये गम की वो नदी नहीं समुंदरों की मौज है,
क्या उभरेगा तिनका कहीं, अंजाम क्या पायेगा?

कुछ समय का काफ़िला कुछ हवा का शोर है,
कोई आरज़ू जो दब रही, जां से सराबोर है,
कुछ तो है जो ख़त्म नहीं होने देती इसे,
आज़मा ही ले जब तक इसमें ज़ोर है।

पासा पलट ही दे तीन भुजाएं तुझसे कह रहीं,
या बदल दे इसके मायने, ये जो भी सबसे कह रही,
तू खेल दे ये बाज़ी, लगा दे फिर सब दांव पे,
तू फूंक ही दे ये आग जो अब तक बुझी नहीं।

तू डर जायेगा सोच के वक़्त की अगली चाल,
भरमायेगा पास आने से पहले तुझे काल,
काल की क्या बात करें, उसकी तो क्या ही बिसात है,
सांसों में जो चल रहा उसकी है जो औकात है।

इसलिए सुनाता हूँ तुझे कहानी मैं शिकस्त की,
और सुनता रह तू बार बार,
इन ही कहानियों से बनेगा तेरे स्वर्ग का द्वार।

पुष्पेंद्र पाण्डे 'शजर'

ख़ुदा तेरा ही सहारा है

हर तरफ़ ख़ौफ़ का नज़ारा है,
मौत किस को यहाँ गवारा है॥

बेबसी की शिकार है दुनिया,
या ख़ुदा तेरा ही सहारा है॥

कुछ ना लाए, ना लेके जाओगे,
सब यहीं का यहीं का सारा है॥

यहां जो भी है सब उसी का है ,
ना कुछ तुम्हारा ना कुछ हमारा है॥

नाव मझधार में फंसी है अब तो,
दूर हम से बहुत किनारा है॥

इस मुसीबत में चल गया ये पता,
कितना आपस में भाई चारा है॥

अब तलक थे ग़रीब बेचारे,
अब तो धनवान भी बेचारा है॥

अब गुनाहों से बाज़ आओ "कुंवर",
ये भी क़ुदरत का इक इशारा है॥

के. पी. सिंह 'कुवंर'

जिन्दगी

साथ न रहने से रिश्ते टूटा नहीं करते,
वक्त की धुंध से रिश्ते टूटा नहीं करते,
लोग कहते हैं कि मेरा सपना टूट गया
टूटी नींद है, सपने टूटा नहीं करते।

वक्त की हो धूप या हो तेज़ आंधियाँ,
कुछ कदमों के निशां कभी नहीं खोते।
जिन्हें याद करके मुस्कुरा दें ये आंखें,
वो लोग दूर होकर भी दूर नहीं होते।

जिन्दगी संवारने को तो जिन्दगी पड़ी है,
पर वो लम्हा संवार लो जहां जिन्दगी खड़ी है।

अजय कुमार श्रीवास्तव

इंसां

सिर्फ हमको पता नहीं होता,
कोई इतना बुरा नहीं होता।

प्यार करता है टूट कर मुझसे,
वरना इतना खफा नहीं होता।

सरहदें लाख खींच दे दुनिया,
कोई दिल से जुदा नहीं होता।

मंज़िलें और पास लगती हैं,
जब कोई रास्ता नहीं होता।

मेरा अपना ही कोई है वरना,
दूर जा कर खड़ा नहीं होता।

यूं ही दिल टूट टूट जाते हैं,
और शिकवा गिला नहीं होता।

ज़िद है मेरी भी देखता हूँ मैं,
दर्द कब तक दवा नहीं होता।

इतनी उम्मीद पालना भी मत,
कोई इंसां ख़ुदा नहीं होता।

तेरी चाहत को जानते कैसे,
इतना गर फ़ासला नहीं होता।

ढूंढते उम्र भर कहाँ खुद को,
तुमसे गर वास्ता नहीं होता।

के. पी. सिंह 'कुवंर'

"राष्ट्रभाषा किसी व्यक्ति या प्रान्त की सम्पत्ति नहीं है, इस पर सारे देश का अधिकार है।"

- सरदार वल्लभ भाई पटेल

डायनासोर एवं मनुष्य

मध्यजीवी कल्प के प्रारंभ में उद्भवित,
कल्प पर्यन्त पृथ्वी पर निरंकुश राज करने वाली
"डायनासोर जाति",
जिसे प्राप्त था पृथ्वी की विशालतम व
शक्तिशाली जाति होने का दर्जा भी।
कल्प के अंत में,
विलुप्त हो गई यह जाति,
और आज कोई नहीं जानता
इनके समूल विनाश का कारण तक।
कुछ ज्वालामुखी, कुछ ताप परिवर्तन
तो कुछ उल्कापिंड को उत्तरदाई ठहराते हैं।

शक्ति अधिक दिनों तक,
बिना मद के तो रह नहीं सकती,
इन्होंने ने भी शक्ति के मद में चूर हो,
तहस - नहस कर दिए जंगल,
निगल गए कई अन्य पशुओं को।
यहां तक कि नोचने खाने लगे एक दूसरे को भी
सोचनीय है कि,
हम मनुष्य भी कुछ भिन्न नहीं कर रहे,
निगलते जा रहे हैं जंगलों, पहाड़ों, समुद्रों,नदियों व
अनेक जीवों को अपनी शक्ति के मद में चूर होकर,
एक दूसरे को नोचने में भी
कोई कसर नहीं छोड़ी हमने।

डर यह है कि,
कुछ लाख वर्षों पश्चात,
शोधार्थी कहीं यह न लिखे कि
"मानव जाति अत्यंत उन्नत तो थी
परंतु अपनी प्रकृति के साथ
नहीं स्थापित कर सकी समन्वय व
इस जाति के पूर्णतया विलुप्त होने का
निश्चित कारण अभी ज्ञात नहीं हो सका है।"

प्रिया दीक्षित

अनन्त की ओर

पृथ्वी, आत्मा और प्रेम, अनंत के पार,
सागर की गहराई में, आत्मा जाये हार।
जैसे लहरें दिल पर, आकर टकरायें बार-बार,
धारा की यादें, वहीं बसाएँ प्यार ॥

नदियों का संगम, भूमि और सागर का मेल,
जैसे आत्मा, जीवन के सफर में खेल।
प्रेम का मधुर संगीत, धड़कनों का मिलन,
अनंत यात्रा, हृदय का सदाबहार आगमन॥

लहरें प्रस्थान करें, फिर से जुड़े वहाँ,
आत्मा की दृष्टि में, भूमि और सागर का जहां।
प्रेम सदाबहार, सब कुछ समाहित हो,
सागर की गहराई में, आत्मा का रहस्य हो ॥

हर लहर की तरह, प्रेम फिर लौट आये,
दिल की गहराई से, आत्मा भी बंध जाये।
प्रकृति की गोद में, सब कुछ समाये,
अनंत से परे, प्रेम का रहस्य छाये॥

नाज़िम देवरी

''राष्ट्र की एकता को यदि बनाकर रखा जा सकता है तो
उसका माध्यम हिंदी ही हो सकती है।

- सुब्रह्मण्यम भारती

पीएच. डी.

पीएच. डी. में आके हम कुछ इस कदर उलझते गये,
बिना कोई मंजिल के ही हम रास्तो पर चलते गये।

सोचा कभी ना कभी तो मंजिल मिलेगी जरूर,
होगा हमें भी एक दिन अपने कामों पे गुरुर।
ना मंजिल मिली ना रास्ते ना पूरे हुए सपने कभी,
दिन रात काम के चक्कर में छूटते गये अपने सभी।
अलग होके अपनों से हम अपने में ही ढलते गये,
पीएच. डी. में आके हम कुछ इस कदर उलझते गये।

हर वक़्त अब तो हो रही थी खुद से ही बातें मेरी,
नये-नये विचारों से अब तो घिरने लगी थी रातें मेरी।
सुबह उठते ही अब आँखों में हर-रोज एक जुनून था,
छपा था जब पहला पर्चा दिल में इस कदर सुकून था।
करेंगे अब कुछ और नया ऐसे ख़्वाब दिल में पलते गये,
पीएच. डी. में आके हम कुछ इस कदर उलझते गये।

जूझते लड़ते हालातों से फिर पीएच.डी जमा हो गयी,
पाँच सालों की मेहनत एक मोटी किताब बनके रह गयी।
पीएच. डी. की डिग्री ने डाक्टर मुझको को बना दिया,
संघर्षों से लड़ने वाला मास्टर मुझको को बना दिया।
होके मजबूत इन्हीं ठोकरों से हम जिंदगी में आगे बढ़ते गये,
पीएच. डी. में आके हम कुछ इस कदर उलझते गये।

बृजेश यादव

''संसार में यदि कोई सर्वांगपूर्ण अक्षर हैं तो देवनागरी के हैं।"

- आइजक पिटमैन

प्रो. बीरबल साहनी

प्रो. बीरबल साहनी, बीरबल साहनी पुराविज्ञान संस्थान, लखनऊ को मैं सहृदय से नमन करता हूँ। यहाँ मैं धन बहादुर कुँवर, अपनी छोटी सूझ-बूझ, ज्ञान और क्षमतानुसार प्रो. बीरबल साहनी एवं बीरबल साहनी पुरविज्ञान के विषय में लघु लेख कविता के माध्यम से प्रस्तुत कर रहा हूँ।

महान ज्ञाता आपने उच्च शिक्षा विदेशों से किया था।
सांस्कृतिक धरोहर भारत में कुछ करने का संकल्प लिया था॥

सांस्कृतिक धरोहर भारत को सहजता से अपनाया था।
विदेशों में वर्चस्व होते हुए भी, लखनऊ में निवास स्थान बसाया था॥

सूक्ष्म पादप जीवाश्मविज्ञान शोध में रुझान था।
सरल सहजता, मधुर वाणी उनका स्वभाव था॥

अपने ज्ञान बुद्धि से संस्थान बनाने की योजना को रचाया था।
3 अप्रैल 1949 को संस्थान की आधार शिला उनके जीवन काल में रखवाया था ॥

यह धरोहर बदलते पीढ़ी के लोगों को सदा पालता रहेगी।
महिमा इसकी युगों युग चलता रहेगी॥

साहनी धरोहर हिंदुस्तान के विज्ञान प्रगति का साक्षी है ।
जो कृति आप छोड़ गए, सदा सदा के लिए अविनाशी है॥

विश्व में एक अपने ढंग का शोध संस्था की नींव रखवाया।
तीक्ष्ण बुद्धि, दृढ़ संकल्प से इसे पुरावनस्पति विज्ञान नगरी बनवाया॥

बरकरार राखे इस धरोहर को सदा अमर रत्नों (जीवाश्मों) से सजाकर।
नमन करते हम इनकी जन्म तिथि में फूल माला चढ़ाकर॥

आने वाली पीढ़ी के लोगों को इस धरोहर से मिलाना है।
जो भी यहाँ है इसे चिरकाल तक संजोकर सजाना है॥

धन बहादुर कुँवर

''स्वदेशाभिमान को स्थिर रखने के लिए हमें हिंदी सीखना आवश्यक है।'' - महात्मा गांधी

दिसंबर और जनवरी का रिश्ता

कितना अजीब है ना,
दिसंबर और जनवरी का रिश्ता?
जैसे पुरानी यादों और नए वादों का किस्सा...

दोनों काफ़ी नाज़ुक हैं
दोनो में गहराई है,
दोनों वक़्त के राही हैं,
दोनों ने ठोकर खायी है...

यूँ तो दोनों का है
वही चेहरा-वही रंग,
उतनी ही तारीखें और
उतनी ही ठंड...
पर पहचान अलग है दोनों की
अलग है अंदाज़ और
अलग हैं ढंग...

एक अन्त है,
एक शुरुआत
जैसे रात से सुबह,
और सुबह से रात...

एक में याद है
दूसरे में आस,
एक को है तजुर्बा,
दूसरे को विश्वास...

दोनों जुड़े हुए हैं ऐसे
धागे के दो छोर के जैसे,
पर देखो दूर रहकर भी
साथ निभाते हैं कैसे...

जो दिसंबर छोड़ के जाता है
उसे जनवरी अपनाता है,
और जो जनवरी के वादे हैं
उन्हें दिसम्बर निभाता है...

कैसे जनवरी से
दिसम्बर के सफर में
ग्यारह महीने लग जाते हैं...
लेकिन दिसम्बर से जनवरी बस
एक पल में पहुंच जाते हैं!!

जब ये दूर जाते हैं
तो हाल बदल देते हैं,
और जब पास आते हैं
तो साल बदल देते हैं...

देखने में ये साल के महज़
दो महीने ही तो लगते हैं,
लेकिन...
सब कुछ बिखेरने और समेटने
का वो कायदा भी रखते हैं...

दोनों ने मिलकर ही तो
बाकी महीनों को बांध रखा है,.
अपनी जुदाई को
दुनिया के लिए
एक त्यौहार बना रखा है.. !

साधना विश्वकर्मा

राजभाषा हिन्दी कार्यान्वयन की गतिविधियाँ

गृह मंत्रालय, भारत के राजभाषा विभाग की नीतियों और दिशा-निर्देशों का पालन करने का बीरबल साहनी पुराविज्ञान संस्थान निरंतर प्रयास करता रहा है। संस्थान में राजभाषा हिंदी के कार्यान्वयन का निरीक्षण बीएसआईपी की राजभाषा कार्यान्वयन समिति द्वारा किया जाता है। समिति हिंदी के कार्यान्वयन में प्रगतिशील वृद्धि के लिए निगरानी और योजना बनाती है। समिति नियमित रूप से आयोजित अपनी त्रैमासिक बैठकों के माध्यम से हिंदी कार्यान्वयन में प्रगति का संज्ञान लेती है। राजभाषा के रूप में हिन्दी के उपयोग और कार्यालयों में परस्परिक संचार को बढ़ावा देने के लिए समिति हिंदी पखवाड़ा, बीएसआईपी में त्रैमासिक तकनीकी एवं विज्ञान व्याख्यान, हिंदी में प्रसार गतिविधियां का आयोजन करती है। साथ ही विभिन्न संस्थाओं/मंचों में क्षेत्रीय कार्यों/कार्यशालाओं/प्रदर्शनियों/उन्नत गतिविधियाँ तथा उनके दौरान चर्चा में राजभाषा हिन्दी के प्रयोग को प्रोत्साहित करती है। संस्थान के वैज्ञानिकों, तकनीकी अधिकारियों तथा अन्य कर्मचारियों ने भी वैज्ञानिक, तकनीकी तथा प्रशासनिक स्तर पर हिंदी में संचार को बढ़ावा देने में सक्रिय भूमिका निभाई है। इसके अतिरिक्त संस्थान अपनी त्रैमासिक और अर्ध-वार्षिक रिपोर्ट नई दिल्ली के विज्ञान और प्रौद्योगिकी विभाग को नियमित रूप से प्रस्तुत करता है। संस्थान ने भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ में आयोजित नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति (TOLIC-3) की अर्ध-वार्षिक बैठकों में भी भाग लेता आया है।

बीरबल साहनी पुराविज्ञान संस्थान की राजभाषा कार्यान्वयन समिति

वार्षिक हिंदी ई-पत्रिका " पुराविज्ञान स्मारिका"

हिंदी भाषा में अधिक से अधिक लोकप्रिय विज्ञान एवं सामान्य लेख उपलब्ध कराने के प्रयास के तहत इस वर्ष हमने वार्षिक हिंदी ई-पत्रिका "पुराविज्ञान स्मारिका" का दूसरा अंक प्रकाशित किया। इस पत्रिका में विभिन्न संगठनों के लेखकों तथा संस्थान के कर्मचारियों ने लेख प्रस्तुत किए हैं। पत्रिका के लेख जानकारी पूर्ण हैं और पाठकों द्वारा खूब सराहे जाते हैं।

हिंदी पखवाड़ा

गत वर्ष राजभाषा कार्यान्वयन समिति के बैनर तले संस्थान ने 14-29 सितंबर, 2023 तक हिंदी पखवाड़ा मनाया। इसकी शुरुआत 14 सितंबर 2023 को लखनऊ विश्वविद्यालय के प्रोफेसर ध्रुव सेन सिंह ने अपने उद्घाटन भाषण के साथ की। इस पखवाड़े के दौरान, वाद-विवाद, हिंदी टाइपिंग, हिंदी अनुवाद, हिंदी नोटिंग, इमला (केवल एमटीएस के लिए), निबंध, पोस्टर, अंत्याक्षरी जैसी प्रतियोगिताओं और कवि सम्मेलन का आयोजन किया गया। हिंदी पखवाड़ा 2023 के प्रतियोगिताओं का परिणाम इस प्रकार हैं:

प्रतियोगिता	**प्रतियोगियों की संख्या**	**प्रथम**	**द्वितीय**	**तृतीय**	**प्रोत्साहन-प्रथम**	**प्रोत्साहन-द्वितीय**
हिन्दी टंकण	6	श्रीमती सुधा कुरील	श्री अभय शुक्ला	कु. वर्षा शाह	श्री शक्ति वर्मा	श्री पुणेश्वर प्रकाश मिश्रा
हिन्दी टिप्पण	11	श्री राहुल गुप्ता	कु. वर्षा शाह श्रीमती संध्या मिश्रा	श्रीमती सुधा कुरील	श्री अभय शुक्ला	श्री शिरीष वर्मा
हिन्दी अनुवाद	11	श्रीमती संध्या मिश्रा	श्री अभिषेक सचान	कु. वर्षा शाह	श्री शिरीष वर्मा	
वाद-विवाद	14	कु.स्नेह श्री प्रशांत मोहन त्रिवेदी	कु. वर्तिका सिंह	श्री सर्वेन्द्र प्रताप सिंह	श्री सदानंद पाठक	
इमला (एम.टी.एस. कर्मचारियों हेतु)	8	श्रीमती भावना अवस्थी	श्री पुनीत पाण्डे	श्री शिवम यादव	श्रीमती संध्या सिंह	श्री आकिल सिद्दकी
निबंध	13	श्रीमती संध्या सिंह	श्री आनंद राजोरिया	कु. रुचिता यादव श्री ब्रजेश कुमार यादव	श्री सर्वेन्द्र प्रताप सिंह	
पोस्टर	15	श्री आनंद राजोरिया	श्री देवेश्वर प्रकाश मिश्रा	कु. रुचिता यादव	कु. आयुषी मिश्रा	डॉ. योगेश पाल सिंह
अंत्याक्षरी	18	श्रीमती संध्या मिश्रा श्रीमती संध्या सिंह कु. दीक्षा	श्री अरविन्द तिवारी श्री ब्रजेश कुमार यादव श्री शिरीष वर्मा	कु. वर्तिका सिंह कु. पुजारिणी समल श्रीमती पारुल सक्सेना		

हिंदी पखवाड़ा-2023 के अंतर्गत विभिन्न प्रतियोगिताओं के दौरान लिए गए छायाचित्र

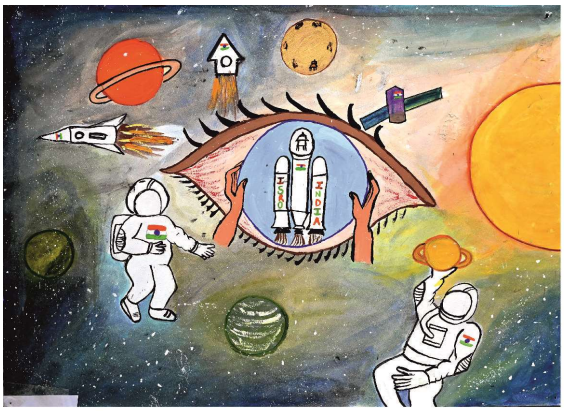

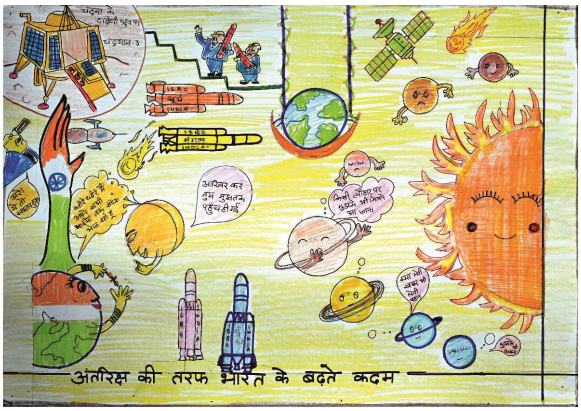

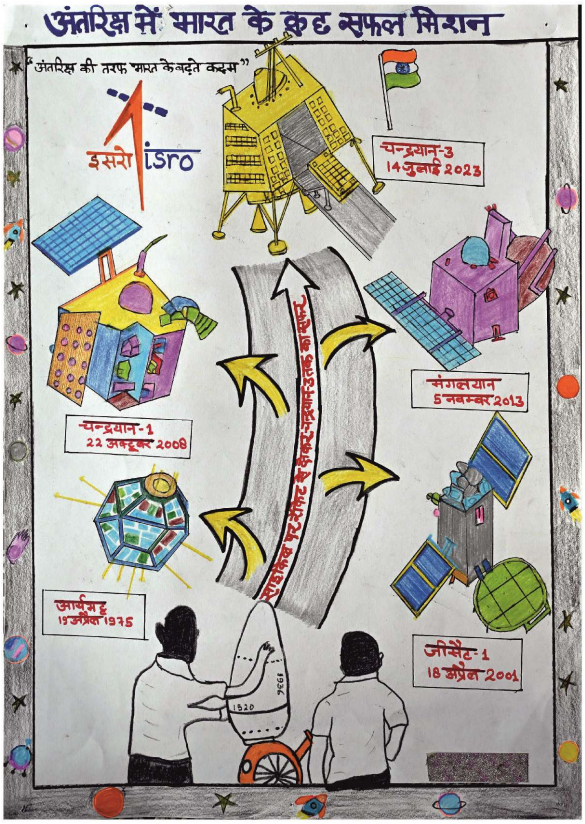

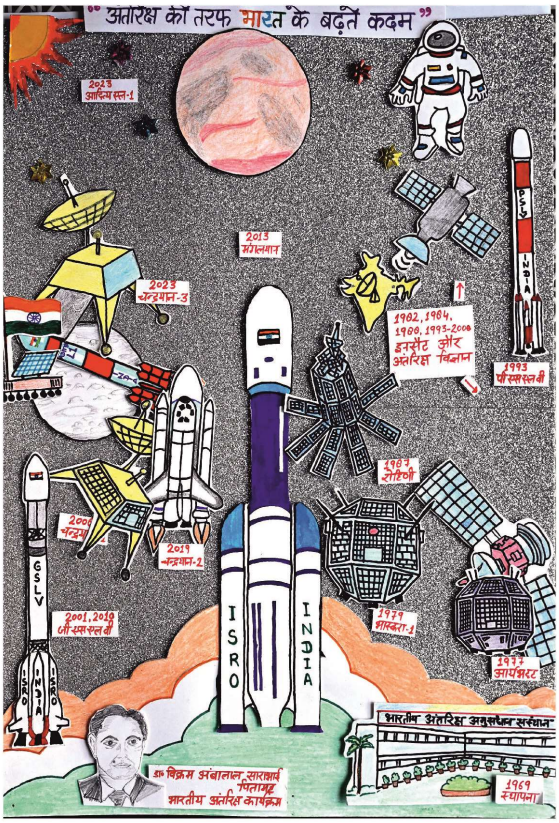

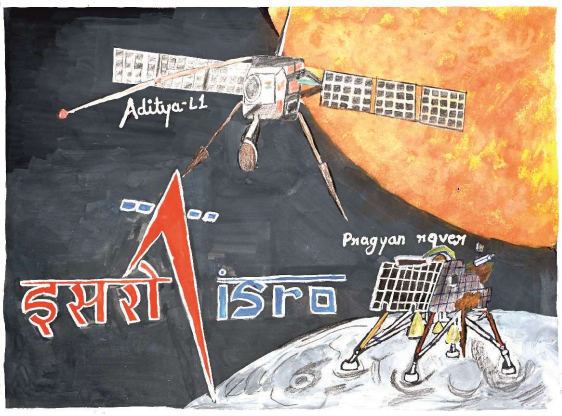

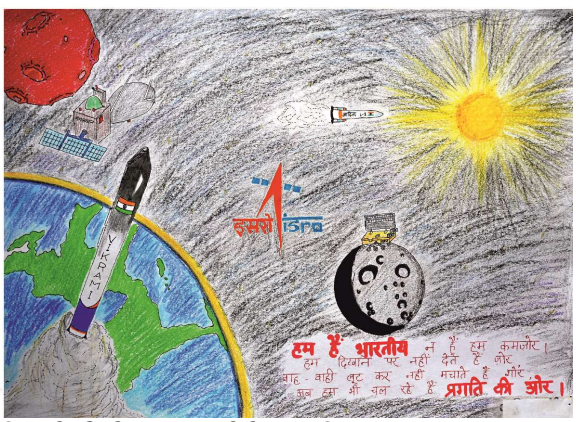

हिंदी पखवाड़ा-2023 के अंतर्गत पोस्टर प्रतियोगिताओं की पोस्टर प्रविष्टियों के छायाचित्र

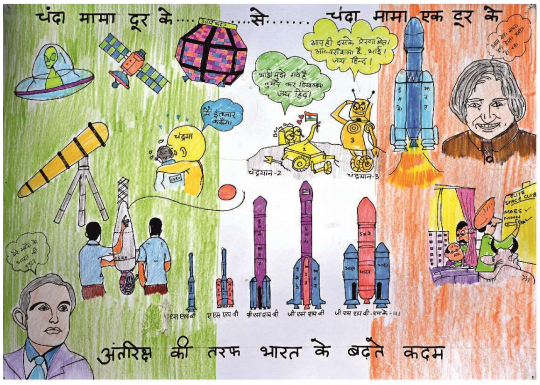

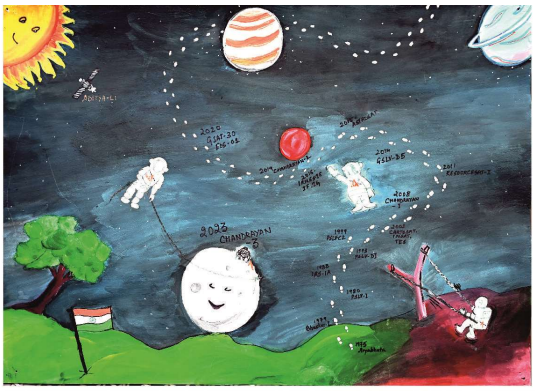

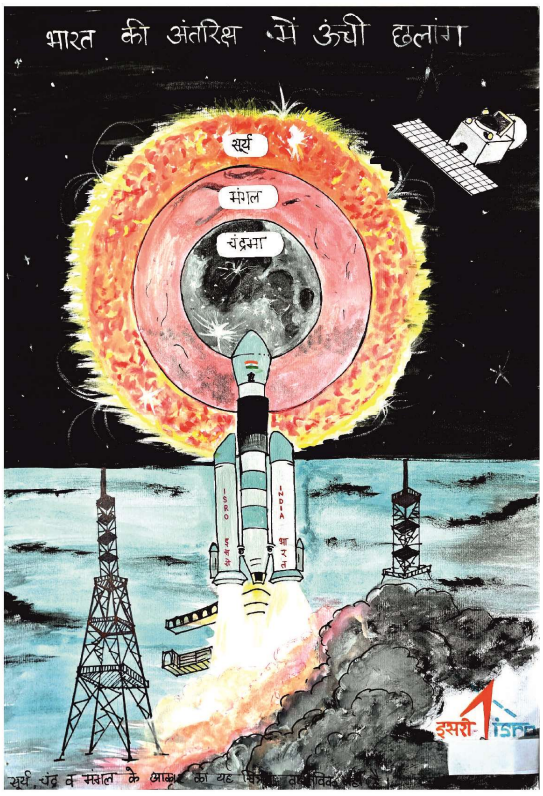

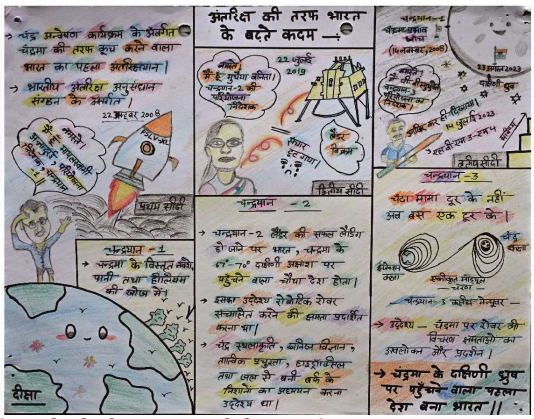

हिंदी पखवाड़ा-2023 के अंतर्गत पोस्टर प्रतियोगिताओं की पोस्टर प्रविष्टियों के छायाचित्र

हिंदी त्रैमासिक कार्यशालाएँ:

1. "सेनोज़ोइक परागाणुविज्ञान: परिचय एवं अनुप्रयोग" विषय पर 19 जून, 2023 को डॉ. पूनम वेमा, विज्ञानी 'ई', बीएसआईपी द्वारा
2. "जलवायु परिवर्तन: प्राकृतिक या मानवजनित" विषय पर 14 सितंबर, 2024 को लखनऊ विश्वविद्यालय, लखनऊ के प्रोफेसर ध्रुव सेन सिंह द्वारा
3. "राजभाषा प्रबंधन" विषय पर 27 दिसंबर, 2023 को श्री चंद्र मोहन तिवारी, सेवानिवृत्त हिंदी अधिकारी, सीएसआईआर-आईआईटीआर, लखनऊ द्वारा
4. "जलवायु परिवर्तन अनुसंधान में वृक्ष-वलय का योगदान" विषय पर 20 मार्च, 2024 को डॉ. एस के शाह, विज्ञानी 'ई', बीएसआईपी द्वारा

बीएसआईपी में विभिन्न हिंदी त्रैमासिक कार्यशालाओं के दौरान के छायाचित्र

राजभाषा कार्यान्वयन के अन्य आयाम

संस्थान की द्विभाषी वेबसाइट इंटरनेट दर्शकों के लिए उपलब्ध है। संस्थान के सभी नेट सुविधा वाले कंप्यूटरों में बहुभाषी सॉफ्टवेयर की सुविधा भी प्रदान की गई है। सभी आवश्यक प्रपत्र द्विभाषी प्रारूप में उपलब्ध कराए गए है। बीएसआईपी पुस्तकालय में हिंदी पुस्तकों का एक सुव्यवस्थित अनुभाग उपलब्ध है, जो प्रत्येक वर्ष नई हिंदी पुस्तकों के जुड़ने से समृद्ध होता है। इसके अतिरिक्त, संस्थान की वार्षिक रिपोर्ट 2022-23 हिंदी में भी प्रकाशित की गई है। संस्थान की अंतर्राष्ट्रीय पत्रिका 'जर्नल ऑफ पैलियोसाइंसेज' में सभी शोध पत्रों के सार हिंदी में प्रकाशित किए जाते हैं। राजभाषा कार्यान्वयन समिति की संयोजक डॉ. पूनम वर्मा को डीआरडीओ, नई दिल्ली द्वारा चेन्नई में आयोजित एक सम्मेलन (राजभाषा) में भाग लेने के लिए प्रतिनियुक्त किया गया। संस्थान की राजभाषा कार्यान्वयन समिति की बैठक वर्ष की प्रत्येक तिमाही में आयोजित की गई, जिसमें विभिन्न अनुभागों में राजभाषा के प्रयोग की प्रगति पर चर्चा एवं निगरानी की गई। वर्ष 2023 में, बीएसआईपी ने राजभाषा अधिनियम 1963 की धारा 3(3) के पालन हेतु पूर्ण समर्पण के साथ कड़ी मेहनत की।

माननीय संसदीय राजभाषा समिति द्वारा भौतिक निरीक्षण

संसदीय राजभाषा समिति ने 22 जून 2023 लखनऊ में बीरबल साहनी पुराविज्ञान संस्थान के साथ निरीक्षण बैठक की| इस दौरन समिति ने मंत्रालय एवं विभाग के वरिष्ठ अधिकारियों की उपस्थिति में संस्थान में हो रहे राज्यभाषा हिंदी के कार्यों का अवलोकन किया|

गृह मंत्रालय भारत सरकार द्वारा संस्थान के राजभाषा कार्यान्वयन का निरीक्षण

भारत सरकार के गृह मंत्रालय के राजभाषा विभाग की राजभाषा समिति (हिंदी) ने बीएसआईपी के आधिकारिक कामकाज में हिंदी भाषा के प्रयोग को बढ़ावा देने हेतु निर्धारित लक्ष्यों का निरीक्षण करने के लिए 23 नवंबर 2023 को बीएसआईपी का दौरा किया। समिति ने निरीक्षण का कार्य सफलतापूर्वक पूरा किया और बीएसआईपी कर्मचारियों के प्रयासों की सराहना की।

क्षेत्रीय अभियान की झलकियां

हिमाचल प्रदेश के सिरमौर जिले में स्थित निगालीधर सिनक्लाइन और उत्तराखंड के गढ़वाल सिनक्लाइन मे प्रीकैम्ब्रियन समूह के सदस्यों द्वारा क्षेत्रीय भ्रमण – डॉ. वीरू कान्त सिंह एवं सहयोगी सदस्य

(क) डॉ. वीरू कान्त सिंह एवं श्री अभिनव जैन कौड़ियाला क्षेत्र मे गंगा नदी के किनारे फास्फोराइट चट्टानों के नमूने एकत्र करते हुए; (ख) डॉ. योगेश कुमार एवं श्री अभिनव जैन कोटीधीमान क्षेत्र से चर्ट फास्फोराइट के नमूने एकत्र करते हुए; (ग) डॉ. योगेश कुमार एवं डा० वीरू कान्त सिंह कफोता घाटी से चर्ट के नमूने एकत्र करते हुए; (घ) काली सिलिसिफाइड चर्ट की परतें (तीर के निशान द्वारा इंगित); (च) सिरमौर जिले के चाँदनी गाँव के पास ब्लेनी डायमिक्टाइट की चट्टान का चित्र; (छ) ऋषिकेश- सींगताली रोड पर स्थित ब्लेनी डायमिक्टाइट की चट्टानें; (ज) पूर्व कैम्ब्रियन ताल समूह के ट्रेस फ़ौसिल्स का चित्र; (झ) डॉ. योगेश कुमार एवं श्री अभिनव जैन सिरमौर जिले की कफोता घाटी से एडियाकरन क्रोल फारमेशन से चर्ट नौड्युल्स एकत्र करते हुए।

टेथिस हिमालय के भूगर्भीय अध्ययन हेतु भ्रमण के दौरान स्पीति घाटी के छायाचित्र:- डॉ अंजु सक्सेना एवं एवं सहयोगी सदस्य

(क) तरुविहीन पर्वतीय श्रृंखला के मध्य स्थित एक गाँव (ख) वनस्पतियों एवं जीवों के वृहद जीवाश्मों की खोज करते हुए (ग) अवसादी चट्टान से परागकणीय नमूने लेते हुए (घ) स्पीति नदी का विहंगम दृश्य (ड़) सदस्यों की समूह छायाचित्र (च) चूना पत्थर पर रक्षित अमोनाइट्स (छ) अवसादी चट्टान पर रक्षित पेड़-पौधों के जीवाश्म (ज) अवसादी चट्टान पर रक्षित कार्बोनीफेरस समय के पेड़ का तना।

राजस्थान के बीकानेर जिले में स्थित गुरहा लिग्नाइट खदान से पौधों के जीवाश्म एकत्र करने के लिए खदान का दौरा किया गया। इस खदान में पौधों के जीवाश्म बहुतायत है। इस वर्ष यहाँ से लगभग 100 जीवाश्म एकत्र किए हैं जिनमें जीवाश्म पत्तियों, फलों और बीजों के जीवाश्म मुख्य है। इस खदान से प्राप्त पौधों के जीवाश्मों के आधार पर लगभग ~5.5 करोड़ वर्ष पूर्व की वानस्पतिक स्थिति का निर्धारण किया गया और पाया गया कि उस समय सदाबहार से अर्ध-सदाबहार वन के अस्तित्व था जो वर्तमान शुष्क और रेगिस्तानी स्थितियों के विपरीत आर्द्र जलवायु का संकेत देते हैं – डॉ. अनुमेहा शुक्ला, सुश्री काजल चंद्रा, और सुश्री समीक्षा शुक्ला

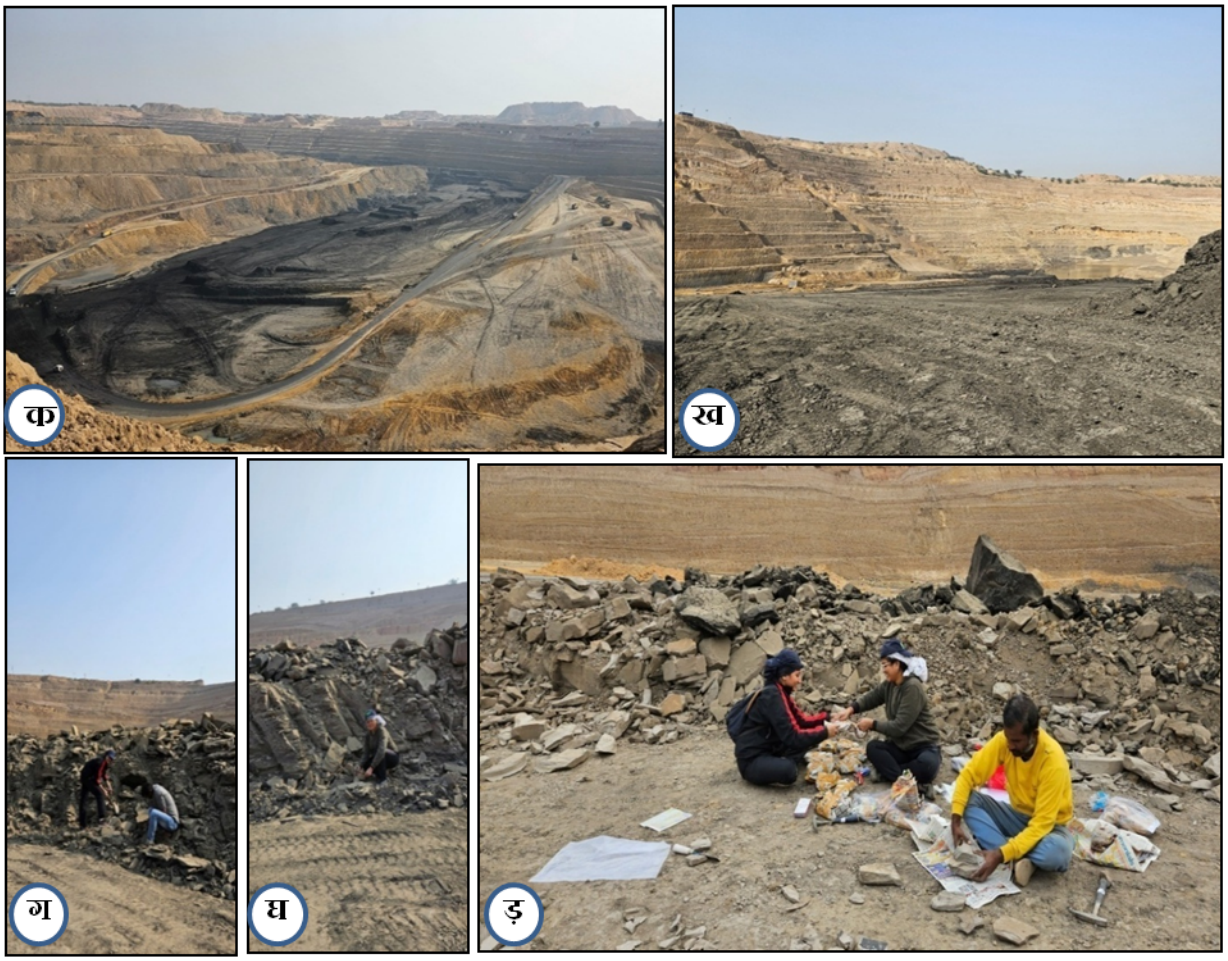

(क और ख) राजस्थान के बीकानेर जिले में स्थित गुरहा लिग्नाइट खदान का विहंगम दृश्य, जिसमें लिग्नाइट, शेल और क्ले की विभिन्न स्तरीकृत परतें दिखाई दे रही हैं; (ग और घ) ग्रे शेल की परतों से पौधों के स्थूलजीवाश्म के निष्कर्षण; (ड़) पौधों के जीवाश्मों की पैकेजिंग।

राजस्थान के बीकानेर जिले में स्थित गुरहा लिग्नाइट खदान से पौधों के जीवाश्म एकत्र करने के लिए खदान का दौरा किया गया। इस खदान में पौधों के जीवाश्म बहुतायत है। इस वर्ष यहाँ से लगभग 100 जीवाश्म एकत्र किए हैं जिनमें जीवाश्म पत्तियों, फलों और बीजों के जीवाश्म मुख्य है। इस खदान से प्राप्त पौधों के जीवाश्मों के आधार पर लगभग ~5.5 करोड़ वर्ष पूर्व की वानस्पतिक स्थिति का निर्धारण किया गया और पाया गया कि उस समय सदाबहार से अर्ध-सदाबहार वन के अस्तित्व था जो वर्तमान शुष्क और रेगिस्तानी स्थितियों के विपरीत आर्द्र जलवायु का संकेत देते हैं – डॉ. अनुमेहा शुक्ला, सुश्री काजल चंद्रा, और सुश्री समीक्षा शुक्ला

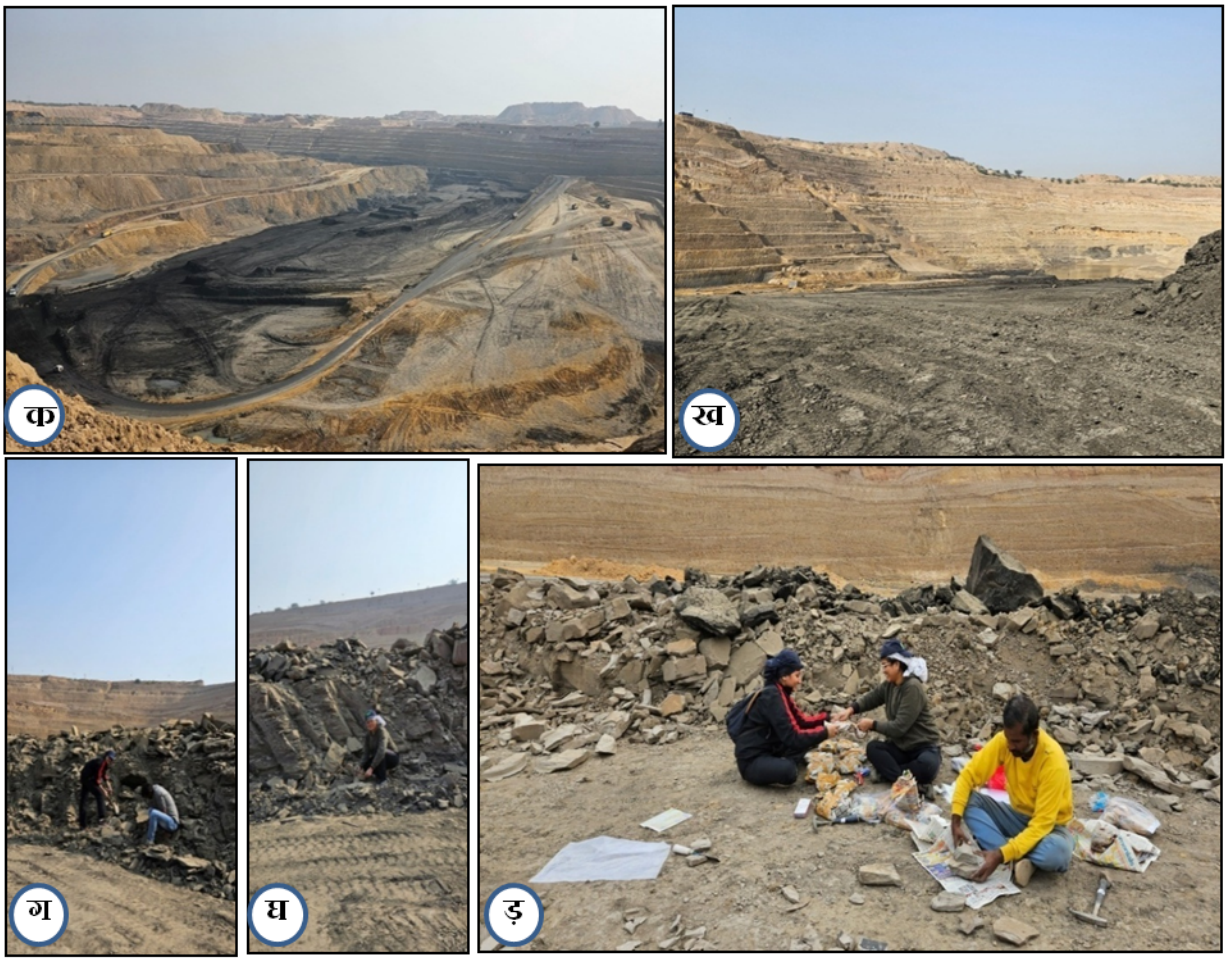

(क और ख) राजस्थान के बीकानेर जिले में स्थित गुरहा लिग्नाइट खदान का विहंगम दृश्य, जिसमें लिग्नाइट, शेल और क्ले की विभिन्न स्तरीकृत परतें दिखाई दे रही हैं; (ग और घ) ग्रे शेल की परतों से पौधों के स्थूलजीवाश्म के निष्कर्षण; (ड़) पौधों के जीवाश्मों की पैकेजिंग।

उत्तर-पूर्व भारत में स्थित मेघालय आज से लगभाग सारे 3 करोड़ वर्ष पूर्व तक एक तटीय क्षेत्र था, ऐसा सुनकर समान्य मनुष्य को बड़ा आश्चर्य होगा परंतु ये एक रोमांचक सत्य है। शुक्ष्मजीवाश्मविज्ञान प्रमाण इस बात को सिद्ध करते हैं की आज का पहाड़ी क्षेत्र मेघालय पुराने समय में एक समुद्री क्षेत्र था। मेघालय के जयंतिया और खासी चूना पत्थर खंड से प्राप्त सूक्ष्म जीवाश्म, जिनमे कोरलाइन शैवाल और बेन्थिक फोरामिनिफेरा प्रमुख हैं इस तथ्य का अद्भुत प्रमाण हैं क्यूंकि ये जीव केवल समुद्री पर्यावरण में पाये जाते हैं। महाद्वीपीय प्रसार ने भले एक समुद्री क्षेत्र को पर्वतीय क्षेत्र में परिवर्तन करने का अनोखा कार्य किया है और ये सच में कुदरत के ढेरो कारनामो में से यह भी एक है इसमें कोई संशय नहीं!–डॉ. सुमन सरकार

(1-3) मेघालय के जयंतिया पहाड़ी समूह के चूना पत्थर खंड; (4) कोरलाइन लाल शैवाल (बाईं ओर का बड़ा नमूना तथा चित्र में अनेक छोटे जीवाश्म) और बेन्थिक फोरामिनिफेर (दाहिनी ओर का बड़ा नमूना); (5) खासी पहाड़ी समूह का चूना पत्थर खंड।

दक्षिण-पूर्वी भारत के पादप जीवाश्मों का उपयोग करके सदाबहार वनों और जलवायु के क्रमिक-विकास के इतिहास को समझने के उद्देश्य से नेवेली की विभिन्न लिग्नाइट खदानों से पत्तियों, लकड़ी, फलों और पराग के जीवाश्म हेतु नमूनों को एकत्रित करने हेतु दौरा किया गया जिसके कुछ छायाचित्र निम्न हैं- डॉ गौरव श्रीवास्तव एवं डॉ पूनम वर्मा सहयोगी सदस्यों के साथ

(क) नेवेली लिग्नाइट खदान का विहंगम दृश्य (ख) कुड्डालोर बलुआ पत्थर (ग) लिग्नाइट चट्टान (घ, ङ) अवसादी चट्टानों से रक्षित पेड़-पौधों के जीवाश्म व परागकणीय नमूने लेते हुए सदस्यों के छायाचित्र।

पुरावनस्पति एवं पुराजलवायु को समझने हेतु ऊपरी असम, उत्तर-पूर्वी भारत में क्षेत्रीय भ्रमण के दौरान तलछटी कोर एवं ट्रेंच द्वारा अवसादी नमूने का एकत्रीकरण– डॉ. स्वाति त्रिपाठी, सुश्री आर्या पांडे एवं सहयोगी सदस्य।

(क) डॉ. स्वाति त्रिपाठी और टीम द्वारा असम की ऊपरी ब्रह्मपुत्र घाटी की तलछटी प्रोफ़ाइल से नमूनाकरण; (ख) तलछटी प्रोफ़ाइल से मिट्टी के नमूने लेते हुए सुश्री आर्या पांडे (शोध छात्रा); (ग) तलछटी प्रोफ़ाइल; (घ) ब्रह्मपुत्र नदी के तट पर टैमरिक्स टैक्सा का प्रभुत्व; (च) ऊपरी असम में ब्रह्मपुत्र नदी; (छ) ऊपरी असम की लुप्तप्राय आर्द्रभूमि में नमूनों का अवलोकन और संग्रह।

वनस्पति डेटा रिकॉर्ड करने हेतु पूर्वी उत्तर प्रदेश के वन क्षेत्रों का दौरे के कुछ छायाचित्र – डॉ. ज्योति श्रीवास्तव, डॉ. अंजलि त्रिवेदी, सुश्री पूजा नितिन सराफ और मोहम्मद इकराम

मध्य भारत के मुख्य मानसून क्षेत्र छत्तीसगढ़ के सरगुजा जिले के जंगलों से वर्तमान समय के पराग ऐनलॉग हेतु मॉस पॉल्स्टर्स का एकत्रीकरण एवं पुरापारिस्थिकी पूर्णनिर्माण हेतु तलछटी खंड के नमूनों का संग्रहण– डॉ. फिरोज कमर एवं सहयोगी सदस्य।

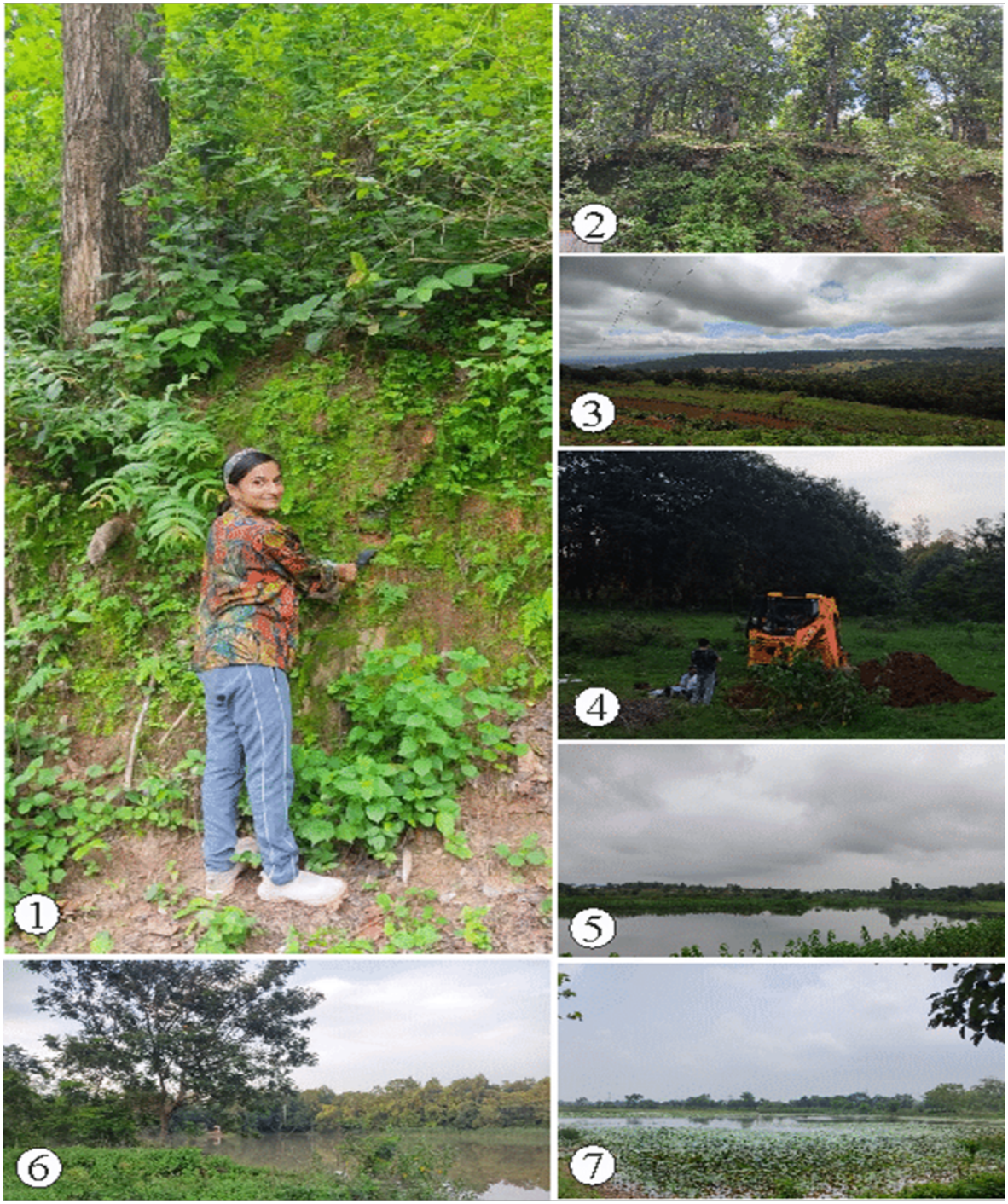

उत्तराखंड के कुमाऊं क्षेत्र से पुराजलवायु अध्ययन के लिए वृक्षवलय के नमूने एकत्रित करते हुए–डॉ के जी मिश्र और उनके सहयोगी

(क) कुमाऊँ क्षेत्र में देवदार के घने जंगल, (ख)देवदार वृक्ष मे इन्क्रीमेंट बोरर की सहायता से कोरिंग करते हुए, (ग) अधिक नमी होने के कारण कोरिंग करते समय वृक्ष से पानी निकलने का एक दृश्य, (घ) रोडोडेंड्रोन के वृक्ष से सैंपल निकालने का प्रयास करते हुए इन्क्रीमेंट बोरर का टूट जाना वृक्ष की कठोरता को दर्शाता है, (ङ) देवदार वृक्ष की मोटी छाल पुराने वृक्ष की पहचान को दर्शाती है, (च) एक्सट्रैक्टर स्प्रून की मदद से सैंपल निकालते हुए, (छ) फील्ड डायरी में नमूनों की संख्या, वृक्ष की बाहरी बनावट, मिटटी/चट्टान का प्रकार, पहाड़ की ढलान, चोट के निशान आदि की जानकारी अंकित करते हुए, (ज) फील्ड में नमूने एकत्रित करने के दौरान इन्क्रीमेंट कोर का आकलन करते हुए, (झ) नमूनों को सुरक्षित रखने के लिए न्यूज़ पेपर में लपेटते हुए, (ञ) जंगल की आग से देवदार वृक्ष में जले हुए निशान को दिखाते वैज्ञानिक

जनसंपर्क एवं अन्य उन्नत गतिविधियाँ

अंतर्राष्ट्रीय महिला दिवस का आयोजन

बीरबल साहनी पुराविज्ञान संस्थान (बीएसआईपी) ने अपने परिसर में "प्रेरणा समावेशन (इंस्पाइर इंक्लूजन)" थीम के साथ 8 मार्च 2024 को अंतर्राष्ट्रीय महिला दिवस का आयोजन किया। इस कार्यक्रम का मुख्य उद्देश्य था- महिलाओं की सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक और राजनीतिक उपलब्धियों को मान्यता देना तथा साथ ही, जीवन के सभी पहलुओं में लैंगिक समानता और महिलाओं का हित सुनिश्चित करना, जो समृद्ध अर्थव्यवस्थाओं और स्वस्थ भूमंडल के निर्माण हेतु महत्वपूर्ण है। इस अवसर पर मुख्य अतिथि के रूप में श्रीमती प्राची गंगवार, डीआईजी वन, एमओईएफसीसी, लखनऊ तथा विशिष्ट अतिथि के रूप में श्रीमती अंकिता सिंह चौहान, राज्य कर अधिकारी, जीएसटी डिवीजन लखनऊ ने कार्यक्रम की शोभा बढ़ाई। श्रीमती विनीता वर्मा, पूर्व प्रधान और स्वयं सहायता समूह कि सदस्य, ग्राम नगवामऊकला, बख्शी का तालाब और सुश्री सरला सचान, संवाददाता, सखी बैंक ऑफ बड़ौदा जैसी दो उत्कृष्ट गुमनाम महिलाओं को निदेशक, बीएसआईपी द्वारा सम्मानित किया गया। संस्थान ने अपने-अपने कर्तव्यों में निरंतर प्रयासों के लिए स्वच्छता टीम से श्रीमती केसर जहां और श्रीमती नीतू और सुरक्षा टीम से सुश्री हर्षिता शुक्ला को भी सम्मानित किया। कार्यक्रम में बीएसआईपी महिला वैज्ञानिकों के संघर्ष और सफलता की कहानियों पर चर्चा की गई। वैज्ञानिकों, तकनीकी और प्रशासनिक समेत बीएसआईपी के सभी कर्मचारियों, शोधार्थियों ने कार्यक्रम में सक्रिय रूप से भाग लिया और महिलाओं के खिलाफ सभी प्रकार की हिंसा और भेदभाव के उन्मूलन के बारे में जागरूकता बढ़ाने हेतु एक-दूसरे को प्रेरित किया।

स्वच्छता अभियान

स्वच्छता कार्य योजना के अंतर्गत 1-15 मई, 2023 तक बीरबल साहनी पुराविज्ञान संस्थान (बीएसआईपी) परिसर में स्वच्छता अभियान चलाया गया। इस दौरान प्रयोगशालाओं/शौचालय की निगरानी और सफाई की गई तथा संस्थान परिसर में वृक्षारोपण किया गया। 1 मई, 2023 को बीएसआईपी के कर्मचारियों ने स्वच्छ भारत अभियान के तहत स्वच्छता शपथ ली, जिसमें स्वच्छता और स्वच्छता के प्रति अपनी प्रतिबद्धता की पुष्टि की गई। इसके बाद, 10 मई, 2023 को बीएसआईपी ने जन भागीदारी और स्वच्छ भारत अभियान की थीम के तहत परिसर के बगीचे में पौधारोपण अभियान का आयोजन किया। इस पहल का उद्देश्य पर्यावरण संरक्षण के लिए दूसरों को प्रेरित करना और जलवायु परिवर्तन के खिलाफ लड़ाई में योगदान देना है। इसके अतिरिक्त, स्वच्छता कार्य योजना के हिस्से के रूप में, सभी के लिए स्वच्छ जल की पहुँच सुनिश्चित करने के लिए बीएसआईपी में विभिन्न प्रयोगशालाओं और इकाइयों में जल गुणवत्ता परीक्षण किया गया। स्वच्छता पखवाड़ा, 2023 के अंतर्गत दिनांक 2 अक्तूबर को BSIP के प्रांगण में वृक्षारोपण कार्यक्रम का सफलता पूर्वक आयोजन किया गया। "एक तारीख, एक घंटा, एक साथ", बीएसआईपी के सभी सदस्यों ने 1 अक्तूबर, 2023 को हमारे राष्ट्र को स्वच्छ और हरित बनाने के लिए 1:00 घंटे का श्रमदान किया। इसके अलावा बीएसआईपी ने नवम्बर माह में व्यापक स्वच्छता अभियान चलाया, जिसमें स्टाफ सदस्यों ने संस्थान परिसर की विभिन्न प्रयोगशालाओं और अनुभागों की सफाई की तथा उन्हें व्यवस्थित किया।

असम के ऑयल इंडिया लिमिटेड,दुलियाजन में बीएसआईपी की विशेषज्ञता का प्रदर्शन

बीएसआईपी टीम ने मई 2023 के दौरान असम स्थित दुलियाजन में ऑयल इंडिया लिमिटेड के फील्ड मुख्यालय का सफलतापूर्वक दौरा किया, जिसमें सूक्ष्म जीवाश्मविज्ञान क्षेत्र में बीएसआईपी की विशेषज्ञता का प्रदर्शन किया। इस दौरे के बाद बीएसआईपी और ओआईएल, असम के बीच हस्ताक्षरित समझौता ज्ञापन के अंतर्गत प्रभावशाली आगामी परियोजनाओं पर उपयोगी विचार-विमर्श और चर्चाएं हुईं।

जनजातीय जिला किन्नौर, हिमाचल प्रदेश में 'युवा उत्सव 2023-24' में जन-भागीदारी के साथ विश्व पर्यावरण दिवस का आयोजन

डॉ. रणवीर सिंह नेगी ने जून 2023 को विश्व पर्यावरण दिवस के अवसर पर नेहरू युवा केंद्र संगठन (एनवाईकेएस), किन्नौर (युवा मामले और खेल मंत्रालय, भारत सरकार) द्वारा आयोजित जिला स्तरीय युवा उत्सव में भाग लिया। कार्यक्रम का मुख्य उद्देश्य जनभागीदारी को बढ़ावा देना था; यह कार्यक्रम बीरबल साहनी पुराविज्ञान संस्थान (बीएसआईपी) के अंतर्गत भारत सरकार की एक पहल है। किन्नौर की उपायुक्त सुश्री तोरुल एस रवीश ने महोत्सव की अध्यक्षता की, जिसमें जिले के विभिन्न क्षेत्रों से 15 से 28 वर्ष की आयु के लगभग 250 युवाओं ने भाग लिया। सांस्कृतिक कार्यक्रम, वक्तृत्व प्रतियोगिता तथा चित्रकला

प्रतियोगिता ने समारोह को और भी समृद्ध बना दिया। बीएसआईपी द्वारा जीवाश्म तथा अन्य प्रदर्शनों ने स्थानीय लोगों को आकर्षित किया जहां प्राचीन जीवन को समझने और वर्तमान जलवायु की कठिनाइयों के समाधान की तलाश में पुराविज्ञान के महत्व को उजागर करने के लिए संवादात्मक कार्यशालाएँ आयोजित की गईं। एनवाईकेएस के जिला युवा समन्वयक माननीय डीसी किन्नौर, वरिष्ठ माध्यमिक विद्यालय और औद्योगिक प्रशिक्षण संस्थान के प्रधानाचार्यों के साथ-साथ अन्य जिला प्रशासकों के बीचबीएसआईपी स्टॉल पर जीवाश्मएवं अन्य प्रदर्शन आकर्षण का केंद्र रहे।

डिब्रूगढ़ विश्वविद्यालय, असम में बीएसआईपी के वैज्ञानिकों की आउटरीच गतिविधि

डॉ. स्वाति त्रिपाठी, वैज्ञानिक-ई ने डिब्रूगढ़ विश्वविद्यालय, असम में फरवरी, 2024 में 'डॉ. एस.एन. विश्वनाथ छात्रवृत्ति पुरस्कार कार्यक्रम' के दौरान एक आमंत्रित व्याख्यान प्रस्तुत किया। इस अवसर पर डॉ. त्रिपाठी को असम में पुराजलवायु संबंधित शोध कार्यों हेतु अभिनंदन एवं प्रशंसा पत्र प्रदान किया गया।

डॉ. स्वाति त्रिपाठी, वैज्ञानिक-ई और सुश्री आर्या पांडे, वरिष्ठ अनुसंधान अध्येता ने जीवाश्म पौधों के महत्व और पुराजलवायु अनुसंधान में उनके अनुप्रयोगों पर जोर दिया। उन्होंने विश्व आर्द्रभूमि दिवस (2 फरवरी, 2024) के अवसर पर असम के धेमाजी जिले के सरकारी कॉलेज के छात्रों के बीच आर्द्रभूमि के संरक्षण के लिए एक सामान्य जागरूकता कार्यक्रम भी आयोजित किया।

मद्रास विश्वविद्यालय के भूविज्ञान विभाग में बीएसआईपी के वैज्ञानिकों की आउटरीच गतिविधि

विज्ञान दिवस (28 फरवरी 2024) के अवसर पर वैज्ञानिकों और अनुसंधान विद्वानों अर्थात् डॉ. बिस्वजीत ठाकुर, संजय कुमार सिंह गहलौद और आनंद राजोरिया की टीम ने मद्रास विश्वविद्यालय, गुइंडी परिसर, मद्रास का दौरा किया और स्नातकोत्तर प्रथम साल के छात्रों के साथ बातचीत की। भूविज्ञान विभाग के निदेशक, प्रो.एस.एम. हुसैन और डॉ. गांधी और अन्य शोध विद्वान भी इस मौके पर उपस्थित थे।

बीरबल साहनी पुराविज्ञान संस्थान, लखनऊ के विज्ञानियों (डॉ. बिस्वजीत ठाकुर एवं श्री संजय कुमार सिंह गहलौद) एवं शोध छात्र (श्री आनंद राजोरिया) नें राज्य पुरातत्व, तमिलनाडु से चर्चा एवं सहयोग।

भू-विरासत एवं भू-संरक्षण संवर्धन केंद्र (सीपीजीजी-बीएसआईपी) के तत्वधान से जनसंपर्क एवं अन्य उन्नत गतिविधियाँ

भू-विरासत एवं भू-पर्यटन संवर्धन केंद्र (CPGG-BSIP) ने "पृथ्वी एवं जन हेतु भू-विज्ञान नवाचार" थीम के साथ "पृथ्वी विज्ञान सप्ताह 2023" का संचालन एवं आयोजन किया। इस कार्यक्रम का उद्देश्य युवा शोधकर्ताओं एवं आम जनता को पृथ्वी विज्ञान की भूमिका के बारे में जागरूकता बढ़ाने हेतु शामिल करना था। मुख्य अतिथि डॉ. नवीन जुयाल ने "हिमालयी क्षेत्र में भूविज्ञान का महत्व और इसके सामाजिक प्रभाव" विषय पर चित्ताकर्षक व्याख्यान दिया। इस अवसर पर बीएसआईपी के वैज्ञानिकों ने भी विद्यार्थियों को पृथ्वी विज्ञान और जीवाश्मों के बारे में जानकारी देने हेतु व्याख्यान प्रस्तुत किए। पृथ्वी विज्ञान सप्ताह का दूसरा दिन प्रयोगशाला और संग्रहालय भ्रमण के साथ मनाया गया, जिससे विद्यार्थियों को जीवाश्मों की आकर्षक दुनिया को जानने का अनूठा अवसर मिला। तीसरे दिन 'पृथ्वी और समाज' विषय पर भूविज्ञान प्रतियोगिता आयोजित की गई, जिसमें विद्यार्थियों ने उत्साहपूर्वक भाग लिया। समारोह का समापन मुख्य अतिथि डॉ. सुचिता चतुर्वेदी, सदस्य, बाल आयोग, यूपी के संबोधन से हुआ, जिसके पश्चात प्रोफेसर एमजी ठक्कर, निदेशक बीएसआईपी ने अध्यक्षीय भाषण दिया।

भू-विरासत और भू-पर्यटन संवर्धन केंद्र (सीपीजीजी)- बीएसआईपी, लखनऊ टीम के सदस्यों (प्रो. एम जी ठक्कर, निदेशक बीएसआईपी, डॉ. एस. सुरेश कुमार पिल्लई, विज्ञानी-ई और डॉ. शिल्पा पांडे, संयोजक सीपीजीजी और विज्ञानी-ई) ने मंडरो फॉसिल पार्क, झारखंड के साथ गिलामारी, बास्कोबेडो, बास्कोला और तारा जैसे निकटवर्ती स्थल का मई, 2024 में दौरा किया है। इस दौरे में पाया गया कि साहिबगंज में मंडरो जीवाश्म पार्क जीवाश्मों (उदाहरण के लिए, *डैडोक्सिलोन अमामरापेरेंस, डी.मंडरो एन्स, डी. बिंद्रालबुनेंस, और डी. सैंटालेंस*) के सबसे बड़े संग्रहों में से एक है। यहाँ राजमहल ज्वालामुखीय चट्टानों से जुड़े

इंटरट्रैपियन निक्षेपों में जीवाश्मिकृत काष्ठ और पत्तियाँ संरक्षित हैं।

साहिबगंज के डीएफओ (श्री मनीष तिवारी, आईएफएस) के साथ बैठक के दौरान चर्चा हुई कि सीपीजीजी-बीएसआईपी मंडरो फॉसिल पार्क को भू-विरासत पार्क के रूप में प्रस्तावित करने और मंडरो फॉसिल पार्क के आसपास और अधिक साइट की खोज करने में सहायता करेगा, जिसका भूवैज्ञानिक महत्व है। मोती झरना, मंडरो फॉसिल पार्क, साहिबगंज और अन्य संभावित भू-विरासत स्थलों के विकास और वित्तीय सहायता के संबंध में देवघर के सांसद डॉ. निशिकांत दुबे के साथ एक बैठक भी की गई।

ल एक्सप्रेस

साहिबगंज 04

साहिबगंज, सोमवार 13 मई 2024

फॉसिल्स पार्क के विकास की संभावना तलाशेंगे बीएसआईपी के वैज्ञानिक

डीएफओ मनीष तिवारी व भू-वैज्ञानिक डॉ रणजीत सिंह करेंगे सहयोग

जीवाश्म हमारी धरोहर है, इसका संरक्षण और रक्षण करना हमारी नैतिक जिम्मेदारी : प्रो0 ठक्कर

सीपीजीजी की टीम ने किया तमाम जीवाश्म क्षेत्रों का दौरा

दैनिक भास्कर जामताड़ा पुलआउट 14-05-2024

संथाल

मंडरो में पाया जाने वाला फॉसिल्स अद्वितीय व अनमोल : भू वैज्ञानिक

लखनऊ से आई सीपीजीजी की टीम ने किया फॉसिल्स पार्क का दौरा, किया निरीक्षण

कुंए में डूबने से एक व्यक्ति की मौत

बीएसआईपी टीम के सदस्य- प्रोफेसर एम.जी. ठक्कर, निदेशक, बीएसआईपी; डॉ. शिल्पा पांडे, विज्ञानी-ई और संयोजक, सीपीजीजी; डॉ विवेश वी. कपूर, विज्ञानी-डी ने डाइनो फॉसिल पार्क के विकास में वैज्ञानिक योगदान को साझा करने के लिए बीएसआईपी और इकोटूरिज्म बोर्ड, मध्य प्रदेश के बीच हस्ताक्षरित समझौता ज्ञापन के तहत दिसंबर, 2023 के दौरान डाइनो फॉसिल नेशनल पार्क, बाघ धार, मध्य प्रदेश का दौरा किया और स्थानीय ग्रामीणों को जीवाश्म डायनासोर के अंडों, जीवाश्मों और भू-विरासत स्थलों की सुरक्षा और संरक्षण के बारे जागरूकता अभियान भी आयोजित किया। स्थानीय आदिवासी समुदायों के काकड़ भैरव (धार्मिक विश्वास) की अद्भुत संवेदनशील कहानी का खुलासा किया गया है और सीपीजीजी बीएसआईपी टीम ने उनके काकड़ भैरव के पीछे की असली जानकारी यानी विज्ञान साझा किया है।

தகவல் மலர்கள்

20 | 12 | 2023

குலதெய்வமாக மாறிய டைனோசர் முட்டை

. மத்தியப்பிரதேசத்தில் டைனோசர் முட்டையை குலதெய்வமாக பொதுமக்கள் வழிபட்ட சம்பவம் ஆச்சரியத்தை ஏற்படுத்தியுள்ளது.

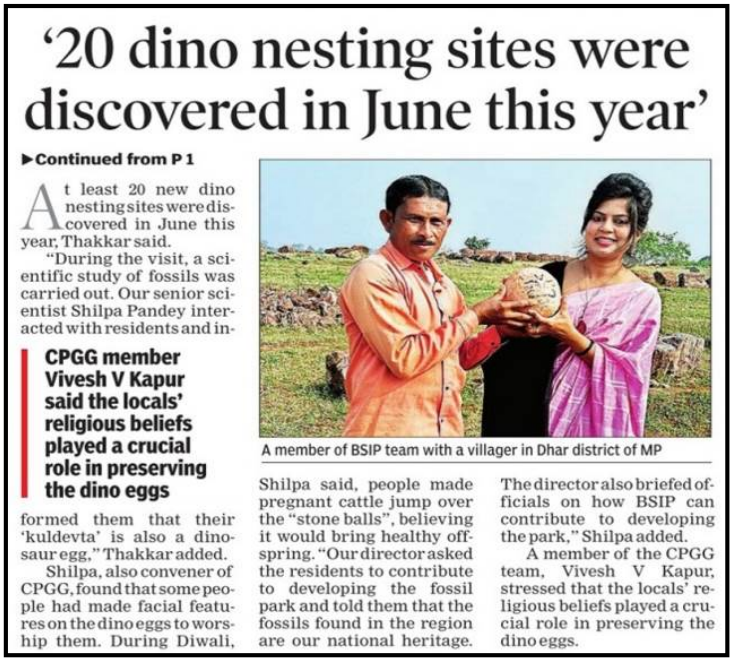

'20 dino nesting sites were discovered in June this year'

▶Continued from P 1

At least 20 new dino nesting sites were discovered in June this year, Thakkar said.

"During the visit, a scientific study of fossils was carried out. Our senior scientist Shilpa Pandey interacted with residents and informed them that their 'kuldevta' is also a dinosaur egg," Thakkar added.

CPGG member Vivesh V Kapur said the locals' religious beliefs played a crucial role in preserving the dino eggs

Shilpa, also convener of CPGG, found that some people had made facial features on the dino eggs to worship them. During Diwali, Shilpa said, people made pregnant cattle jump over the "stone balls", believing it would bring healthy offspring. "Our director asked the residents to contribute to developing the fossil park and told them that the fossils found in the region are our national heritage. The director also briefed officials on how BSIP can contribute to developing the park," Shilpa added.

A member of the CPGG team, Vivesh V Kapur, stressed that the locals' religious beliefs played a crucial role in preserving the dino eggs.

A member of BSIP team with a villager in Dhar district of MP

भारत अंतर्राष्ट्रीय विज्ञान समारोह (आईआईएसएफ) में बीएसआईपी की सहभागिता का प्रदर्शन

बीएसआईपी ने 29 दिसंबर 2023 को भारत अंतर्राष्ट्रीय विज्ञान समारोह के बैनर तले एक दिवसीय विज्ञान उन्नत कार्यक्रम का आयोजन किया, जिसका विषय था "अमृत काल में विज्ञान और प्रौद्योगिकी सार्वजनिक आउटरिच"। समारोह के मुख्य अतिथि यूपीसीएआर के महानिदेशक डॉ. संजय सिंह थे, समारोह के सम्मानित अतिथि के रूप में केएमसी एलयू लखनऊ के कुलपति प्रो. एन बी सिंह, विज्ञान भारती के अध्यक्ष डॉ. अरविंद कुमार और विज्ञान भारती, यूपी के आयोजन सचिव श्रेयंश मंडलोई थे। इस उन्नत कार्यक्रम में लखनऊ जिले के विभिन्न विद्यालयों के छात्रों के साथ-साथ बीएसआईपी के विज्ञानी स्टाफ और प्रशासनिक स्टाफ भी भागीदार रहे। बीएसआईपी ने 17 से 20 जनवरी 2024 तक फरीदाबाद, हरियाणा में आयोजित भारत अंतर्राष्ट्रीय विज्ञान समारोह में भाग लिया और उन्नत विज्ञानी पद्धति और अद्वितीय जीवाश्म संग्रह का प्रदर्शन किया। विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी मंत्री माननीय डॉ. जितेन्द्र सिंह, विज्ञान और प्रौद्योगिकी विभाग के सचिव प्रो. अभय करंदीकर, इसरो के अध्यक्ष डॉ. एस. सोमनाथ तथा अन्य गणमान्य व्यक्तियों के साथ-साथ स्कूलों एवं कॉलेजों के विद्यार्थियों ने इस स्टॉल का अवलोकन किया।

सीबीएसई प्रधानाचार्यों के लिए एक्सपोजर विजिट कार्यक्रम

राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 को ध्यान में रखते हुए, जोकि कक्षा 6 से ही स्कूली बच्चों के लिए व्यावसायिक प्रशिक्षण पर जोर देती है, के अंतर्गत सीबीएसई ने स्कूल प्रमुखों (प्रधानाचार्यों) के उच्च शिक्षा संस्थानों हेतु एक्सपोजर विजिट की पहल की है। एक्सपोजर विजिट का उद्देश्य स्कूल प्रमुखों को विभिन्न मौलिक विषयों में हो रही प्रगतियों से अवगत कराना था। इस प्रकार यह सभी प्रधानाचार्य शिक्षकों और विद्यार्थियों को प्रेरित करेंगे तथा स्कूल परिसर से बाहर की शैक्षिक दुनिया की समझ को बढ़ाने में भी सहायता करेंगे। इससे उन्हें कौशल (व्यावसायिक) शिक्षा को मुख्यधारा की शिक्षा में एकीकृत करने के लिए आवश्यक व्यावहारिक दृष्टिकोण को समझने में भी सहायता मिलेगी और आने वाले समय में विद्यार्थियों हेतु समय-परिवर्तक तरीकों की व्यावहारिक उपयुक्तता हेतु बीएसआईपी जैसे उच्च संस्थानों की मूलभूत सुविधाओं का उपयोग करने में भी मदद मिलेगी।

इस प्रकार, सीबीएसई, नई दिल्ली के मार्गदर्शन में, बीएसआईपी के निदेशक डॉ महेश जी ठक्कर के नेतृत्व में और बीएसआईपी के विज्ञानी-ई डॉ केजी मिश्रा और उनकी समिति के पर्यवेक्षण में, जिसमें विज्ञानी (डॉ पूनम वर्मा, डॉ शिल्पा पांडे, डॉ अनुमेहा शुक्ला, डॉ कमलेश कुमार, डॉ संध्या मिश्रा), तकनीकी कर्मचारी (डॉ संजय सिंह, डॉ निलय गोविंद, डॉ अमृत पाल सिंह चड्ढा) और शोध विद्वान (डॉ योगेश पाल और श्री रवि शंकर मौर्य) शामिल थे, 14-15 दिसंबर 2023 के दौरान उत्तर प्रदेश के सीबीएसई संबद्ध स्कूल प्रधानाचार्यों के लिए दो दिवसीय संस्थान दर्शन कार्यक्रम आयोजित किया गया। इस दौरे में प्रख्यात वैज्ञानिकों द्वारा व्याख्यान/प्रदर्शन तथा प्रयोगशालाओं, प्रशासनिक अनुभागों, पुस्तकालय और संग्रहालय का भ्रमण शामिल था। इन प्रयोगशाला भ्रमण के दौरान, प्रधानाचार्यों को बीएसआईपी में अनुसंधान में उपयोग किए जाने वाले कई प्रॉक्सी का व्यावहारिक अनुभव प्राप्त हुआ। प्रयोगशाला उपकरणों और अन्य परिष्कृत उपकरणों से परिचय कराया गया ताकि ये लीडर्स क्रमशः अपने छात्रों को इस प्रकार के अनुसंधान कार्यक्रम हेतु प्रेरित कर सकें ।

बीएसआईपी संग्रहालय और प्रयोगशाला भ्रमण

समय–समय पर बीएसआईपी ने विभिन्न स्कूलों और कॉलेजों के विद्यार्थियों को संग्रहालय और प्रयोगशालाओं के भ्रमण हेतु आमंत्रित करता है। कार्यक्रम के अंतर्गत बीएसआईपी के वैज्ञानिकों और संग्रहालय कर्मचारियों ने उन्हें जीवाश्मों के महत्व और संस्थान के अनुसंधान के बारे में जानकारी दी तथा युवा मन में पुराविज्ञान विषय के प्रति उत्साह पैदा किया।

बीएसआईपी स्टॉल पर गणमान्य व्यक्ति: गुजरात के माननीय मुख्यमंत्री- श्री भूपेन्द्र भाई पटेल, हरियाणा के माननीय मुख्यमंत्री- श्री मनोहर लाल खट्टर, केंद्रीय राज्य मंत्री- डॉ.जितेंद्र सिंह, सचिव, विज्ञान और प्रौद्योगिकी विभाग- प्रोफेसर अभय करंदीकर और सचिव, अंतरिक्ष विभाग (डीओएस), अध्यक्ष, अंतरिक्ष आयोग व सचिव, भारतीय अंतरिक्ष अनुसंधान संस्थान- श्री एस. सोमनाथ।

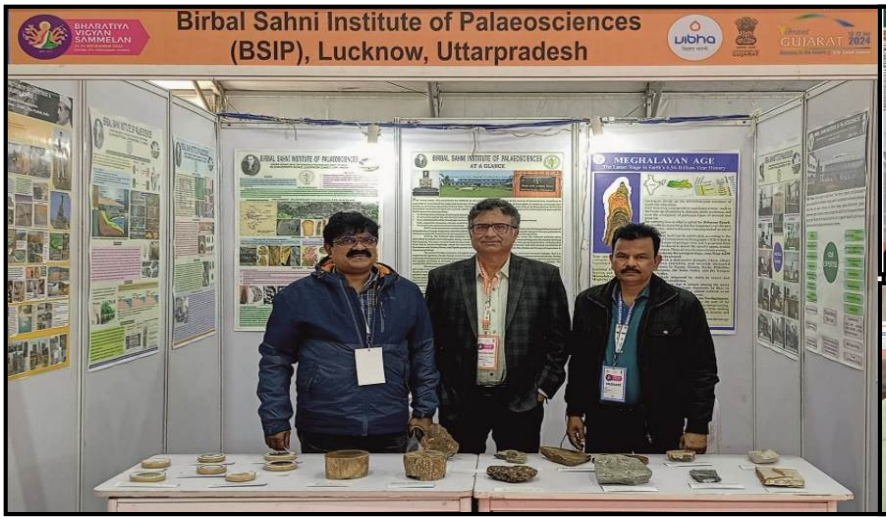
Birbal Sahni Institute of Palaeosciences
(BSIP), Lucknow, Uttarpradesh
BHARATIYA VIGYAN SAMMELAN
MEGHALAYAN AGE

दीनदयाल उपाध्याय राजकीय पीजी कॉलेज, सीतापुर उत्तर प्रदेश के छात्रों ने बीएसआईपी संग्रहालय और विभिन्न प्रयोगशालाओं का दौरा किया

डीबीटी-स्टार कॉलेज योजना के तहत संस्थागत दौरा, वनस्पति विज्ञान विभाग आर्य विद्यापीठ कॉलेज, गुवाहाटी, असम के छात्रों ने बीएसआईपी संग्रहालय और विभिन्न प्रयोगशालाओं का दौरा किया

बीरबल साहनी पुराविज्ञान संस्थान लखनऊ में पृथ्वी विज्ञान सप्ताह समारोह मनाया गया

बीरबल साहनी पुराविज्ञान संस्थान लखनऊ में पृथ्वी विज्ञान सप्ताह समारोह मनाया गया

चिन्मय विद्यालय एनटीपीसी, ऊंचाहार, रायबरेली के स्कूली छात्रों ने बीएसआईपी संग्रहालय का दौरा किया था

बीएसआईपी लखनऊ में राष्ट्रीय विज्ञान दिवस समारोह

पीबीआरपी अकादमी, मुरादगंज, औरैया, उत्तर प्रदेश के छात्रों ने बीएसआईपी लखनऊ के संग्रहालय और प्रयोगशालाओं का दौरा किया।

दयानंद पीजी कॉलेज बछरावां, रायबरेली के छात्रों ने बीएसआईपी संग्रहालय और प्रयोगशालाओं का दौरा किया

के.एन. के छात्र एवं शिक्षक, गवर्नमेंट पीजी कॉलेज, ज्ञानपुर, भदोही, उ.प्र. बीएसआईपी संग्रहालय और प्रयोगशालाओं का दौरा किया।

भारतीय महिला ग्रामोद्योग संस्थान, प्रयागराज, उत्तर प्रदेश के छात्रों ने बीएसआईपी संग्रहालय एवं प्रयोगशालाओं का भ्रमण किया

महर्षि सूचना प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, लखनऊ के छात्रों ने बीएसआईपी संग्रहालय और प्रयोगशालाओं का दौरा किया

डॉ. राजेंद्र प्रसाद मेमोरियल डिग्री कॉलेज, राजाजीपुरम, लखनऊ के छात्रों ने बीएसआईपी संग्रहालय और विभिन्न प्रयोगशालाओं का दौरा किया

भारतीय महिला ग्रामोद्योग संस्थान, प्रयागराज, उत्तर प्रदेश की छात्रों ने बीएसआईपी संग्रहालय एवं प्रयोगशालाओं का भ्रमण किया

राजकीय बालिका उच्चतर माध्यमिक विद्यालय, गिलौली, पंडरी कृपाल, गोंडा के विद्यार्थियों ने संग्रहालय दर्शन किया

शोध प्रबंध सारांश (पी-एच.डी. विद्या वाचस्पति की उपाधि)

शोधकर्ता का नाम: डॉ. प्रिया अग्निहोत्री

शोध का शीर्षक: कच्छ और खंभात भूरा-कोयला, गुजरात, भारत से एम्बर में इओसीन आर्थ्रोपोड्स: इओसीन पर्यावरण पर उनका प्रभाव

पर्यवेक्षक: डॉ. हुकम सिंह, बी. सा. पु. सं., लखनऊ एवं डॉ. के.ए. सुब्रमण्यन, भारतीय प्राणी सर्वेक्षण, चेन्नई

विश्वविद्यालय का नाम एवं वर्ष: वैज्ञानिक एवं नवोन्मेषी अनुसंधान अकादमी, बी. सा. पु. सं., लखनऊ (2023).

सारांश

शोध का विषय गुजरात में कच्छ और खंभात द्रोणी की खुली भूरा-कोयला खदानों से एम्बर नोड्यूल्स में संरक्षित इओसीन आर्थ्रोपोड के व्यवस्थित और पर्यावरणीय निहितार्थ से संबंधित है। यह अध्ययन वालिया और उमरसर भूरा-कोयला खदानों से आर्थ्रोपोड संयोजन का पहला व्यापक और विस्तृत विश्लेषण प्रस्तुत करता है। आर्थ्रोपॉड जैवसमूह में कीट, अरेक्निड्स और मीठे जल के ऑस्ट्राकोड शामिल हैं। इस दौरान, भारतीय प्लेट विशिष्ट जलवायु के साथ उत्तर की ओर बढ़ी, जिसमें इओसीन के दौरान अतितापीय घटनाएं शामिल थीं। वालिया भूरा-कोयला खदान खंभात शेल फॉर्मेशन से संबंधित है, जिसका आयु निर्धारण निचले इओसीन के फोराम सूचक, *निमुलाइटिस बर्डिगलेंसिस बर्डिगलेंसिस* की उपस्थिति से किया गया है। इसके अलावा, इन खदानों में ओस्ट्राकोड जीवाश्म भी मिल रहे हैं जो एम्बर निक्षेपों में शायद ही कभी देखे जाते है। दूसरी जांच उमरसर भूरा-कोयला खदान, कच्छ द्रोणी से की गई है। इसकी आयु मध्य इओसीन के रूप में स्थापित की गई है और इसका स्तरीकरण पनांद्रो फार्मेशन के समान पाया गया है। उमरसर खदान में कोक्विना चूना पत्थर की उपस्थिति से यह स्पष्ट होता है की वह हारुडी फोर्मेशन के टाइप सेक्शन के समान है।

सिंक्रोट्रॉन एक्स-रे 3-डी टोमोग्राफी, कन्फोकल लेजर स्कैनिंग माइक्रोस्कोपी (CLSM) और स्कैनिंग इलेक्ट्रॉन माइक्रोस्कोपी (SEM) जैसे अत्याधुनिक उपकरणों का उपयोग एक प्रचुर एम्बर अंतर्निहित संयोजन की जांच के लिए किया गया है, जिसमें अड़तीस आर्थ्रोपोड टैक्सा शामिल हैं, जिसमें मीठे जल के ऑस्ट्राकोड और छद्म-बिच्छू जैसे नए टैक्सा भी शामिल हैं। शोध में एम्बर में संरक्षित जीवाश्म कीट टैक्सा के व्यवस्थित विवरण का वर्णन किया गया है जिसमें गैर-काटने वाले और काटने वाले मिजेज़ *काईरोनोमस*, *लॉटरबोर्निएला*, *पैराटेन्डिप्स*, *अल्केट्रॉन*, *टैनीपस*, *पोडोक्लस* और *ऑर्थोक्लैडियस*, *कुलिसेटा*, *कुलिकोइड्स*, *इलेक्ट्रोक्सिलोमिया* और *लेडोमिया* आदि प्रजातियां वर्णित की गयी हैं। फॉर्मिसाइडी चींटी टैक्सा में *फ्रोमिका*, *गेसोमिरमेक्स*, *एक्रोमिरमेक्स*, *फ्रॉगगेटेला*, *डोलिकोडेरस*, *हाइपोक्लिनिया*, *डोरीमिरमेक्स*, *टेक्नोमिरमेक्स* और *प्लैटिथेरिया* शामिल हैं। *ऑक्सीथेरिया* भृंग और *सारकोप्टेस* घुन एम्बर में दुर्लभ वैश्विक रिकॉर्ड वाले समूह हैं। अरेक्निड्स में रुगाथोड्स, *मिसुमेना*, *अरानिएला*, *लोक्सोस्केलिस*, *गिगिएला*, *टेगेनेरिया*, *बाल्ज़ेबब* और *डिक्टिना* सहित आठ मकड़ी प्रजातियों का व्यवस्थित विवरण शामिल है। वालिया भूरा-कोयला खदान के खंभात एम्बर से प्राप्त वृक्षों की छाल में रहने वाली एक नई छद्म बिच्छू की प्रजाति *जियोगारन्या वैलियेन्सिस* का वर्णन इस शोध पत्र मे किया गया है। उपफ़ाइलम क्रस्टेशिया के जलीय जीवों में मीठे पानी के ओस्ट्राकोड्स के सात टैक्सा शामिल हैं जिनमें *कैंडोना*, *एकैंडोना*, *ऑस्ट्रोसाइथेर*, *गोम्फोसाइथेरे* वर्तमान में, डार्विनुलाइडी और एंटोमोज़ोइडडी परिवारों के दो अज्ञात टैक्सा और *टिमिरियासेविया गिगेंटिका* की एक नई प्रजाति शामिल हैं। प्रस्तावित शोध पत्र में साल वृक्ष के प्रभुत्व वाले इओसीन आवृतबीजी मिश्रित वन की एक समग्र तस्वीर प्रस्तुत करने के उद्देश्य से कीटो, मकड़ियों और

ओस्ट्राकोड्स की पारिस्थितिकी, टैफोनोमी और माइक्रोहैबिटैट पर आधारित पर्यावरणीय निहितार्थों की जांच की गई है। इओसीन एम्बर जैवविविधता को कई टैफोनोमिक मानदंडों द्वारा समझाया गया है, जो विभिन्न आर्थ्रोपोड समूहों के पाये जाने की आवृत्ति को स्पष्ट करते हैं - जैसे तितलियों के दुर्लभ संरक्षण के दौरान, मिजेज़ का प्रभुत्व। इओसीन काल में, भारतीय प्लेट एक भूमध्यरेखीय इओसीन-स्थिति में थी, जहाँ आवृतबीजी प्रजातियों का प्रभुत्व था। उस समय घने चौड़ी पत्तियों वाले भूमध्यरेखीय वन फैले हुए होंगे। प्राप्त होने वाले एम्बर नोड्यूल, इन पीट वनों के डिप्टरोकार्प्स (विशेष रूप से *शोरिया*) से संबंधित है, ठोस और पॉलिमराइज्ड डैमर-II राल से बने हैं। एम्बर में भूवैज्ञानिक महत्व के तत्व और भारत-एशिया टकराव के दौरान जीवन-रूपों के वितरण को समझाने हेतु समर्थ है। अध्ययन किए गए वर्गों के लिए एक उपयुक्त आधुनिक पर्यावरणीय अनुरूप वर्तमान बोर्नियो के पीट दलदल हैं, जिनमें कीटों से युक्त आधुनिक राल बूंदों के साथ डिप्टरोकार्प वनों का भी प्रभुत्व है।

शोधकर्ता का नाम: डॉ. योगेश पाल सिंह

शोध का शीर्षक: केरल द्रोणी, भारत की सेनोज़ोइक अवसादी चट्टानों से जैवस्तरीय विश्लेषण और पुराजलवायु पुनर्निर्माण

पर्यवेक्षक: डॉ. पूनम वर्मा, बी. सा. पु. सं. एवं प्रो. रामेश्वर बली, लखनऊ विश्वविद्यालय

विभाग का नाम: भूविज्ञान विभाग

विश्वविद्यालय का नाम एवं वर्ष: लखनऊ विश्वविद्यालय, लखनऊ (2023)

सारांश

नियोजीन जलवायु विशेष रूप से मायोसीन युग (23.03 – 5.33 मिलियन वर्ष पूर्व) के दौरान अत्यंत गतिशील था, जिसे "आधुनिक दुनिया के निर्माण" का समय भी माना जाता है। आधुनिक पर्वतीय श्रृंखलाओं का उत्थान, द्विध्रुवीय हिमनदों की शुरुआत, महासागर की धाराओं की वर्तमान स्थिति, महाद्वीपीय आंतरिक क्षेत्रों के शुष्कीकरण, वायुमंडलीय CO_2 के स्तर में कमी और अन्य प्रमुख जलवायु परिवर्तन मायोसीन समय अंतराल मे घटित हुए थे। 17-14 मिलियन वर्ष पूर्व मायोसीन काल एक वैश्विक अतितापिय घटनाक्रम - मध्य मायोसीन जलवायु ऑप्टिमम (MMCO) के लिए जाना जाता है। MMCO के दौरान वैश्विक जलवायु आज की तुलना में लगभग 3-4°C गर्म थी, हालांकि जलवायु अत्यधिक परिवर्तनशील थी, जबकि वायुमंडल में कार्बन डाइऑक्साइड का स्तर वर्तमान स्तर की तुलना में अधिक था (लगभग ~400 – 600 पार्ट्स प्रति मिलियन)। यह स्थिति IPCC (2007) की अनुमान के अनुसार 21वीं सदी के अंत तक 4°C की वार्मिंग से संगत है। इसलिए, MMCO के दौरन वैश्विक स्थितियाँ जैसे कि वायुमंडल में CO_2 स्तर का तुलनीय या थोड़ा उच्च होना, बर्फ-मुक्त उत्तरी गोलार्ध और समुद्र स्तर में वृद्धि भविष्य के जलवायु परिवर्तन के लिए एक अनुरूप का कार्य कर सकते हैं।

नियोजीन की अवसादी चट्टानें दक्षिण-पश्चिम भारत में केरल राज्य के तटीय क्षेत्र मे पाई जाती है, जो नियोजीन वैश्विक घटनाए, जैसे MMCO के दौरान पुराजलवायु और पुरापर्यावरण का इस क्षेत्र में अध्ययन करने का एकमात्र अवसर प्रदान करती हैं। इस अध्ययन में केरल द्रोणी के चार विभिन्न स्थानों से नमूने एकत्रित किए गए, चन्ना कोडी सेक्शन (क्विलोन फॉर्मेशन), कोलम; अलीयरक्कम सेक्शन (वर्कल्ली फॉर्मेशन), वरकला; EICL (इंग्लिश इंडिया क्ले माइन लिमिटेड) माइन, मंगलपुरम; और सुलेखा माइन, मंगलपुरम। केरल द्रोणी के अवसादी चट्टानों की जैवस्तरीय विश्लेषण के लिए पैलिनोमोर्फ़्स (पराग़कण और डाइनोफ्लैजलेट सिस्ट्स) और कैल्केरियस परासूक्ष्मजीवाश्म संयोजन के उपयोग से खंडों की आयु का अनुमान लगाया गया है। ये संयोजन केरल द्रोणी, दक्षिण-पश्चिम भारत के क्विलोन फॉर्मेशन के चन्ना कोडी सेक्शन और वर्कल्ली फॉर्मेशन के अलीयरक्कम

सेक्शन से दर्ज किए गए हैं। इसके अलावा, पैलिनोफ़ेसीज़ और स्थिर कार्बन समस्थानिक डेटा को परागाणविक आंकड़ो के साथ एकीकृत किया गया है ताकि पुरावनस्पति, पुरापर्यावरण और अवसादी स्थितियों को समझा जा सके। इसके अलावा, स्पोरोमोर्फ़्स का उपयोग करके पुराजलवायु पुनर्निर्माण का भी प्रयास किया गया है। इस शोध अध्ययन को निम्नलिखित बिंदुओं में संक्षेपित किया जा सकता है:

1. आयु-निदानात्मक डाइनोफ्लैजलेट सिस्ट और कैल्केरियस परासूक्ष्मजीवाश्म के आधार पर किए गए जैवस्तरीय विश्लेषण, आयु निर्धारण और उनके वैश्विक जैव-घटनाओं के साथ संबंध से यह संकेत मिलता है कि क्लिोन फॉर्मेशन के चन्ना कोडी खंड का निक्षेपण प्रारंभिक मायोसीन (मध्य बर्डिगालियन, करीब 19 -17.5 मिलियन वर्ष पहले) में हुआ था। जबकि अलियारक्कम खंड को एक्विटैनियन से पुराना और विलंबित बर्डिगालियन से नया माना गया है, अर्थात् लगभग 22-16.5 मिलियन वर्ष पहले।

2. इस अध्ययन से यह भी पता चलता है कि प्रारंभिक मायोसीन के दौरान दक्षिण-पश्चिमी भारतीय तट पर समुद्री स्तर में परिवर्तन से समुद्र का अतिक्रमण हुआ था, जिससे क्षेत्र की वनस्पति संरचना में उल्लेखनीय बदलाव हुए थे। यह अध्ययन वैश्विक जलवायु परिवर्तनों के साथ क्षेत्रीय पर्यावरणीय परिवर्तनों को जोड़ने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। वर्णित समुद्री स्तर में परिवर्तन संभवतः मध्य मायोसीन जलवायु अधिकतम (MMCO) से जुड़े वैश्विक समुद्र स्तर के प्रारंभिक छोटे चरणों के अनुरूप थे।

3. मायोसीन काल में केरल के वर्षावन में अतितापीय वनस्पति (बॉम्बाकेसी, डिप्टरोकार्पेसी, टीनोलोफोनेसी और एरेकेसी) के परिवारों की पहचान से पता चलता है कि उस समय की जलवायु समकालीन पर्यावरण की तुलना में अधिक गर्म और अधिक आर्द्र थी। भारतीय उपमहाद्वीप से विलुप्त तटीय एवं दलदली क्षेत्रों में पैदा होने वाले वृक्षों (टीनोलोफोनेसी) के परिवारों के विविध पराग मोर्फोटाइप्स की प्रभावी उपस्थिति क्षेत्रीय वनस्पति संरचना में उल्लेखनीय बदलाव को दर्शाती है।

4. अध्ययन किए गए खंडों से पुनर्निर्मित वार्षिक औसत वर्षा (MAP) और वार्षिक औसत तापमान (MAT) के मान आधुनिक जलवायु मानकों के साथ निकटता से मेल खाते हैं। हालांकि, पुनर्निर्मित (MPdry) शुष्क महीनों में औसत वर्षा के मान प्रारंभिक मायोसीन युग के दौरान लंबी मानसूनी वर्षा की अवधि और उच्च तापमान का संकेत देते हैं, जो क्षेत्र में अतितापीय वनस्पति के साथ सदाबहार वनों व वर्षावनों के फलने-फूलने में सहायक थे। शुष्क तथा बरसात के महीने के दौरान वर्षा स्तर के बीच अंतर मौसमी या मानसूनी जलवायु की उपस्थिति दर्शाते है।

शोधकर्ता का नाम: डॉ. प्रियंका जोशी

शोध का शीर्षक: चांग ला-तांगत्से और होर ला-माहे द्रोणी, लद्दाख रेंज, ट्रांस हिमालय में भू-आकृति विज्ञान विकास एवं जलवायु विविधताएं

पर्यवेक्षक: डॉ. बिनीता फर्तियाल, बी. सा. पु. सं., लखनऊ एवं प्रो. एम. जोशी, बनारस हिंदू विश्वविद्यालय, वाराणसी

विभाग का नाम: भूविज्ञान विभाग

विश्वविद्यालय का नाम एवं वर्ष: बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी (2023).

सारांश

विश्व स्तर पर, पर्वत श्रृंखलाओं का हिमनद इतिहास है, और हिमनद झीलें कई पर्वतीय क्षेत्रों की प्रमुख विशेषताएं हैं।

लद्दाख रेंज इसका एक प्रमुख उदाहरण है जिसमें कई हिमनद और पुराझीलें शामिल हैं। यह क्षेत्र महत्वपूर्ण है क्योंकि यह भारत के मध्य अक्षांश में स्थित है, जहां पश्चिमी हवाओं का प्रभुत्व रहता है और केवल तीव्र ISM (भारतीय ग्रीष्मकालीन मानसून) के दौरान यहां जमा अवसाद में ISM की विविधता देखी जा सकती है, जो जलवायु को प्रभावित करने और परिदृश्य को पुनः आकार देने हेतु उत्तरदायी है। इस अध्ययन में क्षेत्र के दो प्रमुख दर्रों, चांग ला और होर ला से झीलों की जांच की गई।

परिणामस्वरूप, ऐसा प्रतीत होता है कि एक हिमनद ने पहले घाटी को आच्छादित करलिया था, जैसा कि विभिन्न स्तरों पर मोराइन द्वारा निर्धारित किया गया था। घाटियों के किनारे खड़ी-सीधी किनारों वाली, सपाट गोलाकार तल वाली, विषम प्रकृति वाली और अलग-अलग हिस्सों में विभिन्न आकार की झीलें देखी जाती हैं। ये झीलें अधिकतर छोटी हैं, और हाल तक इन्हें अल्पपोषी माना जाता रहा है। हालाँकि, लंबे समय तक गर्म मौसम के प्रभाव के कारण, झीलें वर्तमान में काफी उत्पादक हो गयी हैं और इनमें मध्यम प्रचुर मात्रा में डायटम और पराग शामिल हैं । $\delta^{13}C$ समस्थानिक मान -22‰ के औसत के साथ -21 और -24 ‰ के बीच होता है जो मिश्रित C3-C4 पादपों के चिन्हकों को दर्शाता है।

झील निक्षेपों का विश्लेषण जोकि सूक्ष्म कालक्रम (अजैविक/जैविक) द्वारा पूरित है 11.2 किलो वर्ष के दौरान हुई जलवायु परिवर्तन प्रदर्शित करता है। लद्दाख रेंज में झील का निर्माण, ज्यादातर ऊंचाई वाले दर्रों पर, होलोसीन के दौरान ठंडे और शुष्क चरण के साथ शुरू हुआ, जिसके दौरान हिमनदी अपने चरम पर थी। धीरे-धीरे आर्द्र और सुहावनी स्थितियों के साथ जलवायु स्थिर हो गई जिसके परिणामस्वरूप बर्फ का आवरण पिघल गया और इस क्षेत्र में झीलें बन गईं।

शोधकर्ता का नाम: डॉ. शालिनी परमार

शोध का शीर्षक: राजस्थान के बाड़मेर द्रोणी के प्रारंभिक पेलियोजीन अनुक्रमों का अवसादिकी और वानस्पतिक अध्ययन: जलवायु और सापेक्ष समुद्र स्तर के उतार-चढ़ाव पर प्रभाव

पर्यवेक्षक: डॉ. वंदना प्रसाद, बी. सा. पु. सं., लखनऊ एवं प्रो. बी. पी. सिंह, भूविज्ञान विभाग, बनारस हिंदू विश्वविद्यालय, वाराणसी

विभाग का नाम: भूविज्ञान विभाग

विश्वविद्यालय का नाम एवं वर्ष: बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी (2023).

सारांश

अंतिम जुरासिक में गोंडवाना विभाजन के बाद, भारतीय प्लेट के उच्च अक्षांश से निम्न अक्षांश की ओर खिसकने से भारतीय उपमहाद्वीप पर भूमंडल के साथ-साथ जीवमंडल में भी काफी बदलाव आया। प्रारंभिक पैलियोजीन (~65-52 मिलियन वर्ष) भारतीय प्लेट के इतिहास में एक महत्वपूर्ण अवधि थी, जिसमें प्लेट का ऋतुकीय (20°S) से अतिआद्र भूमध्यरेखीय क्षेत्र तक संरेखण देखा गया था।

इस अवधि में ग्लोबल वार्मिंग की घटनाओं के कारण 55.5 मिलियन वर्ष पर पेलियोसीन-इओसीन थर्मल मैक्सिमा (PETM) और उसके बाद 53.7 मिलियन वर्ष पर इओसीन थर्मल मैक्सिमा (ETM2) के रूप में जाना जाने वाला उच्च यूस्टैटिक समुद्र स्तर था। समुद्री अतिक्रमण की घटनाओं ने भारतीय उपमहाद्वीप के पश्चिमी और उत्तरपूर्वी किनारों पर भूरा-कोयला और शेल अवसाद का बड़े पैमाने पर निक्षेपण किया।

परिणामस्वरूप, प्रारंभिक पेलियोजीन के दौरान भारत में कई हाइड्रोकार्बन भंडार विकसित हुए जो ईंधन और ऊर्जा के प्रमुख स्रोत बन गए। इनमें वनस्पतियों के जीवाश्म बड़ी मात्रा में पाए जाते हैं जो जलवायु और विवर्तनिक घटनाओं के साथ-साथ प्रारंभिक पेलियोजीन के दौरान उष्णकटिबंधीय आवृतबीजी के इओसीन कालीन इतिहास को जानने में मदद कर सकते हैं। वर्तमान शोध कार्य में, राजस्थान के बाड़मेर द्रोणी में पेलियोसीन और प्रारंभिक इओसीन के दौरान निक्षेपण स्थापत्य, समुद्र स्तर के उतार-चढ़ाव और वनस्पति स्वरूप की व्याख्या करने के लिए लिथोफ़ेसीज़ और पेलिनोमॉर्फ (डाइनोफ्लैजलेट सिस्ट, बीजाणु और पराग) का उपयोग किया गया है। वर्तमान अध्ययन में सोनरी भूरा-कोयला खदान के अवसादी क्रम की निक्षेपण प्रणाली का अध्ययन करने के लिए अवसाद के अनुक्रम जैवस्तरकीय ढांचे को स्थापित करने के लिए पुरावनस्पति के साथ लिथोलॉजिकल डेटा को एकीकृत किया गया। जिससे सिस्टम ट्रैक्टों को चिन्हित करके अनुक्रमों के आनुवंशिक रूप से संबंधित स्तर को परिभाषित करने में सहायक सिद्ध हुआ। अवसाद अनुक्रम में समुद्री बाढ़ सतहों का रेखांकन, समुद्री डाइनोफ्लैजलेट सिस्ट और स्थलीय (बीजाणु और पराग) पेलिनोमोर्फ दोनों की विविधता और सापेक्ष बहुतायतता, समुद्र के स्तर में परिवर्तन को दर्शाती है। वर्तमान अध्ययन से पता चलता है कि पैरालिक दलदल से जुड़ा तटीय क्षेत्र भूरा-कोयला वाले अवसादी अनुक्रमों में विशिष्ट विशेषताओं को प्रदर्शित करता है जो ट्रांसग्रेसिव-रिग्रेसिव चक्रों को रेखांकित करने में मदद करता है। अनुक्रम जैवस्तरकीय ढांचे के साथ ही, वर्तमान अध्ययन में पाया गया कि सिल्टस्टोन, कार्बोनेसियस शेल्स के साथ भूरा-कोयला का चक्रीय अवसाद के जमाव के समय सापेक्ष समुद्र स्तर में कई बार उतार-चढ़ाव का संकेत देता है।

इसके अलावा, जीवाश्म समुद्री बाइवाल्व भी पीले सिल्टस्टोन के दो परतों पर पाए जाते हैं जिनका अवसादन के बीच लैग सतह के रूप में व्याख्या की गयी है। इसके अलावा, आयु सूचक डाइनोफ्लैजलेट सिस्ट और उनकी अधिकतम विविधता के साथ-साथ प्रचुरता से पता चलता है कि समुद्र के स्तर में उतार-चढ़ाव मुख्य रूप से डेनियन-सेलैंडियन और थानेटियन-वाईप्रेसियन सीमा पर प्रारंभिक पेलियोजीन वार्मिंग के बाद यूस्टैटिक समुद्र स्तर में वृद्धि से प्रभावित था। जीवाश्म पराग के संबंधित निकटतम जीवित जीव से पता चला है कि निक्षेपण द्रोणी के आसपास की वनस्पति तटीय पारिस्थितिकी तंत्र (मैंग्रोव, बैक मैंग्रोव, ताड़ और उष्णकटिबंधीय वर्षावन वनस्पति) के साथ संरचित थी। प्रारंभिक इओसीन निक्षेपण इकाइयों में उष्णकटिबंधीय मेगाथर्मल एंजियोस्पर्म से संबंधित समृद्ध और विविध जीवाश्म पराग से पता चलता है कि अतिआद्र जलवायु ने क्षेत्र में बड़े पैमाने पर प्रसार और उष्णकटिबंधीय वनस्पति की उच्च विविधता को प्रोत्साहित किया है। प्राचीन मेगाथर्मल पादप फ़ैमिली एरेकेसी (पाम्स) और मिरिस्टिकेसी से संबंधित सुसंरक्षित जीवाश्म पराग इस बात की पुष्टि करता है कि प्रारंभिक पेलियोजीन वार्मिंग के दौरान अतिआद्र जलवायु ने भारतीय उपमहाद्वीप पर बड़े पैमाने पर मैंग्रोव और मीठे जल के दलदलों और विविध उष्णकटिबंधीय वर्षा वन वनस्पति के विकास का समर्थन किया।

वर्तमान अध्ययन में दो परिवारों एरेकेसी और मिरिस्टिकेसी के पुराजैविक और पुराजलवायु पुनर्निर्माण से पता चलता है कि ये मेगाथर्मल पादप परिवार मास्ट्रिचियन-पेलियोसीन के दौरान कोहिस्तान-लद्दाख द्वीप आर्क एवं गर्म उष्णकटिबंधीय जलवायु गलियारे के माध्यम से अफ्रीका से भारत तक फैले हुए थे। इसके बाद, मध्य इओसीन के दौरान भारत-एशिया टकराव के बाद ये पौधे दक्षिण पूर्व एशिया में फैल गए, यह "भारत से बाहर" फैलाव परिकल्पना को समर्थित करता है। हालाँकि, भारतीय उपमहाद्वीप में, निओजीन के दौरान और निओजीन के बाद के वैश्विक शीतलन के दौरान ऋतुकीय जलवायु की शुरुआत के बाद नमी वाले पौधों की प्रजातियों ने खुद को अलग-अलग नमी वाले क्षेत्रों में सीमित करना शुरू कर दिया। इसलिए, भारत के प्रारंभिक पैलियोजीन अनुक्रमों पर विस्तृत जांच के साथ, वर्तमान अध्ययन इस बात पर बल देता है कि कैसे पुराकाल की जलवायु और टेक्टोनिक्स ने भारतीय उपमहाद्वीप पर अवसादन और वनस्पति प्रतिरूप को परिभाषित करने में प्रमुख भूमिका निभाई।

शोधकर्ता का नाम: डॉ. पुजारिणी समल

शोध का शीर्षक: भारत के पूर्वी तट पर स्थित महानदी नदी डेल्टा से अंतिम होलोसीन पुराजलवायु और पुरावनस्पति पुनर्निर्माण : एक बहु-प्रॉक्सी दृष्टिकोण।

पर्यवेक्षक: डॉ. ज्योति श्रीवास्तव, बी. सा. पु. सं एवं डॉ. एस. आर. सिंगारा सुब्रमणियन, अन्नामलाई विश्वविद्यालय, तमिलनाडु

विभाग का नाम: भूविज्ञान विभाग

विश्वविद्यालय का नाम एवं वर्ष: अन्नामलाई विश्वविद्यालय, तमिलनाडु (2023)

सारांश

जलवायु परिवर्तन के भविष्य के परिदृश्य और इसके परिणामों का पूर्वानुमान लगाने के लिए पुराजलवायु परिवर्तन से वर्षा और वनस्पति आवरण पर प्रभाव को समझना महत्वपूर्ण है। वर्तमान शोध में महानदी नदी डेल्टा के निचले डेल्टाई मैदान से कालानुक्रमिक रूप से सीमित अवसादीय परतों से बायोटिक (परागाणु विश्लेषण) और अजैविक प्रॉक्सी रिकॉर्ड को शामिल किया गया है ताकि पिछले 2600 वर्षों में जलवायु परिवर्तनशीलता का पुनर्निर्माण किया जा सके। इसके अलावा, दो चयनित मैन्ग्रोव टैक्सा, *एविसेनिया ऑफिसिनैलिस* और *राइजोफोरा म्यूक्रोनाटा* के मौजूदा वितरण का उपयोग करके भविष्य के जलवायु परिदृश्यों (वर्ष 2050 और 2070 के लिए) का अनुमान लगाने का प्रयास किया गया।

पिछले 2600 वर्षों के दौरान शोध क्षेत्र की जलवायवीय उतार-चढ़ाव को बेहतर ढंग से समझने के लिए चार स्थलों का चयन किया गया है। पोएसी और *साइप्रस* जैसे शाकीय टैक्सा का प्रभुत्व, शुष्कता सूचकांक में वृद्धि, क्लास्टिक इनपुट सांद्रता में कमी, और BL ट्रेंच में निम्न plagioclase index of alteration (PIA) और chemical index of alteration (CIA) मान, 2600-2000 कैलेंडर वर्ष BP के लौह युग ठंड अवधि (IACP) के दौरान अध्ययन क्षेत्र में अपेक्षाकृत सूखे और शुष्क जलवायु को इंगित करते हैं। 2000-1500 कैलेंडर वर्ष BP की अवधि के दौरान BT ट्रेंच स्थल पर मैन्ग्रोव के साथ स्थलीय प्रजातियों की उपस्थिति के कारण एक अच्छी तरह से विकसित नदी मुहाना पाया गया, जो तटीय पारिस्थितिकी के लिए एक अच्छी सेटिंग का संकेत देती है।

BL ट्रेंच में विविध मैन्ग्रोव और नमी सूचकांक की चोटी की उपस्थिति, गर्म और आर्द्र जलवायु स्थिति को इंगित करती है जो कि एक बढ़े हुए मानसून से संबन्धित हो सकती है, जिसे रोमन गर्म अवधि (RWP) का कारक माना जा सकता है। लगभग 1420 कैलेंडर वर्ष BP के आसपास, BT ट्रेंच स्थल पर *सोनेराशिया* का प्रभुत्व और स्थलीय प्रजातियों में कमी, निम्न वर्षा स्थिति को इंगित करती है। लगभग 1100 कैलेंडर वर्ष BP के आसपास BL ट्रेंच स्थल पर उच्च नमी सूचकांक और उच्च CIA और PIA मान, मध्ययुगीन जलवायु विसंगति (MCA) के प्रारंभ के साथ एक नम चरण व इसके बाद 1100-800 कैलेंडर वर्ष BP के आसपास शुष्क वातावरण का संकेत देते हैं।

SB ट्रेंच के पास विविध प्रकार के मैन्ग्रोव, वृक्ष, और शाकीय वनस्पतियों की उपस्थिति से पता चलता है कि अध्ययन स्थल को 1300 से 400 कैलेंडर वर्ष BP के बीच पर्याप्त वर्षा प्राप्त हुई। *एविसेनिया* की प्रचुरता BT ट्रेंच में 700 कैलेंडर वर्ष BP के बाद शुष्क वातावरण और वन हटाने के परिणाम स्वरूप में सुप्रा-टाइडल बैक मैन्ग्रोव के विकास को दर्शाती है। BL ट्रेंच स्थल पर पराग रिकॉर्ड की कमी और ऋतुकीयता में महत्वपूर्ण कमी प्रबल भौतिक अपरदन और शुष्क जलवायु अवधि का दर्शाती है। सभी ट्रेंच स्थलों से प्राप्त प्रॉक्सी डेटा सामूहिक रूप से एक ही जलवायु को दर्शाते हैं जो अधिकांशतः सूखी और शुष्क और कम वर्षा वाली होती है तथा वो संभवतः लिटिल आइस एज (LIA) से संबंधित है।

मॉडल पूर्वानुमानों के अनुसार, मध्य होलोसीन अनुमान और जीवाश्म रिकॉर्ड मैन्ग्रोव प्रजातियों के लिए उपयुक्त आवास

की सीमा में महत्वपूर्ण विस्तार प्रकट करते हैं, जबकि 2050 और 2070 तक भविष्य के जलवायु परिवर्तन उच्चतम ग्रीनहाउस गैस उत्सर्जन परिदृश्य के तहत एक महत्वपूर्ण गिरावट दिखाते हैं। *एविसेनिया ऑफिसिनैलिस और राइजोफोरा म्यूक्रोनाटा* दोनों में भारत के दक्षिण पूर्व और दक्षिण पश्चिम तटों पर अपने नियत आवासों के नुकसान के कारण गंभीर गिरावट की संभावना है, जबकि पूर्व और पश्चिम तटों के साथ-साथ सुंदरबन, महानदी, चिलिका, और गुजरात तट सहित इनके सामान्य रूप से उपयुक्त आवास बने रहने की भविष्यवाणी की गई है। हमारे अध्ययन में प्रमुख मैन्ग्रोव प्रजातियों की प्रक्षिप्त आवास उपयुक्तता पर जलवायु परिवर्तन के प्रभाव को कम करने के लिए पहचाने गए जोखिम क्षेत्रों में शमन और अनुकूलन विधियों के कार्यान्वयन में प्रासंगिक होगी।

शोधकर्ता का नाम: डॉ. योगेश कुमार

शोध का शीर्षक: दक्षिण भारत मे स्थित कुरनूल समूह की चट्टानों का पुराजैविकीय और रासायनिक स्तरकीय अध्ययन।

पर्यवेक्षक: प्रो० मुकुंद शर्मा, बी. सा. पु. सं., लखनऊ एवं प्रो. श्रीरूप गोस्वामी, संबलपुर विश्वविद्यालय, उड़ीसा

विभाग का नाम: भूविज्ञान विभाग

विश्वविद्यालय का नाम एवं वर्ष: संबलपुर विश्वविद्यालय, ज्योति विहार, बुरला, संबलपुर, उड़ीसा। (2023)

सारांश

कुरनूल समूह की चट्टानें भारत देश के आंध्रप्रदेश राज्य के कुरनूल और उसके इर्द-गिर्द के जिलों में स्थित हैं। कुरनूल समूह की चट्टानें, कडप्पा महासमूह के अंतर्गत आती हैं। कुरनूल समूह की चट्टानों को प्रमुख रूप से छह भागों में विभाजित किया गया है जोकि बंगनपल्ले क्वार्टजाइट, नारजी चूनापत्थर, ओक शेल, पनियम क्वार्टजाइट, कोइलकुंतला चूनापत्थर और नंदयाल शेल हैं। इन चट्टानों पर शोध करने का मुख्य उद्देश्य इन चट्टानों से जुड़ी जटिल समस्याओं को दूर करना था। इन समस्याओं में प्रमुख समस्याएँ थीं, इनका सही आयु निर्धारण न होना और इन चट्टानों का विस्तृत रासायनिक अध्ययन का न होना। प्रस्तुत प्रबंध में इन चट्टानों के पुराजैविकीय और रासायनिक स्तरकीय अध्ययन से ये पता चलता है की कुरनूल समूह की निचली सतह की चट्टानें (बंगनपल्ले क्वार्टजाइट, नारजी चूनापत्थर, ओक शेल, पनियम क्वार्टजाइट) एडियाकारन आयु की हैं। सम्पूर्ण विश्व मे मिलने वाले एडियाकारन आयु के जीवाश्म, कुरनूल समूह के पनियम क्वार्टजाइट से भी प्राप्त हुये हैं और ऊपरी सतह की चट्टानें (कोइलकुंतला चूनापत्थर और नंदयाल शेल) जिनमें कि प्रमुख रूप से कोइलकुंतला चूनापत्थर की चट्टानें हैं, संभवतः प्रीकैम्ब्रियन-कैम्ब्रियन सीमा को अपने आप में समाहित किए हुये है। इस शोध प्रबंध में इन समस्याओं को विस्तृत रूप से उल्लेख किया गया है और इनमें मिलने वाले जीवाश्मों और रासयानिक अध्ययनों के आधार पर कुरनूल समूह की पुराजैविकीय और रासायनिक स्तरकीय स्थापित की गयी है।

शोधकर्ता का नाम: डॉ. सुयश गुप्ता
शोध का शीर्षक: स्पीति हिमालय के अंतिम पेलिओज़ोइक अनुक्रमों में वनस्पतियों का विकास एवं जैव विविधता: पुरापर्यावरणीय एवं पुराभौगोलिक निहितार्थ
पर्यवेक्षक: प्रो. अंजू सक्सेना, वैज्ञानी-ई, बी.सा.पु.सं., लखनऊ एवं प्रो. रामेश्वर बली, लखनऊ विश्वविद्यालय
विभाग का नाम: भू-विज्ञान विभाग
विश्वविद्यालय का नाम एवं वर्ष: लखनऊ विश्वविद्यालय, लखनऊ, उत्तर प्रदेश, भारत (2023)

सारांश

उत्तर-पश्चिमी हिमालय में हिमाचल प्रदेश राज्य के सुदूर हिस्से में स्थित, स्पीति द्रोणी, टेथियन क्षेत्र का एक महत्वपूर्ण खंड है, जिसे ठंडा रेगिस्तान भी कहा जाता है। इसमें नियोप्रोटेरोज़ोइक से क्रिटेशियस युग के उत्कृष्ट और पूर्ण स्तरीकृत अनुक्रम शामिल हैं एवं इसे भारतीय भूविज्ञान के जीवाश्म संग्रहालय के रूप में भी जाना जाता है। कई दशकों में उत्पन्न ज्ञान की प्रचुरता एवं इस क्षेत्र के वैश्विक भूवैज्ञानिक महत्व के बावजूद, पुरावनस्पतिक अध्ययनों पर बहुत कम ध्यान दिया गया। अध्ययन में अंतिम डेवोनियन के परागाणु मिले जोकि भारतीय उपमहाद्वीप से पहला अभिलेख है। जिसमें जाइगोट्रेरिडिएल्स, मराशिएल्स और बोट्रीओट्रेरिडेल्स वनस्पतियों के बीजाणु की उपस्थिति है, और साथ में ग्लोसोट्रेरिडेल्स और कॉर्डैटेल्स वनस्पतियों के परागकण भी हैं, जोकि प्रारंभिक पर्मियन युग के है। इन परागाणु को स्तरीकृत रिसाव द्वारा डेवोनियन अवसाद में लाया गया था। हालाँकि, कोई डेवोनियन की वृहद वनस्पतियों के अभिलेख नहीं मिले, परंतु प्राप्त परागाणु से पता चलता है कि इस काल के दौरान इस क्षेत्र में पेड़ पौधे मौजूद थे।

कार्बोनिफेरस काल के वृहद वनस्पतियों के समुच्चयों के साथ-साथ समृद्ध और विविध परागाणु भी प्राप्त हुए। वृहद वनस्पतियों के समुच्चयों में *नोथोरकोट्रेरिस*, *स्फेनोट्रेरिस*, *ट्राइफिलोट्रेरिस*, *फ्रायोप्सिस*, *फ्लेबेलोफोलियम*, *आर्कियोकैलामाइट्स*, *जेन्सेलिया* के साथ कुछ अज्ञात वनस्पतियों के अवशेष तथा वनस्पतियों के तने शामिल हैं, जोकि टेरिडोफाइट्स वनस्पतियों के समूह से संबंध रखते है। वहीं प्राप्त परागाणु समुच्चयों में सीलैलाजिनेल्स, जाइगोट्रेरिडेल्स, मराशिएल्स, बोट्रीओट्रेरिडेल्स, स्फेनोफिलेल्स, फिलिकेल्स, प्रोटोलेपिडोडेंडरेल्स, लाइकोपोडियेल्स और इक्विसीटेल्स / नोएगेराथियेल्स / स्फेनोफिलेल्स कॉर्डाइटेल्स वनस्पतियों के समूहों की व्यापकता हैं। हालाँकि लाइकोप्सिड्स और कॉर्डाइटेल्स की वृहद वनस्पतियों के अवशेष नहीं मिले, जबकि सूक्ष्म वनस्पतियों के समुच्चयों में दोनों समूहों के पैतृक वनस्पतियों के संबंध को दर्शाता है। अध्ययन में अंतिम कार्बोनिफेरस के परागाणु भी मिले जोकि भारत के अंतिम कार्बोनिफेरस के परागाणु का पहला अभिलेख है। प्राप्त परागाणु का संबंध ग्लोसोट्रेरिडेल्स, कोनिफरेल्स और कॉर्डाइटेल्स वनस्पतियों से हैं इससे यह भी परिकल्पना की जा सकती है कि इन परागाणु जातियों के मूल पौधे कार्बोनिफेरस के दौरान विकसित हुए हैं और कार्बोनिफेरस हिमनद की कठोर परिस्थितियों में अनुकूलित रहे, और प्रारंभिक पर्मियन में प्रचुर मात्रा में बढ़े हैं। कार्बोनिफेरस अनुक्रमों से ग्लोसोट्रेरिड संबंध वाले परागाणु की घटनाएँ इस विचार को और मजबूत करती हैं कि ग्लोसोट्रेरिड्स की उत्पत्ति कार्बोनिफेरस समय में हुई होगी।

शोधकर्ता का नाम: डॉ. पूजा तिवारी

शोध का शीर्षक: बहु-प्रॉक्सी अध्ययनों का उपयोग करके केरल के दक्षिण-पश्चिमी तटीय क्षेत्र से होलोसीन जलवायु और पर्यावरण पुनर्निर्माण

पर्यवेक्षक: बिस्वजीत ठाकुर, बी. सा. पु. सं एवं पूर्णिमा श्रीवास्तव, भूविज्ञान विभाग, लखनऊ विश्वविद्यालय

विभाग का नाम: भूविज्ञान विभाग

विश्वविद्यालय का नाम एवं वर्ष: लखनऊ विश्वविद्यालय, लखनऊ (2023)

सारांश

वर्तमान शोध प्रबंध में केरल-कोंकण क्षेत्र से होलोसीन काल में भारत के तटीय परिदृश्य और इससे संबंधित भू-आकृतियों का वर्णन किया गया है। इस कार्य में केरल राज्य का भूविज्ञान, जलवायु, वर्षा, तापमान, हवा, आर्द्रता, मिट्टी का भी विस्तृत विवरण किया गया है। केरल के दक्षिण-पश्चिम तट से सतह अवसाद नमूनों का अध्ययन क्षेत्र में जलवायु, पर्यावरण और मानव प्रभावों के बारे में जानकारी प्रदान करता है। इन अवसादों की जांच करके, मानसूनी परिवर्तनशीलता को समझा जा सकता हैं और इन अंतर्दृष्टियों का उपयोग करके पुरानिक्षेप रिकॉर्ड में समानता स्थापित की जा सकती हैं ताकि समय के साथ जलवायु परिवर्तन का पता लगाया जा सके। कण-आकारिकीय का डेटा अपक्षय, अपरदन और अवसाद निक्षेपण के दौरान जल गतिकी के बारे में जानकारी प्रकट करता है। आंकड़े (औसत छंटाई, विकृति, और वक्रता) प्राकृतिक और मानव-प्रेरित प्रक्रियाओं को समझने में मदद करते हैं। वेम्बनाड आर्द्रभूमि में डायटम्स का वितरण और प्रचुरता जल स्तर और पर्यावरणीय परिवर्तनों का संकेत देती है। डायटम्स डेटा जैविक-गैरजैविक अंतःक्रियाओं में अंतर्दृष्टि प्रदान करता हैं, सूक्ष्म-प्राकृतिक आवास की उपस्थिति और जैवजन्य सिलिका तत्व पर जानकारी प्रदान करता हैं। इस अध्ययन में, तटीय पारिस्थितिकी प्रणालियों में जैव-भू-रासायनिक प्रक्रियाओं को समझने के लिए कार्बन, नाइट्रोजन और सल्फर (CNS) के स्थिर समस्थानिकों का उपयोग किया गया है। ये समस्थानिक कार्बनिक पदार्थ के चक्रण में परिवर्तन प्रकट करते हैं और पर्यावरणीय परिवर्तनों के लिए सूक्ष्म-वनस्पति और जीवों की प्रतिक्रियाओं पर जानकारी प्रदान करते हैं। नाइट्रोजन, फास्फोरस, पोटैशियम, कैल्शियम, मैग्नीशियम, सल्फर, लोहा और अन्य प्रमुख तत्वों का विश्लेषण मिट्टी और निक्षेप के गुणों को उजागर करता है। इस अध्ययन में पता चला हैं कि मानव गतिविधियों के कारण वेम्बनाड जैवविविधता हॉटस्पॉट महत्वपूर्ण पारिस्थितिक परिवर्तन के दौर से गुजर रहा है। अध्ययन में पाया गया कि मानव गतिविधियों जैसे जहाज रखरखाव, विद्युत-लेपण और कृषि प्रथाओं ने वेम्बनाड आर्द्रभूमि में भारी धातु प्रदूषण को बढ़ावा दिया है जो WHO और BIS मानकों से अधिक है।

मनकुडी और अरूकुट्टी से क्रोड अध्ययन 500 ईसा पूर्व से ~600 सीई तक जलवायु का पुनर्निर्धारण करते हैं, जो उप-अटलांटिक शीत अवधि (SACP) और रोमन उष्ण अवधि (RWP) जैसे वैश्विक जलवायु घटनाओं के लिए विविध प्रतिक्रियाएं प्रकट करते हैं। यह अध्ययन उच्च नदी गतिविधि, समुद्र के अतिक्रमण और भारतीय ग्रीष्मकालीन मानसून (ISM) में परिवर्तनों की अवधि की पहचान करता है। एडाथुआ क्रोड में पूरे होलोसीन और विलंबित प्लेइस्टोसीन का हिस्सा शामिल है, जो होलोसीन जलवायु अनुकूलतम के दौरान उच्च उत्पादकता दिखाता है। डायटम्स समुदायों और समस्थानिक मूल्यों में परिवर्तन समुद्री और स्थलीय स्थितियों में बदलाव को दर्शाते हैं।

यह अध्ययन वेम्बनाड आर्द्रभूमि पर मानव गतिविधियों के महत्वपूर्ण प्रभाव को उजागर करता है, जो जैव विविधता के क्षय और हानि की ओर जा रहा है। स्थानिक परिवर्तनशीलता के नक्शे इन परिवर्तनों दर्शाते हैं, जो पर्यावरण प्रबंधन में निर्णय लेने वालों की सहायता कर सकते हैं। समग्र रूप से, अध्ययन केरल के दक्षिण-पश्चिम तट के साथ प्राकृतिक प्रक्रियाओं और मानव

गतिविधियों के बीच जटिल अंतःक्रिया को प्रकट करता है, इस महत्वपूर्ण पारिस्थितिकी तंत्र की रक्षा के लिए संरक्षण प्रयासों की आवश्यकता पर जोर देता है।

शोधकर्ता का नाम: डॉ. महबूब आलम

शोध का शीर्षक: भू-रासायनिक और समस्थानिक दृष्टिकोण के माध्यम से पूर्वी अरब सागर में अंतिम मायोसीन की पुराजलवायु और पुरामहासागरीय पुनर्संरचना

पर्यवेक्षक: डॉ. गुरुमूर्ति जी पी, बी. सा. पु. सं., लखनऊ एवं डा. कोमल वर्मा, बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी

विभाग का नाम: भूविज्ञान विभाग

विश्वविद्यालय का नाम एवं वर्ष: बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी (2024)

सारांश

एशियाई मानसून का भूवैज्ञानिक विकास दीर्घकालिक और अल्पकालिक भूवैज्ञानिक समय पैमाने पर वैज्ञानिकों के बीच रुचि का विषय है क्योंकि मानसून ने पृथ्वी और वायुमंडलीय परिसंचरण के सह-विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। एशिया में ज्यादातर जनसंख्या कृषि पर निर्भर है जो आज एशियाई मानसून वर्षा और प्रारंभिक शहरी सभ्यता के उत्थान और पतन में इसकी भूमिका को नियंत्रित करती है। हिंद महासागर की जैव-भू-रसायन विज्ञान में मानसून की ऋतुकीयता और तीव्रता की भी महत्वपूर्ण भूमिका है। मानसून की ऋतुकीयता के माध्यम से पोषक तत्वों की उपलब्धता के कारण महासागरों में उत्पादकता बढ़ जाती है, जो हिंद महासागर में मध्यवर्ती गहराई वाले जल स्तंभ में ऑक्सीजन न्यूनतम क्षेत्र (OMZ) का कारण बनता है। ग्लोबल वार्मिंग के कारण आधुनिक उष्णकटिबंधीय महासागरों में ऑक्सीजन की कमी की तीव्रता और OMZ का विस्तार हो रहा है। आधुनिक-उष्णकटिबंधीय महासागरों में OMZ की बढ़ती चिंता के बावजूद, उष्णकटिबंधीय महासागरों में OMZ के सीमित रिकॉर्ड हैं। इस शोध प्रबंध में, पूर्वी अरब सागर में पुरामानसून और पुरारेडॉक्स स्थितियों का एक दीर्घकालिक निक्षेपीय रिकॉर्ड भूरसायन और समस्थानिकीय दृष्टिकोण के माध्यम से तैयार किया गया है ताकि मानसून विकास और अंतिम मायोसीन के बाद से महासागर डीऑक्सीजनेशन के बीच संभावित संबंध स्थापित किया जा सके। इस शोध प्रबंध में, भारतीय मानसून परिवर्तनशीलता के भूवैज्ञानिक विकास और पूर्वी अरब सागर में दीर्घकालिक (मिलियन वर्ष) और अल्पकालिक (सहस्राब्दी वर्ष) समय पैमाने पर रेडॉक्स स्थिति के साथ इसके संबंध को समझने के लिए पूर्वी अरब सागर (IODP साइट U1457 और SK362_AE2 कोर) से निक्षेपों का पर्यावरणीय चुंबकत्व, भू-रसायनिक और स्थिर समस्थानिकों का अध्ययन किया गया है।

IODP साइट U1457 में संरक्षित पर्यावरणीय चुंबकीय और भू-रासायनिक रिकॉर्ड ने पश्चिमी हिमालय के क्षरण के इतिहास और अंतिम मायोसीन के बाद से प्रचलित जलीय-जलवायु स्थितियों के साथ इसके संबंध में महत्वपूर्ण अंतर्दृष्टि प्रदान की है। परिणामों से पता चलता है कि 6.1 मिलियन वर्ष से 5.6 मिलियन वर्ष तक के आर्द्र अंतराल को छोड़कर, अंतिम मायोसीन के दौरान जलीय-जलवायवीय स्थितियाँ मुख्य रूप से शुष्क थीं। मध्य प्लायोसीन के दौरान सिंधु नदी द्रोणी में आर्द्र जलवायु की स्थिति वापस लौट आई और 1.9 मिलियन वर्ष से 1.2 मिलियन वर्ष तक तीव्र रासायनिक अपक्षय प्लेइस्टोसीन तक जारी रही। अंतिम मायोसीन और प्लायोसीन के दौरान साइट U1457 पर पूर्वोत्तर अरब सागर में प्रमुख तलछट स्रोत सिंधु नदी थी, जबकि प्लेइस्टोसीन के दौरान, सिंधु नदी और प्रायद्वीपीय भारतीय नदियों द्वारा लाई गई मिश्रित तलछट देखी गई। रासायनिक रूप से कम परिवर्तित मैफिक स्रोत (दक्कन बेसाल्ट) से तलछट का योगदान 1.2 Ma और 0.2 Ma के बीच बढ़ गया, जो संभवतः कमजोर

भारतीय ग्रीष्मकालीन मानसून से जुड़ा है। ग्रीष्मकालीन मानसून वायु की क्षमता और अंतर-उष्णकटिबंधीय अभिसरण क्षेत्र (ITCZ) में संबंधित बदलाव ने लक्ष्मी द्रोणी की साइट यू1457 पर प्रमुख तलछट उद्गम को प्रभावित किया।

रेडॉक्स संवेदनशील तत्व (Mo, W, U, V, Ba, Cd और P) और स्थिर मोलिब्डेनम (Mo) समस्थानिक (NIST SRM 3134 लॉट नंबर 130418 के सापेक्ष $\delta^{98/95}$Mo) और साथ ही स्थिर टंगस्टन (W) समस्थानिक ($\delta 1^{86/184}$ W NIST SRM 3163 लॉट नंबर 080331 के सापेक्ष) साइट यू1457 पर अवसाद की संरचना ने मायोसीन के अंत के बाद से उत्तरपूर्वी अरब सागर में जल स्तंभ की स्थिति को उजागर किया है। पूर्वोत्तर अरब सागर में IODP साइट U1457 पर तलछटी $\delta^{98/95}$Mo मान (−0.70‰ से 1.18‰) ने आंशिक ऑथिजेनिक Mo घटक का संकेत दिया। इसके विपरीत, अवसादी $\delta^{186/184}$W मान (−0.02‰ से 0.21‰) लिथोजेनस सामग्री के समान सीमा में हैं जो डेट्राइटल संरचना के प्रभुत्व का सुझाव देते हैं।दक्षिण-पूर्वी अरब (SK362_AE2 कोर) के उच्च रिज़ॉल्यूशन रेडॉक्स रिकॉर्ड से पता चलता है कि दक्षिण-पूर्वी अरब सागर में पिछले हिमनदी अधिकतम (LGM; 18.5-22.8 Ka) के दौरान जल स्तंभ की स्थिति एनोक्सिक से कम थी। दक्षिणपूर्वी अरब सागर में HS1 के दौरान पानी का स्तंभ मुख्य रूप से ऑक्सिक से लेकर एनोक्सिक स्थिति का है। दक्षिणपूर्वी अरब सागर में LGM के दौरान जल स्तंभ ऑक्सीजन की कमी बढ़े हुए अंटार्कटिक इंटरमीडिएट वॉटर (AIW) वेंटिलेशन के कारण हो सकती है। दक्षिणपूर्वी अरब सागर का जल स्तंभ डीग्लेशियल चरण (11.1-15 Ka) के दौरान ऑक्सीकृत होता है। प्रारंभिक होलोसीन के दौरान जब भारतीय मानसून तीव्र था तब जल स्तंभ की स्थिति अनॉक्सिक थी। यह अध्ययन दक्षिणपूर्वी अरब सागर में सहस्राब्दी वर्ष के समय पैमाने पर चतुर्थकमाहाकल्प के दौरान मानसून प्रेरित जल स्तंभ एनोक्सिक स्थिति का पहला साक्ष्य प्रदान करता है। यह अध्ययन बताता है कि पूर्वी अरब सागर में ऑक्सीजन न्यूनतम क्षेत्र (OMZ) अक्षांशीय रूप से भिन्न होता है और भारतीय मानसून द्वारा ऑक्सीजन की कमी का कारण अस्थायी और स्थानिक रूप से भिन्न होता है। इस अध्ययन से पता चलता है कि जलवायु परिवर्तनशीलता के कारण HS 1 और प्रारंभिक होलोसीन के दौरान समुद्र की सतह के तापमान में परिवर्तनशीलता अधिक थी। यह अध्ययन वर्णन करता है कि LGM के दौरान पहली वार्मिंग घटना मालाबार तट, दक्षिणपूर्वी अरब सागर में अरब सागर मिनी वार्म पूल घटना के कारण हो सकती है।

शोधकर्ता का नाम: डॉ. मसूद कौसर

शोध का शीर्षक: नियोजीन और चतुर्थकमहाकल्प के माध्यम से बंगाल फैन विकास: गहरे महासागर परिसंचरण, उत्पादकता और मानसूनी बदलाव

पर्यवेक्षक: डॉ. मनोज एम. सी., बी. सा. पु .सं एवं डॉ. माइकल वेबर, बॉन विश्वविद्यालय, जर्मनी

विश्वविद्यालय का नाम एवं वर्ष: वैज्ञानिक एवं नवोन्मेषी अनुसंधान अकादमी: बीरबल साहनी पुराविज्ञान संस्थान, लखनऊ (2024)

सारांश

इस शोध कार्य के अंतर्गत बंगाल की खाड़ी में अंतर्राष्ट्रीय महासागर खोज कार्यक्रम (IODP) अभियान 354 के U1451 और U1452 नामक दो स्थलों पर जमा बंगाल फैन निक्षेप का अध्ययन किया गया है। इस शोध कार्य में साइट U1452 पर उच्च-रिज़ॉल्यूशन पुरामहासागरीय पुनर्संरचना से पिछले 200 हजार साल के दौरान गहरे उत्तरी हिंद महासागर के भीतर व्यापक गहरे पानी के ज्यामिति में हिमनदीय - अंतरहिमनदीय परिवर्तन और उत्तरी अटलांटिक गहरे पानी और अंटार्कटिक गहरे पानी के परिवर्तनशील मिश्रण के अनुपात का पता चलता है। बंगाल की खाड़ी में गहरे अटलांटिक परिसंचरण की तीव्रता से

जुड़ा हुआ है और इसने पिछले हिमनद काल में वैश्विक शीतलन में योगदान दिया है। यह शोध कार्य मध्य मायोसीन (~12 मिलियन वर्ष) के बाद से बंगाल की खाड़ी और उत्तरी हिंद महासागर में गहरे और तलीय जल के संचलन की ताकत का एकमात्र दीर्घकालिक उद्विकासी रिकॉर्ड भी प्रस्तुत करता है। यह शोध वैश्विक गहरे पानी के संचलन पैटर्न के प्रमुख नियंत्रण कारक और अंतःसमुद्रीय गेट वे क्लोजर जैसे कि मध्य अमेरिकी समुद्री मार्गों, पनामा क्लोजर के साथ-साथ उत्तरी अटलांटिक द्रोणी टेक्टोनिक्स की प्रमुख भूमिका पर चर्चा करता है जो नियोजीन और चतुर्थकमहाकल्प के दौरान अटलांटिक ओवरटर्निंग कि क्षमता को नियंत्रित करता है। इसके अतिरिक्त, शोध में एक संख्यात्मक नमूना प्रस्तुत किया गया है जो अंतिम मायोसीन के बाद से सक्रिय और निष्क्रिय फ़ैन के विकास के संदर्भ में बंगाल की खाड़ी के भीतर गहरे बेंथिक बाउंड्री लेयर (BBL) में विभिन्न अपसारित तनाव व्यवस्था अर्थात् टर्बिड और पृष्ठभूमि परिचालन के बीच अंतर बताता है। प्रारम्भिक मायोसीन (18 मिलियन वर्ष) के बाद से निचले बंगाल फैन डिपॉजिट की भू-रासायनिक जांच से बंगाल की खाड़ी के पूर्वी भाग में हिमालय के कटाव, उत्खनन और बंगाल फैन के विकास के बारे में बहुत महत्वपूर्ण जानकारी मिलती है। रासायनिक अपक्षय तीव्रता के पुनर्निर्माण ने चतुर्थकमहाकल्प से नियोजीन के दौरान दक्षिण एशियाई मानसून परिवर्तनशीलता के उच्च-रिज़ॉल्यूशन रिकॉर्ड को प्रभावी ढंग से निरूपित किया है। भू-रासायनिक चिन्हक बंगाल फैन में स्थलीय सामग्री के उद्गम में बड़े बदलावों को इंगित करते हैं और मध्य - अंतिम मायोसीन के दौरान पूर्वी हिमालयी नदी प्रणाली के पुनर्गठन को भी प्रदर्शित करते हैं। भू-रासायनिक अन्वेषण से इस क्षेत्र में समकालीन मानसूनी और पुरासमुद्र विज्ञान स्थितियों के संदर्भ में समुद्री उत्पादकता की दीर्घकालिक परिवर्तनशीलता भी प्रदर्शित होती है।

शोधकर्ता का नाम: डॉ. काजल चंद्रा

शोध का शीर्षक: राजस्थान की पुराभूमध्यरेखीय स्थिति के दौरान प्रारम्भिक पेलिओजीन वन का विकास और विविधीकरण

पर्यवेक्षक: डॉ. अनुमेहा शुक्ला, बी. सा. पु. सं., लखनऊ एवं डॉ. अमित कुमार सिंह, लखनऊ विश्वविद्यालय

विभाग का नाम: वनस्पति विज्ञान विभाग

विश्वविद्यालय का नाम एवं वर्ष: लखनऊ विश्वविद्यालय, लखनऊ (2024)

सारांश

राजस्थान संस्कृति और परंपरा से भरपूर राज्य है लेकिन अगर हम इसकी वनस्पति पर नजर डालें तो यह एक रेगिस्तान भूमि है जहाँ काँटेदार वनस्पतियाँ बहुतायत में पाई जातीं हैं। परम्परा और इतिहास से परिपूर्ण इस राज्य की अधिकतर भूमि बंजर है जो की मुख्यतयः चट्टानों और रेतीली मिट्टी से ढकी है। यहां प्रति वर्ष मात्र 30-60 सेंटीमीटर ही वर्षा होती है। गर्म व शुष्क मौसम के चलते यहाँ मरुस्थलीय काँटेवाले वनस्पति अधिकता में पाए जाते है जबकि सदाबहार वनस्पति का अभाव बना रहता है, इसीलिए राजस्थान के हरित पक्ष की कल्पना करना काफी कठिन हो जाता है। इस अध्ययन का मुख्य उद्देश्य, (1) राजस्थान के पेलियोसीन-इओसीन अनुक्रमों के पुरावनस्पति इतिहास की पुनर्संरचना करना और (2) फायलोजेनेटिक (Phylogenetic) विधियों का उपयोग करते हुए आवृतबीजी फैमिली के विकास और विविधीकरण को समझना है। यह अध्ययन पूर्व ज्ञात साक्ष्यों के साथ वर्तमान अध्ययन में प्राप्त स्थूलजीवाश्म साक्ष्यों के आधार पर राजस्थान में प्रारम्भिक पेलियोजीन के आसपास पनप रही पुराविविधता की परिकल्पना करता है। इसके अतिरिक्त, यह शोध भारतीय उपमहाद्वीप से इन पेड़ पौधों के पर्याप्त स्थूलजीवाश्म

रिकॉर्ड के आधार पर, दो आवृतबीजी फैमिली डॉमबीयायडी (Dombeyoideae) और ऐनाकारडीऐसी (Anacardiaceae) के विकास के इतिहास पर भी प्रकाश डालता है।

पुरावनस्पति इतिहास का पुनर्निर्माण करने के लिए राजस्थान के पश्चिमी सीमांत प्रांत में स्थित गुड़ा भूरा-कोयला खदान, बीकानेर (पेलियोसीन - इओसीन युग, ~56 मिलियन वर्ष) से जीवाश्म एकत्रित किए गए हैं। ये जीवाश्म फल, पुष्प, पत्तियों और तनों आदि के छाप के रूप में गुड़ा भूरा-कोयला खदान से निकाले गए हैं। ये जीवाश्म, अतीत की जीवन शैली का प्रत्यक्ष प्रमाण होते हैं, इसीलिए पुरा काल में पाए जाने वाले वनस्पतियों का अध्ययन जीवाश्म अवशेष के आधार पर किया जा सकता है। इस अध्ययन में गुड़ा खदान से प्राप्त जीवाश्म मुख्यतः तीन नई अंजीर (Fig) की प्रजातियाँ, *स्वीटीनिया* (*Swietenia*) (मिलिऐसी), *डोम्बिया* (डोमबीयायडी) जैसे पौधों से समानता रखने वाले जीवाश्म पत्तियाँ, साथ ही साथ कई आवृतबीजी पुष्प भी पाए गए हैं। ये जीवाश्म साक्ष्य इस खदान से पहली बार दर्ज किए गए हैं। पत्तियों की आकृति विज्ञान, जैसे कि उनका आकार, शिराओं की रचना आदि प्रजातियों के स्तर पर अत्यधिक संरक्षित होने के कारण उनके पहचान का मूल आधार होती है, इसीलिए जीवाश्म को उनकी आकृति विज्ञान के आधार पर पहचाना जाता है। जीवाश्मों की पहचान के लिए इनकी तुलना विभिन्न जीवित समूह से, समान आकृति विज्ञान के आधार पर की जाती है। तत्पश्चात अत्यधिक समानता रखने वाले जीवित समूह को जीवाश्म का वर्तमान अनुरूप निर्धारित किया जाता है। राजस्थान में प्रारम्भिक पेलियोजीन के आसपास पनप रही पुराविविधता की परिकल्पना हेतु पूर्व ज्ञात साक्ष्यों के साथ वर्तमान अध्ययन में प्राप्त स्थूलजीवाश्म साक्ष्यों का अध्ययन किया गया हैं। गुड़ा खदान से प्राप्त प्रारम्भिक-पैलियोजीन जीवाश्म संयोजन विविध हैं, जिसमे सदाबहार पौधों से लेकर अर्ध-सदाबहार, कुछ पर्णपाती और अर्ध-शुष्क तत्व भी पाये गये हैं, किन्तु सदाबहार पौधों कि संख्या ज्यादा है। यह प्रारम्भिक-पैलियोजीन के आसपास बहुस्तरीय वन (multistratified forest) की उपस्थिति का संकेत देता है। गुड़ा भूरा-कोयला खदान से वर्णित जीवाश्मों के ज्यादातर वर्तमान अनुरूप पश्चिमी घाटी के उच्च वर्षा और आर्द्र परिस्थितियों से परिपूर्ण सदाबहार जंगलों में पाए जाते हैं। जीवाश्मों के अवशेष यह इंगित करते है कि प्रारंभिक पेलियोजीन की जलवायु पश्चिमी घाटी के जलवायु के समान थी, वर्तमान की तुलना में जहां राजस्थान में शुष्क एवं मरुस्थलीय स्थिति पाई जाती है। इसके अलावा, यह स्थूलजीवाश्म संयोजन उन प्रमुख जीवन रूपों के साथ अपनी समानता दर्शाता है जो वर्तमान में उष्णकटिबंधीय वर्षा वन में पाये जाते हैं।

इस प्रकार भारतीय जीवाश्म का विस्तृत अध्ययन पुरा-भूगोल वितरण और विकास का इतिहास के दृष्टिकोण से जरूरी है। इस अध्ययन में डोमबीयायडी के सबसे पुराने अवशेष पाए गए हैं। सबसे पुराने विश्वसनीय अवशेषों के समावेश के साथ फाइलोजेनेटिक अध्ययनों से पता चलता है कि डॉमबीयायडी की उत्पत्ति मध्य- क्रिटेशियस के आसपास गोंडवाना (मुख्य रूप से अफ्रीका में) में हुई थी, जिसका विविधता केंद्र मेडागास्कर में था। डॉमबीयायडी के पुराजैवभौगोलिक अध्ययन भारतीय उपमहाद्वीप की महत्वपूर्ण भूमिका पर प्रकाश डालते हैं, जो की यह दर्शाता है की कई एशियाई तत्त्व जिनकी उत्पत्ति एशिया से बाहर हुई है वह भारत के मध्य से होते हुए एशिया में पहुँचे हैं, अर्थात यह "आउट ऑफ इंडिया" प्रसार परिकल्पना का समर्थन करता है। विविधिकरण विश्लेषण से पता चलता है कि, डोमबीयायडी के भीतर उच्च विविधता के लिए, विविधीकरण दर में लगातार वृद्धि और विलोपन की कम दर जिम्मेदार है।

इसके अतिरिक्त भारतीय उपमहाद्वीप के क्रिटेशियस अवसादों से प्राप्त ऐनाकारडीऐसी के सबसे पुराने गोंडवानन अवशेष, इस फैमिली के गोंडवाना मूल की संभावना का सुझाव देते हैं। भारतीय उपमहाद्वीप के क्रिटेशियस और पैलियोसीन अवसादों से प्राप्त ऐनाकारडीऐसी जीवाश्म और इनके वर्तमान जैवभौगोलिक वितरण, इस धारणा का समर्थन करते हैं कि ऐनाकारडीऐसी की प्रारंभिक उत्पत्ति एवं विकिरण भारतीय प्लेट पर हुई होगी अथवा उपमहाद्वीप उनके प्रारंभिक विविधीकरण चरण के दौरान एक अभिन्न अंग रहा होगा।

शोधकर्ता का नाम: डॉ. सर्वेंद्र प्रताप सिंह

शोध का शीर्षक: दक्कन बेसाल्ट की चुंबकीय स्तरक्रम विज्ञान और मध्य भारत के कुछ हिस्सों में इससे संबंधित अंतःट्रापीय निक्षेपों का अवसाद विज्ञान

पर्यवेक्षक: डॉ. मोहम्मद आरिफ, बी. सा. पु. सं., लखनऊ एवं प्रो. अमिया शंकर नायक, बनारस हिंदू विश्वविद्यालय, वाराणसी

विभाग का नाम: भूविज्ञान विभाग

विश्वविद्यालय का नाम एवं वर्ष: बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी (2024).

सारांश

दक्कन ट्रैप दुनिया के सबसे बड़े महाद्वीपीय बाढ़ बेसाल्ट प्रांतों में से एक है जिसका निर्माण रीयूनियन हॉटस्पॉट पर भारतीय प्लेट के गुजरने के परिणामस्वरूप हुआ था। दक्कन का विशाल आग्नेय प्रांत (Large igneous province-LIP) दुनिया में सबसे प्रमुखता से अध्ययन किए गए LIP में से एक है, जो भारतीय उपमहाद्वीप के 5 लाख वर्ग किमी. के विशाल भौगोलिक विस्तार को दर्शाता है। क्रिटेशियस-पैलियोजीन (के-पीजी) समय के साथ इनके अस्थायी संयोग के कारण, दक्कन ज्वालामुखी या चिक्सलुब संघात या इन दोनों के संयोजन को के-पीजी सामूहिक विनाश के लिए संभावित ट्रिगर माना जाता है। पिछले कुछ दशकों के दौरान, बहु-विषयक अध्ययन व्यापक रूप से किए गए हैं जिन्होंने दक्कन ज्वालामुखी प्रांत की आयु, विस्थापन इतिहास, भू-रसायन विज्ञान और इओसीन पर्यावरण पर हमारी समझ को उन्नत किया है। हालाँकि, दो महत्वपूर्ण मुद्दे, इस सारे काम के बावजूद बने हुए हैं: (1) के-पीजी सामूहिक विलुप्ति के संबंध में ज्वालामुखी विस्फोट के समय को इंगित करना और (2) DVP के भीतर स्थलीय बनाम समुद्री इओसीन वातावरण का पुनर्निर्माण करना।

वर्तमान अध्ययन में मध्य भारत के मध्य प्रदेश राज्य ,के मंडला और मालवा उपप्रांत शामिल हैं। यहाँ से तीन अंतःट्रापीय खंडों का चयन किया गया है, जिसमें गुजरी-दुगनी और मोथी खंड मालवा उपप्रांत में और नर्मदा-ताप्ती दरार क्षेत्र मंडला उपप्रांत के गौमुख खंड में स्थित है । इस शोध का मुख्य उद्देश्य चुंबकीय स्तरिक दृष्टिकोण के माध्यम से मध्य भारत के दक्कन बेसाल्ट के कालक्रम को चिन्हित करना है जिससे दक्कन उपप्रांतों के भूगर्भिक इतिहास के सहसंबंध को बेहतर संदर्भ प्रदान किया जा सके और के-पीजी समय अंतराल में, मध्य भारत के अंतःट्रापीय अनुक्रमों की पुराजलवायु और पुरापर्यावरणीय स्थितियों का पूर्णनिर्धारण किया जा सके। चुंबकीय ध्रुवता स्तरिकी विकसित करने के लिए प्रत्येक खंड के बेसाल्टिक प्रांत का पुराचुंबकीय विश्लेषण किया गया है, और संबंधित अंतःट्रापीय निक्षेपों की जैव स्तरिक आयु निर्दिष्ट करने के लिए आयु सूचक परागाणुसंरूप का उपयोग किया गया है। इओसीन कालीन पुनर्निर्माण के लिए माइक्रोफेशीज़ विश्लेषण और अंतःट्रापीय निक्षेपों के पर्यावरणीय चुंबकत्व को प्रस्तुत किया गया है। परागाणु विज्ञान अंतरप्रांतीय निक्षेपों में परागाणुवनस्पति संरचना के आकलन में योगदान करती है जो आयु, निक्षेपण वातावरण और जलवायु परिस्थितियों को बताती है। जलवायु संबंधी व्याख्याओं के लिए मिट्टी के खनिज विज्ञान, प्रमुख ऑक्साइड का आकलन और अंतःट्रापीय निक्षेपों के प्रज्वलन पर होने वाले नुकसान का अध्ययन किया गया है।

गुजरी-दुगनी और मोथी खंडों से सबसे कम उम्र के मैग्नेटोक्रोन (C29n) की खोज से पता चलता है कि मालवा उपप्रांत में दक्कन ट्रैप की विस्फोट आयु का प्रतिनिधित्व करने वाले सभी तीन मैग्नेटोक्रोन (C30n, C29r और C29n) उपस्थित है। मालवा और मंडला उपप्रांत चुंबकीय स्तरिक रूप से सहसंबंधी हैं, जो संभवतः नर्मदा-ताप्ती दरार क्षेत्र के माध्यम से एक समकालिक विस्फोट का संकेत देते हैं। पश्चिमी घाट अनुक्रमों से C30n-C29r उत्क्रमण की सामान्य अनुपस्थिति इंगित करती है कि मंडला और मालवा उपप्रांतों का विस्फोट पश्चिमी घाट से पहले शुरू हुआ था। हालाँकि, सभी दक्कन उपप्रांतों में मैग्नेटोक्रोन C29r-C29n की सामान्य घटना का तात्पर्य है कि मंडला और मालवा उपप्रांतों में दक्कन ज्वालामुखी विस्फोट के मुख्य (C29r)

चरण के दौरान पश्चिमी घाट के साथ समकालिक विस्फोट हुये हैं।

पुरापर्यावरणीय विश्लेषण, मोथी और गौमुख खंडों के निक्षेपण के लिए मध्यम ऊर्जा वाली दलदली से लेकर उथली खारे झील जैसी स्थितियों रही होंगी। मोथी और गौमुख खंडों का स्थान नर्मदा-ताप्ती दरार क्षेत्र के सबसे पूर्वी छोर पर स्थित है, जो नर्मदा या गोदावरी दरार के गलियारों में से किसी एक के ओर से मध्य भारत में समुद्री विस्तार का सुझाव देता है। हालाँकि, गुजरी-दुगनी अंतःट्रापीय निक्षेपों के निक्षेपण के दौरान मीठे पानी के तालाब- झील जैसे वातावरण की उपस्थिति रही होगी, जिसके संकेत बाग और झिलमिली क्षेत्र से मिलते है। यह मैस्ट्रीशियन-डेनियन समय में नर्मदा दरार के माध्यम से मध्य भारत में समुद्री परिवेश का समर्थन नहीं करते है।

शोधकर्ता का नाम: डॉ. लोपामुद्रा रॉय

शोध का शीर्षक: उत्तर पुर्व भारतीय महासागर के अवसाद कोर से सूक्ष्मजीवाश्मिकी एवं भू-रासायनिक विश्लेषण का उपयोग करते हुए अंतिम मायोसीन से प्लेइस्टोसीन की पुराजलवायु पुनर्रचना

पर्यवेक्षक: डॉ. अमित कुमार घोष, बी. सा. पु. सं., लखनऊ एवं प्रो. सरजीत सेनशर्मा, भूविज्ञान विभाग, लखनऊ विश्वविद्यालय, लखनऊ

विभाग का नाम: भू-विज्ञान विभाग

विश्वविद्यालय का नाम एवं वर्ष: लखनऊ विश्वविद्यालय, लखनऊ (2024).

सारांश

शोध के अंतर्गत वर्तमान अध्ययन पूर्वोत्तर हिंद महासागर के NGHP अवसाद कोर (NGHP-01-17A) पर किया गया है। अंतिम मायोसीन से लेकर चतुर्थकमहाकल्प (प्लीस्टोसीन) के कैलशियम युक्त परासूक्ष्मजीवाश्म के साथ-साथ अंतिम मायोसीन के सिलिशियस सूक्ष्मजीवाश्म - डायटम, रेडिओलेरियन और सिलिकोफ्लैजलेट का विस्तृत विश्लेषण इस शोध का प्रमुख हिस्सा है। सहस्राब्दी पैमाने पर पुरापर्यावरण और पुराजलवायु के आकलन हेतु सूक्ष्मजीवाश्म के अध्ययन से प्राप्त डेटासेट को कोर से प्राप्त अवसाद के भू-रासायनिक आकड़ों के साथ जोड़ा गया है ।

विश्लेषित कोर के 684.09-220.37 mbsf (टोरटोनियन-मेसिनियन: 9.86 से 5.98 मिलियन वर्ष) तक सिलिसियस सूक्ष्मजीवाश्म मौजूद हैं; जबकि, इसी कोर में प्रत्येक भाग में अर्थात 684.09 - 0.03 mbsf (टोरटोनियन-प्लीस्टोसीन: 9.86 से < 0.29 मिलियन वर्ष) तक कैलकेरियस परासूक्ष्मजीवाश्म प्रचुर मात्रा में हैं। CONISS क्लस्टर विश्लेषण का उपयोग करके चार डायटम बायोज़ोन निर्धारित किए गए हैं। यह अध्ययन कोर के 684.09-227.51 mbsf गहराई में अंतिम मायोसीन (टोरटोनियन-मेसिनियन: 9.86- 6.07 मिलियन वर्ष) डायटम समुच्चयों पर पहला व्यापक विवरण है और अनुक्रम की सटीक आयु निर्धारित करने के लिए रेडिओलेरियन और कैलकेरियस परासूक्ष्मजीवाश्म बायोज़ोन के साथ एकीकृत है। सूचक रेडिओलेरियन टैक्सा पर आधारित ज़ोन (RN6-RN9) की रेडिओलेरियन जैवस्तरिकी भी विश्लेषण किए गए कोर के 684.09-220.37 mbsf गहराई पर अंतिम मायोसीन (टोरटोनियन-मेसिनियन: 9.86-5.98 मिलियन वर्ष) आयु का संकेत देती है। पूर्वोत्तर हिंद महासागर के उपतटीय से अंतिम मायोसीन (टोरटोनियन: 9.86-7.39 मिलियन वर्ष) से सिलिकोफ्लैजलेट जैवस्तरिकी के पहले अभिलेख दो आंशिक रेंज जोन- *डिक्टियोचा वेरिया* और *डी. एक्स्टेंसा* का तथा आंशिक रेंज जोन - *डी. वेरिया* में *बैकमैनोसेना एलिप्टिका* सबज़ोन का खुलासा करते हैं।

एक उच्च विभेदन कैलकेरियस परासूक्ष्मजीवाश्म जैवस्तरिकी बायोस्ट्रेटीग्राफी से CNM13-CNPL11 मंडलों के अनुरूप NN9-NN21 मंडलों की सूचक प्रजातियों द्वारा दर्शाए गए कैलकेरियस परासूक्ष्मजीवाश्म समुच्चयों का पता चलता है, जो अंतिम मायोसीन से प्लेइस्टोसीन (9.86-<0.29 मिलियन वर्ष) तक की आयु का संकेत देते हैं। डायटम टैक्सा की विविधता और प्रभुत्व का मात्रात्मक अनुमान लगाने के लिए उनकी विविधता का विश्लेषण किया गया है। पानी की गहराई का मूल्यांकन करने के लिए डायटम के प्लैंकटिक/बेंथिक अनुपात और रेडिओलेरियन के नेसेलेरियन/स्पुमेलेरियन अनुपात की गणना की गई है। यह प्लैंक्टिक डायटम्स और नेसेलेरियन रेडिओलेरियन्स के पर्याप्त प्रभुत्व को प्रकट करता है जो समग्र गहरे पानी के वातावरण को इंगित करता है। सिलिकोफ्लैजलेट टैक्सा में दोहरे कंकालों के जीवाश्म रिकॉर्ड दुर्लभ हैं; हालाँकि, यह अध्ययन तीन सिलिकोफ्लैजलेट टैक्सा यानी *डिक्टियोचा कैलिडा, डी. फिबुला* उप-प्रजाति *ऑसोनिया* और *स्टेफानोचा स्पेकुलम* (6-पक्षीय) में दोहरे कंकालों का दस्तावेजीकरण करता है। दोनों प्रजातियों के सभी टैक्सों की संयुक्त प्रचुरता के आधार पर *डिक्टियोचा* और *स्टेफानोचा* के अनुपात से पता चलता है कि अध्ययन किए गए अनुक्रम में *स्टेफानोचा* पर *डिक्टियोचा* का पर्याप्त प्रभुत्व था। *डिक्टियोचा /स्टेफ़ानोचा* पुरातापमान प्रॉक्सी टोरटोनियन (9.86 से 7.39 मिलियन वर्ष) के दौरान गर्म जलवायु की व्यापकता को इंगित करता है, जिसमें 8.104 मिलियन वर्ष - 8.088 मिलियन वर्षके दौरान *बैकमैनोसेना एलिप्टिका* सबज़ोन में न्यूनतम शीतलन अवस्था देखने को मिली जो पोषक तत्वों से भरपूर स्थिति और उच्च अवसादन दर से मेल खाती है।

अवसादन दर का अनुमान लगाने के लिए इंडेक्स डायटम, रेडिओलेरियन और कैलकेरियस परासूक्ष्मजीवाश्म का उपयोग करके एक आयु-गहराई मॉडल प्रस्तावित किया गया है जो पूर्वोत्तर हिंद महासागर में मायोसीन के अंत के दौरान बहुत उच्च अवसादन दर ~ 136 m/Ma का संकेत देता है। वर्तमान अध्ययन के सभी सूक्ष्म जीवाश्म संयोजनों को DSDP, ODP, IODP अभियानों और हिंद महासागर के साथ-साथ भूमध्यरेखीय प्रशांत महासागर के तटवर्ती अवसादों को अंतिम मायोसीन से प्लेइस्टोसीन के ज्ञात संयोजनों के साथ सहसंबद्ध किया गया है। नमूनों में REE सहित प्रमुख और ट्रेस तत्व कई भूखंडों पर नियमित रूप से सुसंगत पैटर्न और अनुपात दिखाते हैं। इन सभी कथानकों और पैटर्नों से संकेत मिलता है कि नमूनों में कोई महत्वपूर्ण परिवर्तन या द्वितीयक प्रभाव नहीं पड़ा है। प्रमुख ($TiO2$, Fe_2O_3, Al_2O_3, P_2O_5, K_2O, MgO) और ट्रेस तत्व (Ni, Cr, Co, Sc, Th, Zr) अवसाद में पारस्परिक सकारात्मक संबंध रखते हैं, और ये तत्व विशिष्ट संरचना के साथ उल्लेखनीय रूप से लगभग 300-350 mbsf (टोर्टोनियन-मेसिनियन सीमा के पास) और ~ 200 mbsf (मेसिनियन और प्लियो- प्लेइस्टोसीन सीमा के पास) पर समान सांद्रता पैटर्न, तथा प्रमुख सूक्ष्मजीवाश्मिकीय घटनाओं के अनुरूप समान गहराई पर उतार-चढ़ाव दिखाते हैं।

शोधकर्ता का नाम: डॉ. हर्षिता भाटिया

शोध का शीर्षक: मानसूनी जलवायु का आगमन तथा दक्षिण एशिया में सदाबहार वनों का विकास: पूर्वोत्तर भारत की ओलिगोसीन वनस्पतियों से प्राप्त साक्ष्य

पर्यवेक्षक: डॉ. गौरव श्रीवास्तव, बी. सा. पु. सं., लखनऊ

विश्वविद्यालय का नाम एवं वर्ष: वैज्ञानिक एवं नवोन्मेषी अनुसंधान अकादमी: बी. सा. पु. सं., लखनऊ (2024)

सारांश

उष्णकटिबंधीय सदाबहार वनों को "पृथ्वी के फेफड़े" माना जाता है, जिसमें एक अद्वितीय पारिस्थितिकी तंत्र है, जो नीओट्रोपिक्स, ऐफ्रोट्रोपिक्स और एशिया प्रशांत क्षेत्रों में प्रतिबंधित है, जो दुनिया की स्थलीय प्रजातियों के आधे अंश को आश्रय प्रदान करता है। इन वनों के विकास के इतिहास को समझना, उनके संरक्षण व भावी अस्तित्व हेतु महत्वपूर्ण है। नीओट्रोपिक्स वनों हेतु व्यापक काम किया गया है, हालांकि, ऐफ्रोट्रोपिक्स और एशिया प्रशांत क्षेत्रों के आँकड़े अभी भी कम हैं। एशिया प्रशांत क्षेत्र में ये वन भारत, चीन, श्रीलंका, म्यांमार और सुंडालैंड के क्षेत्रों में व्याप्त हैं। दक्षिण एशिया में सदाबहार वन मुख्य रूप से पश्चिमी घाट और पूर्वोत्तर भारत में हैं। ये ऋतुनिष्ठ वन हैं और भारतीय ग्रीष्मकालीन मानसून (ISM) या दक्षिण एशिया मानसून (SAM) से प्रभावित हैं। इन सदाबहार वनों के विकासात्मक इतिहास की समझ तथा अतीत में ISM के साथ उनके संबंध अभी भी स्पष्ट नहीं है। इस शोध रिक्तता को पूर्ण करने हेतु यह अध्ययन किया गया है जो की आवश्यक है। वर्तमान शोध स्थूलजीवाश्मों (पत्तियों और फलों) पर आधारित है, जो मकुम कोयलाक्षेत्र, तनसुकिया ज़िला, असम से, अवसाद उत्खनन के दौरान प्राप्त किए गए हैं। मकुम कोयलाक्षेत्र के अवसाद टिकाक पर्वत गठन से संबंधित हैं, इसे जैवस्तरिकी और अश्मस्तरिकी के आधार पर अंतिम ओलिगोसीन माना जाता है। कार्यप्रणाली में वनस्पति और जलवायु का गुणात्मक एवं मात्रात्मक विश्लेषण सन्निहित है।

वर्तमान अध्ययन में भारत के ओलिगोसीन से 18 नूतन जेनेरा और दो नूतन उष्णकटिबंधीय पादप परिवारों की खोज की गई है। नूतन अन्वेषित पादप-परिवार मोरेसी और पांडानेसी हैं। समस्त जीवाश्मों के NLR आजकल पश्चिमी घाट, पूर्वोत्तर भारत और दक्षिण पूर्व एशिया के सदाबहार वनों में उग रहे हैं। पहले से ज्ञात जीवाश्मों के साथ नूतन टैक्सा और पादप-परिवारों को सम्मिलित कर कुल टैक्सा की संख्या 101 तक वर्धित की गयी, जो 26 पादप-परिवारों से संबंधित है। मकुम कोयला क्षेत्र से उत्खनित किए गए कुछ महत्वपूर्ण पादप परिवार: एनाकार्डिएसी, एनोनेसी, एपोसिनेसी, एरेकेसी, एस्टेरेसी, एविसेनियासी/एकैंथेसी, बरसेरेसी, कैलोफिलेसी, क्लूसियासी, कॉम्ब्रेटेसी, इक्विसेटेसी, फैबेसी, लॉरेसी, लेसिथिडेसी, लिथ्रेसी, मालवेसी, मेलियासी, मेमेसिलेसी, मोरेसी, मिरिस्टिकेसी, पांडानेसी, फिलान्थेसी, पोएसी, पोडोकार्पेसी, राइजोफोरेसी और सैपिन्डेसी है। पादपी समुच्चय का गुणात्मक विश्लेषण स्थूलतापीय पादप-परिवारों और टैक्सा की प्रभुत्वता का सुझाव देता है। पादपी समुच्चय का मात्रात्मक विश्लेषण उष्णकटिबंधीय सदाबहार वनों (48%), उष्णकटिबंधीय सदाबहार- पर्णपाती वनों (31%) और उष्णकटिबंधीय आर्द्र पर्णपाती वनों (12%) की प्रभुत्वता दर्शाता है।

सीए (CA) और क्लैम्प (CLAMP) विश्लेषण के आधार पर जलवायु की मात्रात्मक पुनर्संरचना से पता चलता है कि शीत माह का औसत तापमान 18 डिग्री सेल्सियस से अधिक था और वार्षिक वर्षा 200 सेमी से अधिक थी। क्लैंप विश्लेषण से पता चलता है कि आईएसएम (ISM) या उसके समान कोई कारक अंतिम ओलिगोसीन अवसादों के निक्षेपण के दौरान विद्यमान थी।

शोधकर्ता का नाम: डॉ. सचिन कुमार

शोध का शीर्षक: पूर्वोत्तर भारत में अहोम के प्रारंभिक प्रवास का पता लगाने हेतु पुराजीनोमिक्स और स्थिर समस्थानिक दृष्टिकोण

पर्यवेक्षक: डॉ. नीरज राय, बी. सा. पु. सं., लखनऊ और डॉ. मानसा राघवन, सहायक प्रोफेसर, शिकागो विश्वविद्यालय, संयुक्त राज्य अमेरिका

विश्वविद्यालय का नाम एवं वर्ष: वैज्ञानिक एवं नवोन्मेषी अनुसंधान अकादमी: बी. सा. पु. सं., लखनऊ (2024)

सारांश

अंतिम प्लेइस्टोसीन के बाद से, भारत के उत्तरपूर्वी क्षेत्र को एक चैनल माना जाता है जिसका पूरे एशिया में आधुनिक मानव फैलाव में योगदान है। विभिन्न इतिहासकारों और आनुवंशिकीविदों के अनुसार, पूर्वोत्तर भारत का इतिहास विभिन्न समुदायों के लोगों के प्रवास और विस्थापन की कहानी है है। प्रवासन की सबसे प्रलेखित लहर में से एक में अहोम का शामिल होना उल्लेखनीय है। वर्तमान अध्ययन में, राजोचित शवाधान तथा प्राचीन अहोम व्यक्तियों की संख्या और आधुनिक अहोम वंशजों के साथ उनके आनुवंशिक संबंध के संदर्भ में, आहार और आनुवंशिक प्रतिरूप को समझने के लिए स्थिर समस्थानिक और आनुवंशिक विश्लेषण किया गया है। कोलेजन से औसत ^{13}C (-21.6±1.0‰) और $\delta^{15}N$ (10.6±1.7‰) मानों से पता चलता है कि प्राचीन राजोचित अहोम व्यक्तियों का आहार पैटर्न मिश्रित था और वे संभावित रूप से उपभोग किए जाने वाले स्रोत स्थलीय प्रोटीन थे। $\delta^{13}C$ और $\delta^{18}O$ के औसत मान - 12.0±1.8‰ और -6.5±0.8‰ थे जोकि गंगा-ब्रह्मपुत्र द्रोणी, तिब्बत और म्यांमार के व्यापक समस्थानिक मान में परिलक्षित हुए। प्राचीन अहोम में मातृ वंश के विभिन्न स्रोत, जैसे माइटोकॉन्ड्रियल हापलोग्रुप A21, M30, B5a1, और F1b1, दर्शाते हैं कि यद्यपि वे पूर्व/दक्षिण पूर्व एशिया से प्रवासित होंगे और संभवतः इस क्षेत्र में उनके प्रवास के बाद वे उत्तरपूर्वी भारत में स्थानीय आबादी के साथ मिश्रित हो गए होंगे। हालाँकि, एक व्यक्ति का पैतृक वंश (Y chromosome haplogroup O1a1) दक्षिण पूर्व एशिया और पूर्वी एशिया में पैतृक उत्पत्ति को दर्शाता है। प्राचीन अहोम का ऑटोसोमल आनुवंशिक वंश दक्षिण पूर्व एशिया और पूर्वी एशिया से है। वही दूसरी ओर, आधुनिक अहोम आबादी में भारतीय स्थानीय व तिब्बती-बर्मन समुदायों की आनुवंशिक वंशावली का मिश्रण है।

हिन्दी के प्रयोग के लिए वर्ष 2024-25 का वार्षिक कार्यक्रम

क्र.सं.	कार्य विवरण	क क्षेत्र	ख क्षेत्र	ग क्षेत्र
1	हिंदी में मूल पत्राचार (ई-मेल सहित)	1.क क्षेत्र से क क्षेत्र को 100% 2.क क्षेत्र से ख क्षेत्र को 100 % 3. क क्षेत्र से ग क्षेत्र को 65 % 4. क क्षेत्र से क व ख क्षेत्र को 100 % के राज्य/ संघ राज्य क्षेत्र के कार्यालय/व्यक्ति	1.ख क्षेत्र से क क्षेत्र को 90 % 2. ख क्षेत्र से ख क्षेत्र को 90% 3. ख क्षेत्र से ग क्षेत्र को 55% 4. ख क्षेत्र से क व ख क्षेत्र को 90% के राज्य/ संघ राज्य क्षेत्र के कार्यालय/व्यक्ति	1. ग क्षेत्र से क क्षेत्र को 55 % 2. ग क्षेत्र से ख क्षेत्र को 55 % 3. ग क्षेत्र से ग क्षेत्र को 55 % 4. ग क्षेत्र से क व ख क्षेत्र को 55 % के राज्य/ संघ राज्य क्षेत्र के कार्यालय/व्यक्ति
2	हिंदी में प्राप्त पत्रों का उत्तर हिंदी में दिया जाना	100 %	100 %	100 %
3	हिंदी में टिप्पण	75%	50%	30%
4	हिंदी माध्यम से प्रशिक्षण कार्यक्रम	70%	60%	30%
5	हिंदी टंकण करने वाले कर्मचारी एवं आशुलिपिक की भर्ती	80%	70%	40%
6	हिंदी में डिक्टेशन/की बोर्ड पर सीधे टंकण (स्वयं तथा सहायक द्वारा)	65%	55%	30%
7	हिंदी प्रशिक्षण (भाषा, टंकण, आशुलिपि)	100 %	100 %	100 %
8	द्विभाषी प्रशिक्षण सामग्री तैयार करना	100 %	100 %	100 %
9	जर्नल और मानक संदर्भ पुस्तकों को छोड़कर पुस्तकालय के कुल अनुदान में से डिजिटल सामग्री अथार्त हिंदी ई-पुस्तक, सीडी/डीवीडी,पैनड्राइव तथा अँग्रेजी और क्षेत्रीय भाषाओं से हिंदी में अनुवाद पर व्यय की गयी राशि सहित हिंदी पुस्तकों की खरीद पर किया गया व्यय	50%	50%	50%

10	हिंदी और अंग्रेज़ी दोनों भाषाओं में काम करने की सुविधायुक्त इलेक्ट्रोनिक उपकरणों जिनमें कंप्यूटर भी शामिल है, की खरीद	100 %	100 %	100 %
11	वेबसाइट द्विभाषी हो	100 %	100 %	100 %
12	नागरिक चार्टर तथा जन सूचना बोर्ड आदि द्विभाषी रूप में प्रदर्शित किए जाएं।	100 %	100 %	100 %
13	(i) मंत्रालयों/विभागों और कार्यालयों के अधिकारियों (उ.स/निदे./सं.स) तथा राजभाषा विभाग के अधिकारियों द्वारा अपने मुख्यालय से बाहर स्थित कार्यालयों का निरीक्षण (कार्यालयों का प्रतिशत)	25% (न्यूनतम)	25% (न्यूनतम)	25% (न्यूनतम)
	(ii) मुख्यालय में स्थित अनुभागों का निरीक्षण	25% (न्यूनतम)	25% (न्यूनतम)	25% (न्यूनतम)
	(iii) विदेश में स्थित केंद्र सरकार के स्वामित्व एवं नियंत्रण के अधीन कार्यालयों/उपक्रमों का संबंधित अधिकारियों तथा राजभाषा विभाग के अधिकारियों द्वारा संयुक्त निरीक्षण	वर्ष में कम से कम एक निरीक्षण		
14	राजभाषा संबंधी बैठकें (क) हिंदी सलाहकार समिति (ख) नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति (ग) राजभाषा कार्यान्वयन समिति	 वर्ष में 2 बैठकें वर्ष में 2 बैठकें(प्रति छमाही एक बैठक) वर्ष में 4 बैठकें (प्रति तिमाही एक बैठक)		
15	कोड, मैनुअल, फार्म, प्रक्रिया साहित्य का हिंदी अनुवाद	100 %	100 %	100 %
16	मंत्रालयों/विभागों/ कार्यालयों/बैंक/उपक्रमों के एसे अनुभाग जहां संपूर्ण कार्य हिंदी में हो।	40%	30%	20%

श्रद्धांजलि

डॉ. राजेश अग्निहोत्री और बीरबल साहनी पुराविज्ञान संस्थान में एएमएस (AMS) सुविधा का उनका सपना

डॉ. राजेश अग्निहोत्री जी! जैसे आज भी हमारे बीच ही है। एक प्रतिभाशाली व्यक्ति जिन्हे छोटी उम्र से ही, ब्रह्मांड के रहस्यों और इसके विशाल विस्तार में छिपे रहस्यों से मोह था। उनकी जिज्ञासा ने उन्हें वैज्ञानिक मार्ग पर अग्रसर किया।

डॉ. राजेश अग्निहोत्री, एक प्रसिद्ध भू-पर्यावरणविद्, समुद्री-भूरसायनज्ञ, भू-पुरातत्वविद् हैं, उन्होंने राष्ट्रीय भौतिक प्रयोगशाला, नई दिल्ली में आइसोटोपिक लक्षण वर्णन प्रयोगशाला और बीरबल साहनी पुराविज्ञान संस्थान, लखनऊ (यूपी) में रेडियोक्रोनोलॉजी और आइसोटोपिक लक्षण वर्णन प्रयोगशाला की स्थापना की है। अपने शोध जीवन के प्रारंभिक कैरियर के दौरान उन्होंने मैक्स प्लैंक इंस्टीट्यूट फॉर केमिस्ट्री, मेनज़, जर्मनी; मैसाचुसेट्स डार्टमाउथ, यूएसए विश्वविद्यालय; सीएसआईआर-राष्ट्रीय समुद्र विज्ञान संस्थान, गोवा, भारत; सीएसआईआर-राष्ट्रीय भौतिक प्रयोगशाला, नई दिल्ली जैसे राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय संस्थानों में सेवा की। उनका अंतिम कार्य क्षेत्र बीरबल साहनी पुराविज्ञान संस्थान, लखनऊ रहा जहां सेवा करते हुए 17 जनवरी, 2023 को ब्लड कैंसर के कारण उनकी सांसें थम गईं।

डॉ. राजेश अग्निहोत्री एक दूरदर्शी शोधकर्ता थे जिन्होंने अपना जीवन पृथ्वी की भूमि, वायुमंडल और महासागरों की जटिल अंतःक्रियाओं की खोज के लिए समर्पित कर दिया। समस्थानिक और भू-रासायनिक अनुरेखकों की गहरी समझ के साथ, उन्होंने विभिन्न पर्यावरणीय क्षेत्रों में जलवायु परिवर्तन के रहस्यों को सुलझाने के लिए नवीन दृष्टिकोणों का बीड़ा उठाया।

अपने शानदार करियर के दौरान डॉ. अग्निहोत्री ने विविध पर्यावरणीय भंडारों में समस्थानिक साक्ष्यों और भू-रासायनिक मार्करों का विश्लेषण करने के लिए अत्याधुनिक तकनीकों का उपयोग किया। समुद्र तल की गहराई से लेकर पर्वत श्रृंखलाओं की चोटियों तक, उन्होंने जलवायु परिवर्तन की जटिल अभिव्यक्तियों और स्थलीय और समुद्री पारिस्थितिक तंत्र पर इसके प्रभावों को समझने की कोशिश की। सहस्राब्दियों से जलवायु परिवर्तन की गतिशीलता को समझने की अपनी खोज में, डॉ. अग्निहोत्री ने प्राचीन तलछट की परतों के भीतर अंतर्निहित समस्थानिक अनुपात, मौलिक रचनाओं और अन्य रासायनिक हस्ताक्षरों की जांच करते हुए, तलछट कोर का सावधानीपूर्वक विश्लेषण किया। अपनी कठोर जांच के माध्यम से, उन्होंने पुराजलवायु विविधताओं, पारिस्थितिकी तंत्र की गतिशीलता और मानव-पर्यावरण संबंधों में अमूल्य अंतर्दृष्टि का पता लगाया।

अंतःविषय सहयोग के एक उत्साही समर्थक के रूप में, डॉ. अग्निहोत्री ने साथी शोधकर्ताओं को पृथ्वी प्रणाली विज्ञान, पुरातत्व और जलवायु परिवर्तन के अंतर्संबंधों का पता लगाने के लिए प्रेरित किया। उनके काम ने कई पर्यावरणीय क्षेत्रों में समस्थानिक और भू-रासायनिक दृष्टिकोण को एकीकृत करने की विलक्षण क्षमता का उदाहरण दिया, जिससे हमारे ग्रह की जटिल और गतिशील प्रणालियों की अधिक समग्र समझ का मार्ग प्रशस्त हुआ। जैसे-जैसे वह अपने अध्ययन में गहराई से उतरते गए, राजेश रेडियोकार्बन डेटिंग की अवधारणा से मोहित हो गए जोकि कार्बनिक पदार्थों की आयु निर्धारित करने के लिए इस्तेमाल की जाने वाली एक अभूतपूर्व तकनीक है। मानव इतिहास की हमारी समझ में क्रांति लाने की इसकी क्षमता को पहचानते हुए, राजेश ने इस नवीन पद्धति में महारत हासिल करने के लिए खुद को पूरे दिल से समर्पित कर दिया।

उन्होंने रेडियोकार्बन डेटिंग प्रयोगशाला (1974) की राष्ट्रीय सुविधा को रेडियोक्रोनोलॉजी और आइसोटोपिक लक्षण वर्णन प्रयोगशाला को उन्नत किया। जिसमें उन्होंने एएमएस रेडियोकार्बन डेटिंग और कार्बन, नाइट्रोजन और सल्फर के लिए स्थिर समस्थानिक अनुपात माप सुविधा के लिए सेटअप की शुरुआत की, जिसका उपयोग पूरे भारत में राष्ट्रीय सुविधा के रूप में किया जा रहा है।

रेडियोकार्बन डेटिंग के लिए एएमएस तकनीक की शुरुआत करके और कार्बन, नाइट्रोजन और सल्फर के समस्थानिक लक्षण वर्णन को शामिल करने के लिए प्रयोगशाला की क्षमताओं का विस्तार करके, डॉ. अग्निहोत्री ने भारत को इस क्षेत्र में वैज्ञानिक अनुसंधान में सबसे आगे रखा। उन्होंने जो सुविधा विकसित की वह एक राष्ट्रीय धरोहर बन गई है, जो देश भर के शोधकर्ताओं और पुरातत्वविदों के लिए एक महत्वपूर्ण संसाधन के रूप में काम कर रही है।

हाल के वर्षों में, डॉ. अग्निहोत्री ने भारतीय पुरातत्व सर्वेक्षण (एएसआई) की इकाइयों के साथ मिलकर पुरातात्विक स्थलों पर महत्वपूर्ण काम किया था। वडनगर, सिनौली, विदर्भ और कुणाल जैसी साइटें डॉ. अग्निहोत्री की जांच के केंद्र बिंदु बन गईं, जहां उन्होंने अतीत के रहस्यों को जानने के लिए उन्नत वैज्ञानिक तकनीकों का इस्तेमाल किया। एएसआई के साथ डॉ. अग्निहोत्री के सहयोगात्मक प्रयासों ने पुरातत्वविदों, वैज्ञानिकों और इतिहासकारों की विशेषज्ञता को एक साथ लाया, अंतःविषय संवाद को बढ़ावा दिया और भारत की समृद्ध सांस्कृतिक विरासत के बारे में हमारी समझ को समृद्ध किया। उनका काम न केवल अतीत पर प्रकाश डालता है बल्कि जलवायु परिवर्तन, सतत विकास और सांस्कृतिक संरक्षण जैसी समकालीन चुनौतियों से निपटने के लिए मूल्यवान दृष्टिकोण भी प्रदान करता है।

अंतःविषय सहयोग

डॉ. अग्निहोत्री ने माना कि एएमएस सुविधा विभिन्न वैज्ञानिक विषयों के बीच सहयोग के लिए एक कड़ी के रूप में काम कर सकती है। पुरातत्व, भूविज्ञान, जीव विज्ञान, पर्यावरण विज्ञान और अन्य क्षेत्रों के विशेषज्ञों को एक साथ लाकर, यह सुविधा विचारों और पद्धतियों के अंतःपरिसंचरण को बढ़ावा देगी, जिससे इन क्षेत्रों पर अभूतपूर्व खोजें होंगी।

क्षमता निर्माण और शिक्षा

डॉ. अग्निहोत्री को वैज्ञानिकों और शोधकर्ताओं की अगली पीढ़ी को प्रशिक्षित करने का शौक था। उन्होंने एएमएस सुविधा को न केवल अत्याधुनिक अनुसंधान के केंद्र के रूप में देखा, बल्कि इच्छुक वैज्ञानिकों के लिए एक प्रशिक्षण के क्षेत्र के रूप में भी देखा। उनके मानना था कि कार्यशालाओं, सेमिनारों और सहयोगी परियोजनाओं के माध्यम से, यह सुविधा युवा शोधकर्ताओं को रेडियोजेनिक आइसोटोपिक माप की शक्ति का उपयोग करने और अपने संबंधित क्षेत्रों में नवाचार को बढ़ावा देने के लिए सशक्त बनाएगी।

अंतर्राष्ट्रीय सहयोग और आदान-प्रदान

वैज्ञानिक जांच की वैश्विक प्रकृति को पहचानते हुए, डॉ. अग्निहोत्री ने दुनिया भर के अग्रणी संस्थानों और शोधकर्ताओं के साथ साझेदारी स्थापित करने का लक्ष्य रखा जो अंतर्राष्ट्रीय सहयोग और विनिमय कार्यक्रमों को सुविधाजनक बनाकर, एएमएस सुविधा बीएसआईपी में वैज्ञानिक समुदाय को समृद्ध करेगी, खुलेपन, विविधता और नवीनता की संस्कृति को बढ़ावा देगी।

वैश्विक मान्यता

डॉ. अग्निहोत्री ने यह माना कि अपनी अत्याधुनिक एएमएस सुविधा के साथ, बीएसआईपी वैश्विक मंच पर रेडियोजेनिक आइसोटोपिक माप में उत्कृष्टता का प्रतीक बन जाएगा। दुनिया भर के शोधकर्ता इसके अत्याधुनिक बुनियादी ढांचे और विशेषज्ञता तक पहुंचने के लिए बीएसआईपी की ओर आकर्षित होंगे, जिससे अंतरराष्ट्रीय सहयोग, साझेदारी और मान्यता बढ़ेगी। संस्थान को वैज्ञानिक प्रकाशनों, सम्मेलनों और मीडिया आउटलेट्स में प्रमुखता से दिखाया जाएगा, जिससे क्षेत्र में अग्रणी के रूप में इसकी प्रतिष्ठा मजबूत होगी।

उच्च गुणवत्ता वाले अनुसंधान प्रकाशन

उनके अनुसार, एएमएस सुविधा बीएसआईपी शोधकर्ताओं को विभिन्न विषयों में अभूतपूर्व अनुसंधान करने में सक्षम बनाएगी, जिससे प्रतिष्ठित वैज्ञानिक पत्रिकाओं में उच्च गुणवत्ता वाले प्रकाशनों में वृद्धि होगी। सुविधा की उन्नत क्षमताओं का लाभ उठाकर, शोधकर्ता दूरगामी प्रभाव वाले नवीन अध्ययन तैयार करेंगे, जिससे वैज्ञानिक समुदाय में बीएसआईपी की प्रतिष्ठा और प्रभाव में और वृद्धि होगी।

राजस्व सृजन

डॉ. अग्निहोत्री ने विभिन्न तरीकों से राजस्व उत्पन्न करने के लिए एएमएस सुविधा की क्षमता को पहचाना। संस्थान अपनी सुविधाओं और विशेषज्ञता तक पहुंच चाहने वाले बाहरी शोधकर्ताओं और संगठनों को शुल्क-आधारित सेवाएं प्रदान कर सकता है। इसके अतिरिक्त, बीएसआईपी आय का एक स्थिर प्रवाह प्रदान करते हुए अनुसंधान परियोजनाओं, प्रौद्योगिकी हस्तांतरण

और परामर्श सेवाओं के साथ सहयोग कर सकता है। इसके अलावा, इसकी एएमएस सुविधा के परिणामस्वरूप बीएसआईपी की बढ़ी हुई दृश्यता और प्रतिष्ठा सरकारी अनुदान, प्रयोजनदाताओं और अनुसंधान अनुबंधों से धन आकर्षित कर सकती है, जिससे संस्थान की वित्तीय स्थिरता को और बढ़ावा मिलेगा।

प्रौद्योगिकी हस्तांतरण और नवाचार

एएमएस सुविधान केवल अत्याधुनिक अनुसंधान की सुविधा प्रदान करेगी बल्कि प्रौद्योगिकी हस्तांतरण और नवाचार के केंद्र के रूप में भी काम करेगी। बीएसआईपी शोधकर्ता पर्यावरण निगरानी, संसाधन अन्वेषण और चिकित्सा निदान जैसे क्षेत्रों में रेडियोजेनिक आइसोटोपिक माप के लिए नए अनुप्रयोग विकसित करने के लिए उद्योग भागीदारों के साथ सहयोग करेंगे। नवाचार और उद्यमिता की संस्कृति को बढ़ावा देकर, बीएसआईपी वाणिज्यिक अवसर पैदा करेगा और क्षेत्रीय विकास में योगदान देगा।

अपने विकसवादी दृष्टिकोण के माध्यम से, डॉ. राजेश अग्निहोत्री ने वैश्विक मान्यता, वैज्ञानिक उत्कृष्टता और सतत विकास के उत्प्रेरक के रूप में बीएसआईपी में आगामी एएमएस सुविधा की कल्पना की। अपनी उन्नत क्षमताओं और विशेषज्ञता का उपयोग करके, संस्थान ज्ञान की नई सीमाओं को खोलेगा, नवाचार को आगे बढ़ाएगा और बड़े पैमाने पर समाज और वैज्ञानिक समुदाय पर सार्थक प्रभाव डालेगा।

संजय कुमार सिंह गहलौद, विज्ञानी 'बी'

एवं

आनंद राजोरिया, शोध छात्र

रेडियोक्रोनोलॉजी और आइसोटोपिक लक्षण वर्णन प्रयोगशाला

बीरबल साहनी पुराविज्ञान संस्थान, लखनऊ

प्रो. बीरबल साहनी

बीरबल साहनी पुराविज्ञान संस्थान

1946

बीरबल साहनी पुराविज्ञान संस्थान, लखनऊ

विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी विभाग के अंतर्गत एक स्वायत्त संस्थान, भारत सरकार, नई दिल्ली